5
अनमोल सीरीज
तांत्रिक बहल
तंत्रोक्त
भैरव साधना
(भैरव साधना और सिद्धि)
भैरव की साधना और सिद्धि का शास्त्रोक्त विधि-विधान, अष्टोतर शतनाम स्तोत्र, कवच, हृद्रय, सहस्त्रनाम स्तोत्र, भैरव चालीसा आरतियां आदि।

तंत्रोक्त भैरव साधना

(भैरव-साधना और सिद्धि)

भैरव की साधना और सिद्धि का शास्त्रोक्त विधि-विधान, अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र, बटुक भैरव के मन्त्र, बटुक भैरव तन्त्र साधना स्तोत्र, कवच, हृदय, सहस्त्रनाम स्तोत्र, स्वर्णाकर्षण भैरव साधना, भैरव चालीसा, आरतियाँ आदि।

प्रस्तुति :

तांत्रिक बहल

❑ बाजार में आजकल अनेक पुस्तकें मंत्र-तंत्र-यंत्र के विषय पर आपने देखी होंगी और पढ़ी भी होंगी, लेकिन वह पुनः प्रकाशन अथवा अनेक बातों का संग्रह या फिर भानुमती का पिटारा ही अनुभव होती हैं।

❑❑ मेरी यह पुस्तक "तंत्रोक्त भैरव साधना" ऐसे उग्र देवता की है, जिनकी साधना से ऐसे संकटों से मुक्ति प्राप्त होती, जो अकारण या शत्रुओं द्वारा समय-समय पर उत्पन्न किय जाते हैं।

❑❑❑ इस पुस्तक में मैंने कुछ अनुभूत प्रयोग और सरल साधनाएं बतलाने का प्रयत्न किया है। छिपाने अथवा बात को घुमा-फिराकर कहने की मेरी आदत नहीं है। वही मैंने इस पुस्तक में किया है। अब यह आपका भाग्य अथवा प्रयत्न है कि आप साधनाओं से कितना लाभ उठा पाते हैं।

"तंत्रोक्त भैरव साधना" आश्चर्यजनक साधनाओं का गुलदस्ता है। आप इसे एक बार पढ़ें तो सही.......!

प्रकाशक

मारुति प्रकाशन

33, हरी नगर, मेरठ-250 002

तंत्रोक्त भैरव साधना

प्रस्तुति :

तांत्रिक बहल

ॐ श्री गणेशाय नमः

विघ्नेश्वर श्री गणपतये नमः

गणेश जी का आवाहन

अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः।।
ॐ श्री गणेशाय नमः।
आवाहयामि सथापयामि ध्यायामि।
गंधाक्षत पत्रपुष्पाणि समर्पयामि।।

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्।
भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुः कामार्थसिद्धये ।।१।।

प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्।
तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम् ।।२।।

लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च।
सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टमम् ।।३।।

नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्।
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम् ।।४।।

द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं प्रभो ।।५।।

विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्।
पुत्रार्थी लभते पुत्रान्मोक्षार्थी लभते गतिम् ।।६।।

जपेद्गणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मासैः फलं लभेत्।
संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः ।।७।।

अष्टभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यः समर्पयेत्।
तस्य विद्या भवेत्सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ।।८।।

भूमिका

मैं जब इस पुस्तक को आरम्भ कर रहा हूं तो मुझे सबसे पहले एक विद्वान् साधक के यह शब्द याद आ जाते हैं। सफल होने के लिये सकारात्मक चिन्तन के साथ-साथ आपको अपनी इच्छाशक्ति एवं सतत् साधना एवं कार्यशीलता का प्रयोग करते रहना चाहिये। प्रत्येक वस्तु का सृजन मन के द्वारा होता है अतः आप इसे केवल शुभ सृजन और साधना के लिये ही निर्देशित करें। जब चेतना परमात्मा पर एकाग्र रहेगी आपको भय नहीं सताएगा तब साहस और विश्वास द्वारा प्रत्येक बाधा पर विजय प्राप्त की जा सकेगी। "चाह" एक शक्तिहीन कामना है परन्तु इच्छा (संकल्प) का अर्थ होता है आप में प्राणशक्ति तभी उन्मुक्त होती है जब आप इच्छाशक्ति का प्रयोग करते हैं, न कि जब आप किसी लक्ष्य को प्राप्त करने की मात्र निष्क्रिय चाह रखते हैं।

साधना-मार्ग में सिद्धि की अगवानी व जाने वाले की विदाई हमारी सनातन परम्परा है। लेकिन भाग्य के भरोसे ही सब-कुछ नहीं छोड़ा जा सकता। हमें सक्रिय होना होगा संकल्प लेना होगा, मात्र विचारों से वातावरण तो बनाया जा सकता है सफलता के लिये संकल्प का महत्व है। साधना-मार्ग ही विजय देता है। स्वयं व समाज के मंगल के लिये यह परम आवश्यक है।

सफल तांत्रिक बनने के लिए तंत्र का जानना आवश्यक नहीं, क्योंकि तंत्र-मंत्र साधना तो ईश्वरीय प्रेरणा अतःकरण की प्रज्ञा एवं इन्द्रिय शक्तियों के द्वारा की जाती है परन्तु तुंत्र शास्त्र के भरपूर अध्ययन के बिना कोई भी व्यक्ति सफल तांत्रिकं नहीं बन सकता। यही अंतर होता है तांत्रिक और साधक में।

महाकवि संत तुलसीदास जी ने अपने पवित्र ग्रंथ "राम-चरित्र मानस" में कलियुग के विषय में अपनी भविष्यवाणियां गरुड़ को बतलाते हुए इस प्रकार से की हैं—

- जो लोग झूठ बोलेंगे, बढ़-चढ़कर बातें करेंगे, झूठ अधिक बोलेंगे, सच्च कम। उन्हें ही लोग विद्वान् मानेंगे।
- जो लोग विचित्र वेश पहनेंगे और मर्यादा को छोड़कर भक्षय और अभक्षय खाकर विपरीत आचरण करेंगे, लोग उन्हें ही योगी कहेंगे। और तुझसे क्या कहूं, जो वेदों और पुराणों को नहीं मानेंगे वही कलियुग में हरि-भक्त और सच्चे साधु कहलायेंगे। तपस्वी धनवान होंगे और गृहस्थी दरिद्र।
- जो लोग बेईमानी करेंगे, झूठ को ही धर्म मान लेंगे, पाप की कमाई से आनन्द लेंगे, वही ज्ञानी कहलायेंगे।

- जो चतुर, बात-बात पर झूठ बोलेगा, कभी लोगों को धर्म का मार्ग नहीं दिखाएगा और उपहास करके लोगों को बेवकूफ बनाएगा, कलियुग में वही ज्ञानी कहलायेगा।
- जो लोग पथभ्रष्ट होंगे और वेद शिक्षा को भूलकर पाप की ओर चल रहे होंगे और भगवान के नाम पर लोगों को धोखा देंगे, लोग उन्हें ही ज्ञानी समझेंगे।
- जो मन, वचन और कर्म से झूठ बोलेंगे वही कलियुग में कुशल वक्ता माने जायेंगे।
- सुहागिन नारियां आभूषण के बिना नजर आएंगी और पतित एवं विधवा औरतें नये-नये शृंगार करेंगी। नये-नये वस्त्र पहनेंगी। नग्नता प्रधान होगी। आज आप तनिक देखें, क्या यह सब नहीं हो रहा? समाचार-पत्रों में प्रकाशित होने वाले बड़े-बड़े आश्वासनों वाले विज्ञापन, अनेक प्रकार की गारण्टियां क्या भोले-भाले लोगों को सम्मोहित नहीं करतीं? दीवारों पर लिखे बड़े-बड़े विज्ञापन क्या भ्रमित नहीं करते हैं? मैं तो कहता हूं अगर वह सफल सिद्ध तांत्रिक हैं तो उन्हें रुपये-पैसे की क्या आवश्यकता है? अगर धन लेना ही है तो केवल आवश्यकतानुसार वह भी कम से कम लें।

यह ठीक है व्यस्तता से भरे जीवन में अगर बार-बार कार्यों में व्यवधान, विघ्न अथवा रोड़े आ जाते हैं तो निश्चित रूप से जीवन कष्टमय लगने लगता है। ग्रहों के प्रभाव इतने प्रबल हो जाते हैं कि भरपूर प्रयासों के बाद भी कार्यसफलता में सन्देह होने लगता है और कई बार तो कार्य बन ही नहीं पाता। कार्य-व्यापार, सर्विस, अध्ययन, प्रतियोगी परीक्षा, टेन्डर, मुकदमा, विवाह, भवन-निर्माण इत्यादि क्षेत्रों में उत्पन्न व्यवधानों के निराकरण तंत्र-मंत्र शक्ति से सुगम हो जाते हैं। यह ठीक है, पर तंत्र का प्रयोग करने वाला, विद्वान् और लोभ से विहीन होना चाहिये।

समय के सत्य को जानने वाले हमारे द्रष्टा तांत्रिक ने सत्य को इसी तरह सहज व सामान्य रूप से जन तक पहुंचाया है यह पंक्तियां एक सूत्र है "बाढ़े पुत्र पिता के धर्मा" पिता के पुण्य की वृद्धि होती है यह एक प्रामाणिक सत्य है। पिता समर्थ होता है इसीलिये परमात्मा को परमपिता कहा गया है और जो पिता से परिचय करायें उसे मां कहते हैं, जो परम पिता से परिचय कराये उसे जगतमाता कहते हैं। "मां और पिता के सहयोग व सहमति का परिणाम ही हम हैं। गुरु को भी मां का दर्जा दिया गया है, गुरु अपने शिष्य के लिये स्वयं को मिटा देता है, वह उसको भरने के लिये स्वयं को खाली कर देता है। सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् का

यह सहज-स्वरूप एक कड़ी के रूप में शिष्य को परमात्मा की दिव्य सत्ता से, को जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह प्रत्यक्ष में असमर्थ नजर आता है पर इतना समर्थ होता है कि विधाता के लिखे हुए भाग्य के विपरीत तथ्यों पर लकीर फेर देता है व तभी कभी मेले-मौज में यह कहा था विधाता भाग्य लिखता है साधक केवल सौभाग्य लिखता है "गुरु की वन्दना में गुरु की सामर्थ्य को सर्वोच्च माना गया है—कहा गया है कि गुरु ब्रह्मा, विष्णु, महेश की सर्वोच्च सत्ता का संयुक्त रूप है" वह साक्षात् परमेश्वर है।

गुरु की सामर्थ्य के अनेक उदाहरण हैं। समर्थ रामदास की सामर्थ्य का नाम शिवाजी व गुरु चाणक्य के संकल्प का नाम ही चंद्रगुप्त है।

मेरी यह कृति भगवान भैरव को समर्पित है। मैंने इस पुस्तक में भगवान भैरव की अति गोपनीय तंत्रोक्त साधना का लेखन किया है।

भगवान भैरव जिनके अनेक नाम हैं जैसे बटुक भैरव, प्रेतराज, भूतनाथ, क्षेत्रपाल आदि हैं, वास्तव में भगवान शंकर के पांचवें अवतार हैं। ग्रन्थों में ऐसी कथा आती है कि भैरव के जन्म लेते ही ब्रह्मा ने उन्हें यह वर दिया था कि आज से काशी निवासियों का लेखा-जोखा चित्रगुप्त नहीं रखेंगे। काशीवासियों को दण्ड देने का अधिकार उनको ही होगा। इसीलिये भैरव को काशी के कोतवाल कहा जाता है।

भैरव साधना काफी दुरूह है। विद्वानों ने कहा है—साधक में अनेक क्षमतायें हैं, तंत्र साधना द्वारा वह अनेक असाध्य कर लेता है, फिर भी उसकी सीमायें हैं, वह सब-कुछ नहीं कर सकता। अपनी योग्यता और साधना का निरन्तर सदुपयोग करते हुए भी साधक को अपनी सीमाओं का ध्यान रखना चाहिए। साधना के मार्ग से जीवन की जड़ता और आलस्य का विनाश होता है। किन्तु केवल साधना को ही सबकुछ मान लेने की वृत्ति हमें अहंकारी बना देती है जबकि अपनी असमर्थता का ज्ञान हमें अहंकारी होने से रोकता है।

"जीवन जीने के लिये है" चाहे दुःख से जिएं अथवा सुख से। किन्तु साधना से उसका निवारण संभव हो, तो कौन ऐसा होगा जो उससे मुक्त होना नहीं चाहेगा? दुःख से छुटकारा पाने के लिए ही प्राणी प्रयत्नशील रहता है, उन प्रयत्नों में त्रिविधि उपाय शास्त्रों में उपलंब्ध होते हैं। आधिभौतिक, आधिवैदिक ऐर आध्यात्मिक—इन तीनों प्रकारों को दुःख से मुक्त होने के लिए प्रकृति और पुरुष का ज्ञान आवश्यक बतलाया है। साधना-मार्ग में आधिदैविक उपाय दुःख-मुक्ति का सबसे सरल साधन है। यही उपाय आज अत्यन्त उत्तम है।

प्रारब्ध कर्म के अनुसार जो सुख-दुःख हमें मिलते हैं, उन्हें समदर्शी होकर

देखना है और साधना पर विश्वास रखना है। तब भी ईश्वर हमारी कुछ कठिन परीक्षायें लेता है। परीक्षाओं में भी हम विचलित ने हों तो ईश्वर हमारे मन में आ बैठता है। इसके बाद हमें कोई दुःख नहीं होता, कष्ट नहीं होता, मरण नहीं होता, सभी प्रकार की शंकायें, चिन्तायें, दुःख आदि स्वयं दूर हो जाते हैं।

प्रिय पाठकों! मेरी दृष्टि में धन कमाना या जुटाना बुरा व पाप नहीं है। हमारे शास्त्रों ने यह कभी नहीं कहा कि धन नहीं कमाना चाहिये। अगर यह पाप होता तो हमारे शास्त्र, हमारे ग्रंथ, हमारे ऋषि-मुनि कभी भी आशीर्वाद नहीं देते "ऐश्वर्य अस्तु"। इसलिये सोने की नगरी बनाइये लेकिन यह नगरी द्वारिका हो, लंका न बने। इस बात का ध्यान रखें कि द्वारिका में कृष्ण का वास है, तो लंका में रावण का। द्वारिका की नीयति अमर है और लंका का अंत जलना है।

तंत्र विज्ञान हमारी महानतम सम्पत्ति है। उसे समाज का मेरुदण्ड कहा जा सकता है। मनुष्य के भौतिक एवं आध्यात्मिक चिरस्थायी उत्कर्ष का एकमात्र आधार यही है। मनुष्य जाति की अगणित समस्याओं को हल करने और सुख- शांतिपूर्वक जीने के लिये तंत्र ही एकमात्र उपाय है। इस जीवन तत्व की उपेक्षा करने से पतन और विनाश का ही मार्ग प्रशस्त होता है। दुःख और दारिद्रय, शोक और संताप इसी उपेक्षा के कारण उत्पन्न होते हैं। मनुष्य के भविष्य को अंधकारमय बनाने वाला निमित्त तंत्र की उपेक्षा से बढ़कर और कोई नहीं हो सकता।

तंत्र-मार्ग की साधना की विभिन्न धाराओं में स्थूल रूप से मंत्र का आश्रय लिया जाता है। शब्दजननी वाणी की कृपा से ही जाप की शक्ति सुलभ होती है। शब्द ध्वनि सच्चिदानन्द-स्वरूप होती है। उसका सत्रूप आत्मा में व्याप्त होकर चेतना के रूप में प्रकट होता है। यही प्रकटीकरण क्रिया 'सिद्धि' कहलाती है।

श्री भैरव ऐसे देवता हैं-जो थोड़ी साधना से प्रसन्न होकर साधक को विपत्ति से मुक्ति दिला देते हैं। इसी पुस्तक में मैंने तंत्रोक्त भैरव साधना का विधि-विधान बताया है जिसके द्वारा अनेकों व्यक्ति गम्भीर संकटों से मुक्ति पा चुके हैं। भूत-प्रेतों के उत्पात से रक्षा के लिये तो भैरव साधना से सरल कोई उपाय ही नहीं है।

श्री भैरव के एक अन्य रूप "स्वर्णाकर्षण भैरव" की जानकारी कम ही साधकों को ही है। इस रूप में इनकी साधना करने से साधक की दरिद्रता नष्ट होकर घर धन-धान्य से भर जाता है।

भैरव को आपदुद्धारक भी कहा जाता है। किसी शत्रु के पीछे पड़ जाने, झगड़े-मुकदमे में फंस जाने या नौकरी से निलम्बन-स्थानान्तरण आदि के अवसर उपस्थित हो जाने पर भैरव की साधना करने पर उनकी कृपा होती है और काम बन जाता है। भूत-प्रेत बाधा हटाने के लिये तो भैरव साधना से अच्छा और कोई उपाय ही नहीं है।

श्री भैरव के साधकों की बहुत दिनों से यह मांग रही है कि कोई ऐसी पुस्तक प्राप्त हो, जो साधना के सभी अंगों को सरलता से समझाते हुए पूर्ण करें।

मैंने इस पुस्तक को सर्वांगपूर्ण बनाने के लिये बहुत-से दुर्लभ विषय जोड़े हैं तथा साधकों की सुविधा के लिये चित्रों का समावेश करते हुए सारभूत सामग्री प्रकाशित की है।

प्रिय पाठकों! यह दुनिया की कड़वाहट दिल तक पहुंचाने की आवश्यकता नहीं है। दिल तक ले जाओगे तो जीना मुश्किल हो जायेगा। दिल से मत लगा लेना दुनिया की बातों को। दुनिया में अगर कोई आपके लिए कड़वा बोले तो वह आपके लिए सच नहीं बोल रहा है; क्रोध में आकर वह झूठ बोल रहा है। लालच में बोलने वाला इंसान तो आप में गुण न हों, तो भी आपकी झूठी तारीफ करता जाएगा। मोह में बोलने वाला इंसान भी सच नहीं कहता है, ईर्ष्या में बोलने वाला इंसान भी कोई-कोई ही आपके सच को समझता है। पर कोई आपके सच को समझे न समझे इष्ट तो सच समझता है और आपकी आत्मा सच जानती है। दुनिया की कड़वाहट जो पी जाता है वही शंकर कहलाता है। वही श्री भैरव को प्रिय है। और जो इन्सान मुस्कुराये वही महान् है।

अनेक बार आप यह भी अनुभव करोगे, साधना में असफलता मिल गयी है। व्यवधान एक-के-बाद एक आ रहे हैं। मेरी यह बात सदैव स्मरण रखो। आपने अवश्य कुछ ऐसा किया है या कर रहे हैं, जिसके कारण आप दुःखी हैं। परमात्मा भूल नहीं करता, प्रकृति गलती नहीं करती। तुम अपने जीवन को देखो, तुमने जो कुछ दिया है, वह मिल रहा है। तुमने जो कुछ बोया है, वही काट रहे हो। तुम भूल जाते हो देते समय, तुम भूल जाते हो बोते समय। तुम सोचते हो बीज तो हमने बोये थे अमृत के और फल मिल रहे हैं विष के। किया था तो हमने भला और मिल रहा है बुरा। दिये थे आशीर्वाद और मिल रही हैं गालियां। दिया था प्यार और मिल रही है नफरत। नहीं, यह संभव नहीं है। यहां इंच-इंच का हिसाब है, रत्ती-रत्ती का हिसाब है। तुमने जो किया है, वही मिल रहा है। जीवन में बेहिसाब कुछ है ही नहीं। मैं एक तांत्रिक हूं। साधना-मार्ग में असफल होने के बाद आप भूल जाते हैं, चिकित्सा विज्ञान पढ़ने के लिये किसी डॉक्टर की पुस्तक चाहिये, भवन-निर्माण सीखने के लिये एक आर्किटेक्ट की पुस्तक पढ़नी होगी, तब आप तंत्र विज्ञान को जानने के लिये क्यों नहीं 'तांत्रिक' की पुस्तक पढ़ते?

मैंने इन शब्दों में ही आपके लिये इतना कुछ कह दिया है कि अब मुझे इस पुस्तक के विषय में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता ही नहीं। हां, मैं अपने पाठकों से यह कह देना चाहता हूं कि जो लोग तंत्र विज्ञान के विषय में कुछ

ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं उनके लिये यह पुस्तक एक पूज्य ग्रन्थ से कम नहीं। इस पुस्तक में मैंने अनेक साधनाओं का एक ही पुस्तक में संग्रह कर दिया है। इसे तंत्र की भाषा में भेदीय तंत्र ज्ञान कहा जाता है।

मेरा यह नम्र निवेदन है अधार्मिक, अनास्था वाले कुतर्की और अज्ञानी तंत्र विज्ञान से दूर ही रहें।

मैं आपका अपना हूं। मेरा कार्य तंत्र विज्ञान को प्रस्तुत करना है। अतः अपने प्यार और सहयोग से मुझे सींचिये ताकि भविष्य में सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुतिकरण करने का प्रयास कर सकूं। मेरी समस्त पुस्तकों को आप स्वयं पढ़ें और अन्य लोगों को पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पुस्तकालयों में दान करें और गोष्ठियों में लोगों को पढ़वायें।

धन्यवाद।

आपका अपना
तांत्रिक बहल
"तंत्र सबके लिये मिशन"
डी-४, राधापुरी, कृष्ण नगर,
दिल्ली-११००५१.

विषय-सूची

क्र.सं.	विषय-सामग्री	पृ.सं.
१.	भूमिका	०७
२.	अध्याय-१—तंत्र-मंत्र में साधना	१७
३.	अध्याय-२—श्री भैरवनाथ का अवतरण	२५
	प्रवण अनेक रूप में	२८
४.	अध्याय-३—श्री भैरव-साधना कैसे करें?	३५
	कुलाकुल चक्र	४६
५.	अध्याय-४—भैरव-साधना के चरण	४९
६.	अध्याय-५—आराधना-साधना के मंत्र	६१
	सात्त्विक ध्यान	६४
	राजस ध्यान, तामस ध्यान	६५
७.	अध्याय-६—तंत्र, भैरव और भैरवी	६७
	सात्त्विकं ध्यानम्, राजसं ध्यानम्, तामस ध्यानम्	७९
	श्री बटुक भैरव का प्रसिद्ध मंत्र, कालसंकर्षण तंत्र में,	
	अरिष्टनिवारण मंत्र, शान्ति-प्राप्ति के लिये	८०
	रक्षा-प्राप्ति के लिये मंत्र, सर्वविध बाधा-निवारण के लिये मंत्र,	
	सिद्धिप्रभ भैरव मंत्र, श्री बटुक-माला मंत्र, मूलमंत्र, भैरवमंत्र	८१
८.	अध्याय-७—विविध हवन सामग्री प्रयोग	८२
	वन्ध्या पुत्रप्रद प्रयोग, मोहन प्रयोग	८२
	मारण प्रयोग, आर्ध्वय प्रयोग, वशीकरण प्रयोग, उच्चाटन प्रयोग	८३
९.	अध्याय-८—भैरव यंत्र साधना	९२
१०.	अध्याय-९—श्री गुरु-स्मरणम्	९६
	श्री शङ्कराचार्य श्रीबटुक-प्रातः स्मरणम्	९६
	अष्टभैरव मङ्गलम्, रुद्रयामल के अनुसार चौंसठ भैरव	९७

क्र.सं.	विषय-सामग्री	पृ.सं.
११.	**अध्याय-१०—द्वाविंशति नामावली व दसनाम स्तोत्र**	९८
	नमस्कार सहित द्वाविंशति नामावली, भयनाशक दसनाम स्तोत्र	९८
१२.	**अध्याय-११—भैरव के चालिसे**	९९
	श्री भैरव चालीसा	९९
	श्री बटुक भैरव चालीसा	१०२
१३.	**अध्याय-१२—भैरव के एक सौ आठ नाम**	१०६
	अष्टोत्तरशतनाम स्तोत्र	१०६
१४.	**अध्याय-१३—श्री भैरव सहस्त्रनाम**	११०
१५.	**अध्याय-१४—श्री बटुक भैरव सहस्त्रनाम स्तोत्र**	१२६
	सहस्त्रनामानि	१२६
१६.	**अध्याय-१५—अष्टक, कवच एवं स्तोत्र**	१३७
	श्री काल भैरव अष्टक	१३७
	भैरव कवच	१३८
	अथ क्षेत्रपाल भैरवाष्टकस्तोत्रम्	१३९
	श्री बटुक भैरव ब्रह्मकवचम्	१४०
	श्री बटुक-हृदयम्, पार्वती उवाच, शङ्कर उवाच	१४१
१७.	**अध्याय-१६—स्तुतियां और आरतियां**	१४४
	भैरवदेव की स्तुति	१४४
	श्री बटुक भैरव जी की स्तुति	१४५
	श्री बटुक भैरव की आरती	१४६
	श्री भैरव देव की मधुर आरती	१४७
	श्री भैरव जी की आरती	१४८
	प्रेतराज चालीसा	१४९
	आरती श्री भैरवनाथ की	१५०
	आरती-प्रेतराज सरकार की, आरती बटुक भैरव की	१५१
	श्री बटुक भैरव-रहस्यम्	१५२

क्र.सं.	विषय-सामग्री	पृ.सं.
	श्री बटुक भैरव-सहस्रनामस्तोत्रम्, भैरव-तन्त्रोक्तं श्री बटुक भैरव-कवचम्	१५३
	श्री बटुक भैरव-ब्रह्म कवचराजः	१५४
१८.	**अध्याय-१७—अपराध क्षमापन स्तोत्रम्**	१५६
१९.	**अध्याय-१८—इसे भी पढ़ें!**	१५८
	सरस्वती यन्त्र	१६०
	वायु मन्त्र	१७१
२०.	**अध्याय-१९—अन्त में........!**	१८८

अध्याय-१

तंत्र-मंत्र में साधना

आज का हमारा जीवन निरन्तर संघर्षशील और अनेक प्रकार की बाधाओं से युक्त है, इस जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को पग-पग पर गहरा संघर्ष करना होता है, इतना होने के बावजूद भी व्यक्ति अपनी इच्छाओं को पूरा नहीं कर पाता। जब मनुष्य श्रम और शक्ति के द्वारा अपनी इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर सकता है, तो उसे ऐसी शक्तियों का सहयोग लेना पड़ता है जो स्वयं में शक्ति सम्पन्न और सिद्धिदायक हों। हमारे योग्य तांत्रिकों ने शास्त्रों में साधना द्वारा समस्त इच्छाओं की पूर्ति एवं सफलता-प्राप्ति का निर्देश दिया है।

उनका स्पष्ट मत है कोई भी साधना क्लिष्ट या असम्भव नहीं होती है, कोई भी साधक साधना सफलतापूर्वक कर सकता है। साधक कोई भी हो सकता है सभी अपनी मनोकामनओं की पूर्ति हेतु साधना सम्पन्न कर सकते हैं और जीवन में नवीन उत्साह, उमंग और औज ला सकते हैं, जीवन में पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं तथा अपनी सभी कमियों को समाप्त कर समाज के अन्य लोगों की अपेक्षा श्रेष्ठ हो सकते हैं।

यह सत्य है सभी साधनाओं के सूत्रधार तो केवल गुरु ही होते हैं, सिद्धि तक किसी जीव को पहुंचाने का माध्यम गुरु ही है, क्योंकि गुरु ही प्रत्यक्ष है, जो दोनों तत्वों—साधना और सिद्धि मार्ग से परिचित है।
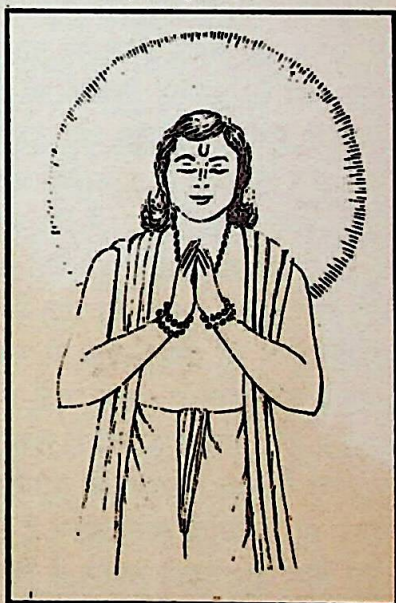
भगवान शिव की भांति भगवान भैरव का रूप भी अत्यंत शीघ्रता से प्रसन्न होने वाला बतलाया गया है। आवश्यकता है तो केवल इस बात की, कि साधक

को भैरव-साधना में आने वाले विशिष्ट चरणों का विशेष रूप से ज्ञान हो। और जिसका सफल माध्यम यह पुस्तक है।

भगवान शिव के रुद्रावतार, हनुमान जी और दुर्गा माता के सहचर तथा नाम मात्र की पूजा-अर्चना से ही होकर साधकों की सभी कामनाओं की पूर्ति कर देने वाले भगवान भैरव की साधना तांत्रिकों और अघोरियों द्वारा तो की ही जाती है, शिव-भक्तों के भी प्रिय आराध्य भैरवनाथ हैं। भैरव की साधना में आडम्बर और शारीरिक स्वच्छता का कोई विशेष महत्व तो है ही नहीं, प्रायः अघोरी और वाभाचारी तांत्रिक दूसरों को हानि पहुंचाने के उद्देश्य से तंत्र साधना करने वाले कापालिक भी भैरव-साधना करते हैं। परन्तु यह तो केवल एक पक्ष है, सद्गृहस्थ भी प्राचीनकाल से करते हैं भैरवदेव की साधना, क्योंकि भैरव कोई क्रूर देव नहीं, भोले शंकर और हनुमान से भी शीघ्र प्रसन्न होकर अपने साधकों की समस्त कामनायें पूर्ण करने वाले एक दयावान देव हैं। शास्त्रों में इन्हें शिवजी का अंश अवतार माना गया है।

श्री भैरव का रूप शिव के समान ही ओघड़ है यह गंगा, चन्द्रमा और नागों को धारण नहीं करते। भैरव का वाहन कुत्ता है और श्मशान को इनका निवास माना जाता है। भगवान भैरवदेव जी के चार हाथ हैं जिनमें यह खप्पर, ब्रह्माजी का कटा हुआ सिर, त्रिशूल और डमरू हैं।

इस कलियुग में न तो बड़े-बड़े यज्ञ संभव हैं और न ही अनेक वर्षों की कठोर साधना। यही कारण है कि आज हम दुर्गा, हनुमान और भैरव जैसे थोड़ी साधना से ही प्रसन्न होने वाले देवों की उपासना करने के लिये विवश हैं। जहां तक इन देवों की साधना का प्रश्न है दुर्गा और हनुमान की उपासना करते समय भी हमें भैरव की साधना साथ ही करनी ही होगी। भैरव की पूजा के अभाव में भगवती की आराधना अपूर्ण रहती है तो बाला जी के रूप में हनुमान जी की उपासना बगैर भैरवदेव के नहीं हो सकती। यही कारण है कि भैरव पर प्रचुर साहित्य उपलब्ध है, नाथ सम्प्रदाय के परमप्रिय उपास्य देव तो भैरवनाथ जी हैं ही तंत्र शास्त्र का भी प्रमुख आधारस्तम्भ है भैरव-साधना। यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि आज भैरव और उनकी साधना के विषय में अनेक भ्रान्त धारणायें जनसामान्य के मन-मस्तिष्क में अंकित हो चुकी हैं। इन भ्रान्तियों के वशीभूत होकर ही आज सामान्य साधक भैरव की साधना से विरत हो ही गये हैं, भैरव को एक विकराल देव भी मानने लगे हैं। परन्तु यह भूल है और जितनी शीघ्र इस धारणा का निवारण हो जाये उतना ही साधक समाज का भला है।

भैरव का रूप भी किसी तर्क का आधीन होकर भावना के आधीन आने

वाला विषय है। जैसाकि मैं पहले ही लिख चुका हूं साधक सामान्यतः भैरव नाम से किसी भीषण आकृति की कल्पना कर लेता है और अगर तत्सम्बन्धित साधना में प्रवृत्त होते भी हैं, तो एक भय के साथ। उनका ऐसा भाव रखना ही साधक के लिये सर्वाधिक न्यून हो जाता है।

वस्तुतः भैरव का अर्थ है, जो कालचक्र में पड़े हुए साधक को अपनी चैतन्यता से मुक्त कर उत्तम पथ की ओर अग्रसर कर दें और निश्चय ही ऐसे देव की साधना अत्यन्त उल्लास के साथ सम्पन्न की जानी चाहिये।

यूं इन पंक्तियों में भले ही कितना कुछ क्यों न लिख दिया जाये, कि भैरव की साधना से जीवन में क्या-क्या लाभ होते हैं, वह तब तक फलप्रद हो ही नहीं सकेगा जब तक साधक भैरव के प्रति श्रद्धाभाव को अपने मन में स्थान नहीं देगा, उनसे सम्बन्धित साधना विधि का प्रयोग में पूर्ण एकाग्रता और विधि-विधान से नहीं लायेगा।

प्रत्येक साधना का एक गुप्त सूत्र होता है जिसके अभाव में भले ही कितने ही लाख मंत्र जप क्यों न सम्पन्न कर लिये जायें, सफलता नहीं मिल पाती है। प्रत्येक साधना की अन्तर्भावना के साथ परिवर्तित होने वाला तत्व होता है अर्थात् यह आवश्यक नहीं, कि जो बात एक साधना के विषय में सत्य हो वही प्रत्येक साधना के लिये अंतिम रूप से सत्य हो तथा इसका निर्धारण किसी तर्क के आधीन न होकर भाव के ही आधीन होता है। और यह कार्य केवल गुरु ही कर सकता है। यह सिद्धान्त साधक द्वारा अवश्यमेव प्रयोग में लाने योग्य है। इस विधि की विशिष्टता है, कि जहां एक ओर से यह दुर्बलता, हीनता आदि की स्थितियों को समाप्त करने की साधना है वहीं दूसरी ओर से पूर्ण भी भौतिक समृद्धिदायक साधना भी है।

तंत्र-विद्या एवं तांत्रिक साधना के क्षेत्र में फैले पाखण्डियों के कारण एक गल्प शास्त्र मात्र समझा जाता है क्योंकि इस विद्या के प्रति जन-साधारण को उत्सुकता को देखकर कुछ जादूगरों को अपने हाथ की सफाई से स्वयं को तांत्रिक घोषित करने का अवसर मिल गया है। किन्तु बाजीगरों के इस समुदाय के आधार पर तंत्र-विद्या के प्रति यह धारणा बनाना भ्रामक है, वास्तव में तंत्र-विद्या की समस्त साधनाओं के मध्य एक वैज्ञानिक सिद्धान्त काम करता है, जिसे तत्व दर्शन कहते है। तंत्र-विद्या के प्रति उत्सुकता ने मुझे जब तक कई लोगों से सम्पर्क करने का अवसर दिया है, उनमें अनेक तो अपनी चमक-दमक और विज्ञापनबाजी को आधार बनाकर दुकानदारी चलाने का प्रयत्न कर रहे हैं किन्तु कुछ ऐसे हैं जो वास्तव में इस विद्या को आत्मिक शक्ति को विकसित करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

मैं यह स्वीकार करता हूं तंत्र-मंत्र, भूत-प्रेत को आज के वैज्ञानिक युग में

अंधविश्वास व पाखण्ड समझा जाता है। इसका मूल कारण है कि यह वैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुरूप खरा नहीं उतरता। किन्तु यह सत्य नहीं है, इसकी सत्यता को सिद्ध किया जा सकता है, लेकिन आज तक यह प्रयत्न किसी ने नहीं किया। तांत्रिकों की इसमें कोई दिलचस्पी नहीं रही और वैज्ञानिक इसे प्रारम्भ से ही कपोल-कल्पित मानकर अलग रहे। तांत्रिक वर्ग के अनुसार आत्मा नाम के इस तत्व के गुणों की कोई सीमा नहीं है। इसे वैदिक दर्शन स्वीकारता है जगत में जो पहले था आज है या कल होगा। वह सभी पदार्थ मूलरूप से इसी का परिवर्तित रूप हैं, इसलिये उसके सभी गुण इसी तत्व के गुण हैं यह स्वयं अपरिचित अलौकिक शक्तियों का स्वामी है। जीवधारियों में इस तत्व का जो एक अतिक्षुद्र बुलबुला रहता है वह उसे प्राणवान बनाये रखता है। पदार्थों में यह अपनी जड़ावस्था के परिवर्तित रूप में रहता है और प्राणियों में पूर्णतया अपने मूल रूप में नहीं रहता। मानव में यह सबसे अधिक विकसित रूप में होता है।

तांत्रिकों का विश्वास है कि इसे वैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुसार यह समस्त विश्व एक इकाई है उसी के भीतर हम भी हैं। हमारा इस विश्व में अलग कोई अस्तित्व नहीं है । केवल अज्ञानता के कारण ही हम अपने को अलग समझते हैं। अज्ञानता के ही कारण हम अपने भीतर बैठी आत्मा की शक्तियों को नहीं पहचानते और स्वयं को असहाय समझते हैं वे मंत्र-सिद्धि और साधनों के द्वारा अपनी आत्मा की शक्तियों को जगाकर उसे नियंत्रित करने और विकसित करने की प्रक्रिया करते हैं और उनका उद्देश्य यह रहता है कि आत्मा की जड़ता को समाप्त कर सकता, उसकी तरंगों को विश्व आत्मा के प्रवाह में मिला दें, जो यहां तक अभ्यास द्वारा पहुंच जाते हैं उनमें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की शक्ति समा जाती है और तब वे सांसारिक जड़ता के बंधन से एकदम मुक्त हो जाते हैं।

मानव का पृथ्वी पर आगमन प्रारब्ध के अनुसार होता है। यहां आकर जीव उन कर्मफलों को भोगता है जो पूर्वजन्मों के लिये हैं। अच्छे कर्मों के कारण जीव योगी, सिद्ध, संत, तांत्रिक आदि के रूप में जन्म लेकर सांसारिक जीवों को उच्च जीवनदर्शन का ज्ञान कराते हैं और बुरे कर्मों के कारण मनुष्य-योनि में आकर दुःख, शारीरिक यातनायें एवं दुष्कर्म करता है।

योग में आत्मा को आन्तरिक साधना के द्वारा एकाग्रचित्त करके केन्दीयभूत कर उसकी सूक्ष्म तरंगों को नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता है। तंत्र साधना में बाहरी रूप का प्रयोग किया जाता है, जिसमें मंत्रों का लयात्मक प्रभाव, तामसी उद्दीपन की सामग्री एवं बाहरी प्रतीकों का भरपूर प्रयोग किया जाता है, ताकि सिद्धि शीघ्र प्राप्त की जा सके। संसारी आचरण की शुद्धता आवश्यक समझते

हैं, तांत्रिक आचरण को बाहरी आडम्बर मानकर प्राकृतिक रूप से साधना करते हैं। वास्तव में योग एक साफ-सुथरी सड़क है और तंत्र एक ऊबड़-खाबड़ मल-मूत्र से भरी पगडण्डी, अर्थात् छोटा रास्ता। इसमें साधक के गिर जाने का भय सदैव बना रहता है।

मंत्र की तरंगों की पहचान और उसके उत्पन्न करने की प्रक्रिया की जानकारी ही मंत्र निर्माण में मूल होती है। सिर्फ शाब्दिक उच्चारण से साधना में सफलता नहीं होती, उसके लय का ज्ञान भी आवश्यक है। इस लय की सही जानकारी अर्थात् उच्चारण और मंत्र-पाठ की लय कोई योग्य साधक ही बता सकता है। इसलिये मैंने तंत्र साधना में गुरु का होना आवश्यक बताया है।

सामाजिक व्यवस्था से हटकर भी एक जीवन है। जिसे तांत्रिक का जीवन कहना साधक स्वयं को कमल के समान समझे क्योंकि माया-रूपी कीचड़ में उसका जन्म होता है, उसी में विलय। जलाशय में हम केवल कमल के सौन्दर्य को निहारते हैं न कि कीचड़ को।

अस्तु समाज को तांत्रिक के उद्देश्य को देखना चाहिये ना कि वह किस प्रकार सिद्धि को प्राप्त करता है।

संसार में आकर जीव परमात्मा के एवं अपने रूप को समझने का प्रयत्न करे। केवल मानव-योनि ऐसी है जिसमें जीवात्मा को मुक्ति मिल सकती है। निरन्तर साधना के पश्चात् एक समय ऐसा आता है जब साधक परमात्मा में आत्मसात कर लेने में सक्षम होता है। परमात्मा की प्राप्ति साधक का लक्ष्य होना चाहिये। प्रारब्ध के कर्मों को क्षीण करने एवं नवीन का निर्माण न करने के लिये यह मानव-योनि सर्वश्रेष्ठ है। क्योंकि इसमें ही परमात्मा से साक्षात्कार करने को अवसर प्राप्त होता है। साधक को इससे उत्तम अवसर दूसरा नहीं है। सृष्टि प्रगतिशील है यहां स्थिरता नहीं है जो स्थिर है वह मृत्यु है क्योंकि अगर जीवन है तो अवश्य ही चलेगा।

उच्च कर्म वाले मनुष्य जब संसार में जीवन धारण करके आते हैं तो वे साधना के मार्ग से संसार के जीवधारियों को अपने में समाहित करने का भरपूर प्रयत्न करते हैं। परन्तु कुछ ही जीवात्मायें इस साधना-रूपी अमृत का पान एवं रसास्वादन कर पाती हैं। अधिकतम आत्माओं के पूर्व कर्म क्षीण होने के कारण उस स्थान पर पहुंचने में नितान्त असमर्थ रहती हैं।

जब आदमी के अहंकार को क्षति पहुंचती है तब वह अपने सामाजिक सम्मान के लिये अपने जीव को शरीर से बाहर कर देता है, सोचिये क्या यही जीवन का मूल्यांकन है? अगर संसार हमें मिल गया है आम व्यक्ति को संसार प्राप्त है अपने संसार को देख लिया है, भोग लिया है। लेकिन फिर भी आपके भीतर भूख है, तृष्णा

है, मांग है हर कार्य को करने के पीछे एक चाह है। लेकिन उस कार्य की पूर्ति के साथ ही अनुभव हो जाता है कि यह वह लक्ष्य नहीं जिसकी हमें खोज थी। उस कार्य के प्रारम्भ में बहुत लगन होती है, आशा होती है कि इस कार्य को कर लेने से हमारी आवश्यकता पूरी हो जायेगी लेकिन ज्यों-ज्यों हम उस कार्य की पूर्णता की ओर बढ़ते हैं—रुचि अरुचि में बदलने लगती है, आशा निराशा में बदलने लगती है कि नहीं यह सब लक्ष्य नहीं जिसकी हमें इच्छा थी परन्तु इसे पूरा करना होगा क्योंकि लोगों में इससे मेरी पहचान है यही अहंकार है जो साधना हम कर रहे हैं उसके साथ अहंकार जुड़ जाता है और उस स्थिति में साधना हम नहीं करते हम करना भी नहीं चाहते छोड़ देना चाहते हैं, लेकिन हम नहीं छोड़ सकते क्योंकि हमारा अहंकार हमें अपने गुरुत्वाकर्षण में खींच लेता है और हम उस कार्य को आधे-अधूरे मन से करते चले जाते हैं जब तक कि वह कार्य पूर्ण नहीं हो जाता और वह कार्य पूरा हो जाता है तो हमें मुक्ति का अनुभव होता है कि चलो इससे छुटकारा मिला इससे स्पष्ट है कि हम जो खोज रहे हैं वह बाहर के जगत में नहीं है। बाहर इसकी झलक है। बाहर आनन्द है, सुख भी है, शांति है परन्तु एक झलक के रूप में।

यह सनातन सत्य है जब-जब संसार में धर्म की हानि होती है, तब कोई अदृश्य शक्ति किसी को धरती पर मुक्ति दिलाने के लिये भेज देती है। वह साधना मार्ग में लगकर संसार का कल्याण करता है।

यही सच्चे साधक-जीवन का लक्ष्य भी है कि प्राप्त संसार कें सभी तत्वों को सदुपयोग करते हुए संसार के साथ रहते हुए, चाहे ग्रहस्थ बनकर चाहे तांत्रिक बनकर कोई अन्तर नहीं पड़ता कि तांत्रिक महान् है और ग्रहस्थ निकृष्ट है, नहीं? हम सभी अपने-अपने रास्तों पर महान् हैं हम सभी अपने-अपने रास्ते के पथिक हैं और सभी रास्ते उस लक्ष्य तक जाते हैं। आप किसी रास्ते पर चलते हुए हीन भावना से ग्रसित न हो अगर आप हीन भावना का शिकार हो जायेंगे कि मैं तो ग्रहस्थ हूं तो ठीक नहीं है। आपका हीन भावना से ग्रसित मन आपको मार देगा। जो ग्रहस्थ है वह समझे कि यह भी एक रास्ता है। यह हमारी आवश्यकता है। संसार में जो विज्ञान खोजा गया है वह हमारी मांग है, हमारी आवश्यकता है। एक-दूसरे का उपयोग करना हमारी जरूरत है। इस बस का सदुपयोग करते हुए उसी यात्रा से अपने लक्ष्य तक पहुंचने का प्रयास करें आपको अपना सत्य मिल जायेगा। जो आपके अनुभव का सत्य होगा जो मेरा नहीं होगा। वह आपका होगा। परमात्मा आपको सुख दे, शांति दे, आनंद दे। सिद्धि दे।

अगर हम तांत्रिक विधियों को देखेंगी तो ये वैदिक संस्कृति के सर्वथा विपरीत दिखाई देंगी। वैदिक आचार नियमों की कठोरता, मन को नियंत्रित करने का प्रतिबंध,

आचरण की पवित्रता इत्यादि पर बल देता है। परन्तु तांत्रिक साधनाओं में मन के नियंत्रण को अस्वाभाविक प्रक्रिया माना जाता है। तांत्रिक सिद्धान्त के अनुसार अब विश्व का हर पदार्थ एक ही तत्व, एक ही परमात्मा का अंश है। तो पदार्थों एवं क्रियाओं को अच्छा-बुरा कहना अपने ही सिद्धान्त का खण्डन है।

तांत्रिक मानते हैं प्राकृतिक रूप से जो प्रक्रिया विश्व में चल रही है वही सबसे शुरू आचरण है बाकी सब बनावटी हैं जिसे मानव ने अपने ऊपर लपेट लिया है। परन्तु क्या वह सभ्य बन पाया है? मन से वह आज भी प्राकृतिक है। प्रकृति ने जो स्वाभाविक गुण उसमें दिये हैं वे सभी में सहायक हैं।

तांत्रिक का मानना है कि यह विश्व ही शक्ति और शिव के सम्भोग का परिणाम है। यह ब्रह्माण्ड जिसे हम जड़ जगत के रूप में जानते हैं, वास्तव में जड़ नहीं चैतन्य है केवल तांत्रिक ही नहीं, योगी भी यह मानते हैं कि प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सब-कुछ परमात्मा रूप है इसमें भिन्नता नहीं। अर्ध-नारीश्वर के प्रतीक में यही दर्शाया गया है कि यह विश्व और पुरुष दोनों एक ही परमात्मा के परिवर्तित रूप हैं।

अर्ध-नारीश्वर के विषय में साधरणतया यह व्याख्या की जाती है कि यह पुरुष और नारी के संयोग से पूर्णता का प्रतीक है। पुरुष नारी के दम्पत्ति प्रतीक के रूप में जानना भयंकर भूल है। इसका वास्तविक अर्थ निकालने के लिये शक्ति और पुरुष की व्याख्या को समझना होगा। सर्वप्रथम परमात्मा था। उसने स्वयं को ही एक अंश में परिवर्तित करके शक्ति का रूप बनाया अर्थात् परमात्मा ही धन और ऋण शक्ति में परिवर्तित हो गया। वास्तव में वह भिन्न नहीं है। तनिक देखें चन्द्रमा पृथ्वी का, पृथ्वी सूर्य का, सूर्य किसी और का चक्कर लगा रहा है और यह ब्रह्माण्ड तक चला गया है। पुरुष का नारी और नारी का पुरुष में चिकित्सकीय परिवर्तन भी इस तथ्य का प्रमाण है।

एक सिद्ध तांत्रिक कुछ भी कर सकता है। वह आत्म-तरंग को ब्रह्माण्ड से जोड़कर ब्रह्माण्ड चेतना की स्मृति और उसकी ज्ञानानुभूति से सम्पर्क कर भूत, वर्तमान एवं भविष्य को जान सकता है। एक साथ उसमें कई अलौकिक गुण आ जाते हैं। रोगोपचार से लेकर बाधाओं का निवारण तो साधारण साधक भी कर सकता है।

तंत्र साधना में जो पूजन सामग्री प्रयोग की जाती है, उसका महत्व उसके रूप, गुण इत्यादि पर निर्भर करता है। कुछ पदार्थों अग्नि को समर्पित होकर जो धुआं बनाता है, वह साधना में साधक के मन-मस्तिष्क को प्रभावित करता है।

इसकी जानकारी का उचित ज्ञान होना आवश्यक है और यह ज्ञान केवल योग्य गुरु ही बतला सकता है।

प्रिय पाठकों! मैंने तंत्र के विषय में काफी लिखा है, इसके पीछे मेरा एक मात्र उद्देश्य यही है कि आप सीधे साधना-क्षेत्र में ना उतरें, पहले तंत्र को समझ लें, स्वयं से परिचित हो लें, इसके पश्चात ही साधना मार्ग की ओर बढ़े।

अन्त में केवल इतना ही सम्पूर्ण इन्द्रियों को माया के बन्धनों से मुक्त करके अपने इष्ट की साधना करना ही भक्ति है। शाण्डिल्य सूत्र "परानुरक्तिरीश्वरे" को ही भक्ति अर्थात् साधना कहा गया है। यह साधना आनन्द से परिपूर्ण है। इष्ट में अनुराग ही साधना है। श्रीमद्भागवत के अनुसार साधक विविध शारीरिक, वाचिक और मानसिक क्रियाओं से चरितार्थ करता है।

अतः सब प्रकार के दुःखों से मुक्ति पाने के लिये "विषस्यौषधं विषम कण्टकस्य निवृन्तिः कण्टकेन" के अनुसार पालन कर साधक अपना जीवन सार्थक करें—

नामानि ते शतक्रतो। विश्वाभिर्गी भिरीमहे।

ॐ भैरवाए नमः।।

श्री भैरवनाथ का अवतरण

जब भी विश्व में धर्म की हानि होती है, धरती पर आसुरी प्रवृत्ति मानव को सताने लगते हैं और पापों के बोझ से पृथ्वी त्राहि-त्राहि करने लगती है, तब परमेश्वर स्वयं अवतरित होकर अत्याचारियों का विनाश कर धर्म की रक्षा करते हैं। परन्तु जहां तक भैरव के अवतरण का प्रश्न है शिव ने यह रूप राक्षसों से पृथ्वी की रक्षा के लिये नहीं, बल्कि अपनी शक्ति और ज्ञान के मद में मति-भ्रष्ट हो गये जगद्पिता ब्रह्माजी को पाठ पढ़ाने के लिये धारण किया। शंकर ब्रह्माजी के मतिभ्रम को दूर करने के लिये भैरवदेव के रूप में अवतरित हुए। उनके जन्म का यह कारण ईश्वर के सभी अवतारों में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने हेतु पर्याप्त है।

हमारे प्राचीन धर्म-ग्रंथ स्कन्द पुराण के अनुसार एक बार महर्षि अगस्त्य ने भगवान शिव के ज्येष्ठ पुत्र गणेश के बड़े भाई कार्तिकेय से विनती की कि

आप मुझे भैरवनाथ के जन्म की कथा कहिए। महर्षि अगस्त्य ने भगवान कार्तिकेय से प्रार्थना की है—हे भगवान! परम कृपालु भैरवनाथ की शक्तियों, कृपाणों के विषय में तो हम सभी थोड़ा-बहुत जानते हैं, परन्तु उनके अवतार-धारण के प्रयोजन के विषय में हमें कुछ ज्ञात नहीं। अतः भैरव के अवतार-धारण के विषय में हमें कुछ बतलाइये। इससे सम्पूर्ण लोक का कल्याण होगा, यह सोचकर कार्तिकेय ने महर्षि अगस्त्य को जो कथा सुनाई वह इस प्रकार है—

एक बार सुमेरू पर्वत पर ब्रह्मा के साथ बैठकर अनेक देवता धर्म-चर्चा में लीन थे। उसी समय पर कुछ ऋषि भी सुमेरू पर्वत पर पहुंचे। उन्होंने देवताओं को प्रणाम करने के बाद सभी देवताओं से एक प्रश्न पूछा। हे देवगणों! आप सभी महान् हैं परन्तु आप में सबसे बड़ा और सर्वशक्तिमान् कौन है कृपा करके बतलाइये। प्रश्न विवादास्पद था। अतः सभी देवताओं ने उत्तर के लिये ब्रह्माजी की ओर देखा। क्योंकि ब्रह्मा से अधिक सटीक उत्तर इस प्रश्न का और कोई दे भी कैसे सकता था।

अहंकार अंधा होता है और क्रोध बहरा। अहंकार से ग्रस्त व्यक्ति को अपने अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं पड़ता, ऐसा ही उस समय हुआ। शंकर की माया के वशीभूत होकर उस समय ब्रह्मा अहंकार की लपेट में आ गये। अपने पांच मुखों से निरन्तर वेदों को पढ़ने वाले ब्रह्मा की बुद्धि अहंकार के अंधेरे में डुबकर कलुषित हो गई थी। अहंकार में डूबे हुए ब्रह्मा ने कहा—हे ऋषियों! मैंने ही सृष्टि को उत्पन्न किया है, मैं सृष्टि का निर्माता हूं और निरन्तर जीवों का निर्माण करता रहता हूं। मुझे उत्पन्न करने वाला कोई नहीं, जबकि मैं सबको उत्पन्न करने वाला हूं, अतः मैं ही सबसे बड़ा हूं इसमें बिल्कुल सन्देह नहीं है।

त्रिलोक्य के पालनकर्त्ता, विष्णु के अंशरूप "ऋतुदेव" भी वहां उपस्थित थे। ब्रह्मा के गर्व से भरे हुए वचनों को सुनकर ऋतु देव को क्रोध आ गया और उन्होंने भी अपनी शक्ति के मद के वशीभूत होकर ब्रह्मा को कहा—हे ब्रह्मा! तुम अज्ञान के वशीभूत होकर स्वयं को श्रेष्ठ बतला रहे हो, तुम से बड़ा, अधिक शक्तिशाली और महान् तो मैं ही हूं। सम्पूर्ण जगत के पालनकर्त्ता और सृष्टि संचालक विष्णु की ज्योति मैं ही हूं। संसार का पालन-पोषण मेरे द्वारा ही होता है और मेरी प्रेरणा और इच्छा से ही तुम सृष्टि का निर्माण करते हो, अतः तुमसे श्रेष्ठ तो मैं हूं।

इसे क्या कहा जाये दोनों ही अज्ञानियों की भांति लड़ने लगे। यह विचार इतना बढ़ गया कि देवता भी उन्हें शांत न कर सके। देवताओं ने दोनों को समझाया कि आपस में यों उलझने से कोई लाभ नहीं। संसार के प्राचीनतम ग्रन्थ चारों वेद ईश्वर रचित हैं, अतः क्यों न चलकर वेदों से ही यह फैसला करा लिया जाये। वहां उपस्थित सभी वेदों के पास गये और वहां पहुंचकर ब्रह्माजी एवं ऋतुदेव दोनों

ने ही एक साथ कहा, हे श्रुतियों! आप प्रमाण हैं अतएव हमारे इस सन्देह का निवारण कीजिये कि कौन-सा देवता सबसे बड़ा और शक्तिशाली है। यह सुन ऋग्वेद ने कहा—जिससे सबका जन्म हुआ है और अन्त में सब-कुछ जिसमें ही समाहित हो जाता है, वे शिव ही हैं। उनके समकक्ष कोई भी नहीं। यजुर्वेद ने ऋग्वेद की बात का समर्थन करते हुए कहा—संसार के लोग योग और तपस्या द्वारा जिसकी प्राप्ति के लिये सतत् रूप से क्रियाशील रहते हैं, वे एकमात्र भगवान शिव ही हैं इसलिये शंकर ही सबसे बड़े हैं। सामवेद ने कहा है, उनसे बड़ा कोई नहीं। शिव ही सबसे महान् है उनसे बड़ा कोई नहीं। देवता तथा ऋषि-मुनि भी उनकी बातों से सहमत थे। वेदों का फैसला सुनकर भी ब्रह्मा का मोह भंग न हुआ। अहंकार में भरकर ब्रह्मा कहने लगे—मैं तुम्हारी बात से सहमत नहीं। शिव धूलि-धूसरित रहते हैं, सिर पर जटायें धारण करते हैं और नागों को ही आभूषण समझते हैं वे शिव कैसे सर्वश्रेष्ठ हो सकते हैं।

उसी समय प्रणव ने ब्रह्मा के निकट प्रकट होकर उन्हें शांत करने और समझाते हुए कहा—हे ब्रह्मा! शंकर सनातन ज्योति हैं। आनन्दरूपा शिवा उनकी अमिट शक्ति है अतः इसे पूर्ण सत्य मानो कि भगवान शिव से बड़ा कोई नहीं। पर ब्रह्मा तथा ऋतु को संतोष नहीं हुआ। ब्रह्मा तो क्रोध में भरकर अभी भी भगवान शिव के खिलाफ अनर्गल प्रलाप कर रहे थे। क्रोध के आवेग में ब्रह्मा को अच्छे बुरे, ऊंच-नीच, सत्य-झूठ का कुछ ज्ञान ही नहीं रह गया था।

इसी समय एक ज्योतिपुंज ब्रह्मा और ऋतु के मध्यवर्ती स्थान पर प्रकट हुआ। इस ज्योतिपुंज की आभा इतनी तीक्ष्ण थी कि वहां उपस्थित सभी को अपनी ज्योति में समेट लिया। कुछ समय के ही अनन्तर उस ज्योतिपुंज से एक सुन्दर बालक प्रकट हुआ। ब्रह्मा का पांचवां मुख जो अब तक शिव के विरोध में प्रलाप कर रहा था ज्योति से प्रकट हुए उस बालक से पूछने लगा—"हम दोनों के मध्य आकर उपस्थित होने वाला तू कौन है?" ब्रह्मा के इस प्रश्न का उत्तर देने के स्थान पर वह बालक जोर-जोर रोने लगा। अभी तक ब्रह्मा क्रोध में भरे हुए थे अपने जगद्-उत्पादक होने के गर्व का भूत उन पर सवार था, अतः उन्होंने सोचा कि सम्भवतः यह बालक मेरे पांचवें मुख से ही उत्पन्न हुआ है। ब्रह्मा ने उस बालक की ओर देखते हुए कहा—"हे बालक! तुम मेरे मस्तक से प्रकट हुए हो और प्रकट होते ही रूदन कर रहे हो, इसलिये मैं तुम्हारा नाम रुद्र रखता हूं। रोओ मत मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा।"

प्रणव अनेक रूप में
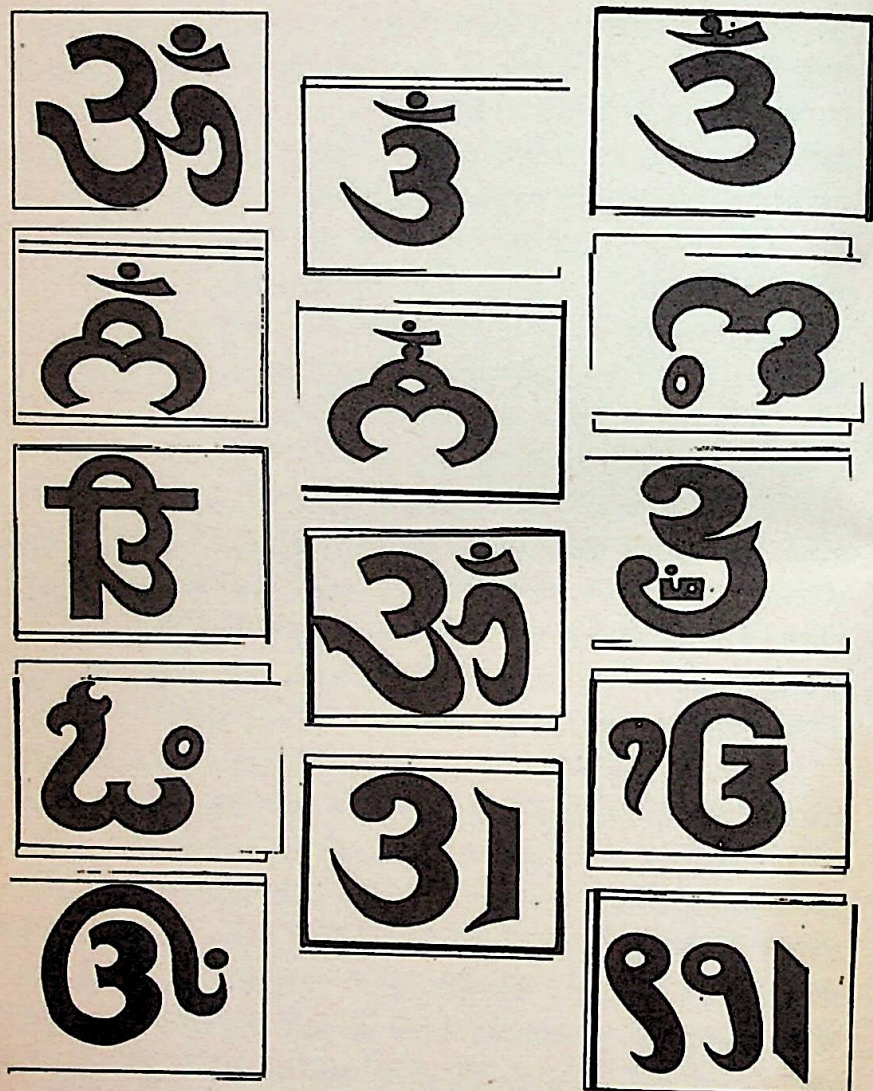
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका।
प्रणव अक्षर के मध्य यह तीनों एका।।

अभिमानी ब्रह्मा की यह बात सुनकर वह बालक एक तेजस्वी आकृति में परिवर्तित हो गया। अब ब्रह्मा जी ज्योति से उत्पन्न बालक से पूर्ण पुरुष बन चुके अलौकिक व्यक्ति से कहने लगे—"हे वत्स! तुम मेरे मस्तक से उत्पन्न होने के कारण सम्पूर्ण विश्व का भरण-पोषण करने में समर्थ होगे, इसलिये तुम्हारा एक नाम मैं भैरव भी रखता हूं। काल भी भयभीत रहा करेगा इसलिये मैं तुम्हारा एक नाम भैरव भी रखता हूं। हे वत्स! तुम दुष्टों का दमन करते रहोगे अतः संसार तुम्हें आमर्दक नाम से भी पुकारेगा। तुम अपने भक्तों के क्लेशों को थोड़ी साधना से सन्तुष्ट होकर समाप्त कर दोगे इसलिये तुम्हारा पांचवां नाम "पाप भक्षक" होगा। आज से तुम मुक्तिदायिनी काशीपुरी—भगवान शिव की नगरी काशी के अधिपति बनकर "कालराज" का पद प्राप्त करो। आज से काशीवासियों के पाप-पुण्यों का लेखा-जोखा चित्रगुप्त नहीं, तुम स्वयं रखोगे और उन्हें उनके कर्मों के अनुसार दण्ड और पुरस्कार प्रदान करोगे। तुम्हारा एक नाम 'काशी का कोतवाल' भी होगा।

ब्रह्मा अपने मस्तक से उत्पन्न समझकर उस शक्तिवान पुरुष को छह नाम और अनेकानेक वरदान देते रहे। भैरव को ब्रह्मा ने काशी का अधिपति बनाकर एक बार फिर शंकर का अपमान ही किया था। अतः भैरव पहले तो ब्रह्मा के द्वारा दिये वरदानों को ग्रहण करते रहे। परन्तु काशी के अधिपति का वरदान पाते ही भैरव देव ने ब्रह्मा जी पर हमला कर दिया और अपने तीक्ष्ण नाखून से ब्रह्मा जी का पांचवां मुख काटकर भूमि पर गिरा दिया। अपने नख से ब्रह्मा का पांचवां सिर विदीर्ण करने के बाद भैरव ने ब्रह्मा की ओर क्रुद्ध दृष्टि डालते हुए कहा—"हे ब्रह्मा! तुम्हारा यह पांचवां मुख ही अब तक अनर्गल प्रलाप कर रहा था। तुमने अपने इस मुख से ही भगवान शिव के विरोध में शब्दों का उच्चारण किया था अतः तुम्हारे शरीर के जिस अंग ने अपराध किया उसे ही मैंने काटकर दण्ड दे दिया है। अपना पांचवां मुखमण्डल कटते ही ब्रह्माजी को ज्ञान हो गया कि वे अभी तक भ्रम और अहंकार का शिकार थे। उन्होंने सच्चे हृदय से मान लिया कि भगवान शिव ही सबसे बड़े और परब्रह्म हैं।

ब्रह्मा का पांचवां मुख जिससे ब्रह्मा ने शिव के प्रति अशिष्ट शब्दों का उच्चारण किया था—भैरव द्वारा काटा जा चुका था और अब, ब्रह्मा और विष्णु भगवान सहित अनेक देवता वहां शिवजी की स्तुतियां कर रहे थे। वहां स्वयं प्रकट हुए और ब्रह्म को अभय प्रदान किया। देवताओं को अपने-अपने लोकों में जाने की आज्ञा दी, जिससे वे अपने-अपने कार्यों में लग जायें। भैरव का अभी कोई निवास-स्थान निर्धारित नहीं अतः वे वहीं शिव के निकट खड़े हुए थे। भैरव शिव का ही रौद्र रूप है और काल पर भी शासन करने की शक्ति से परिपूर्ण है। शिव का अवतार होने के कारण वे शिव के समान ही पूज्यनीय हैं। परन्तु भैरव ने अपने नाखून से ब्रह्मा का सिर तो काटा ही

था। मानव को शिक्षा देने हेतु शिव ने अपने ही अवतार भैरव को आदेश दिया—हे भैरव! तुमने ब्रह्मा के पांचवें सिर को क़ाटकर ब्रह्महत्या की है। यह पाप है, अतः इससे मुक्ति और तीनों लोकों में अपने कृत्य के प्रदर्शन के हेतु अपने एक हाथ में ब्रह्मा का कटा हुआ सिर और दूसरे हाथ में भिक्षा के लिये खप्पर लेकर त्रिलोक्य का भ्रमण करो। तुम चतुर्भुज—चार हाथ रखने वाले हो, अतः अपने दो हाथों में मेरा प्रिय वाद्य डमरू और मेरा प्रतीक शस्त्र त्रिशूल भी धारण करोगे। जिस स्थान पर तुम्हारे हाथ से ब्रह्मा का यह कटा हुआ सिर स्वयं छूटकर गिर जायेगा, उसी स्थान पर तुम ब्रह्महत्या के इस पाप से मुक्त हो जाओगे। जब तक तुम ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त नहीं होते तब तक ब्रह्महत्या नामक कन्या तुम्हारा निरन्तर पीछा करती रहेगी। श्री भैरव को उपरोक्त निर्देश देते समय ही शिव ने स्वयं के तेज से ब्रह्महत्या नामक कन्या उन्पन्न की। काले रंग की इस कन्या के सम्पूर्ण शरीर पर चमकीले लाल रंग के सिन्दूर की एक मोटी परत चढ़ी हुई थी और गहरे लाल रंग के ही वस्त्र धारण किये हुए थी। भयानक ब्रह्महत्या नामक वह कन्या अपनी जिह्वा को लपलपा-लपलपाकर रुधिर का पान कर रही थी और साथ ही गर्जना करती जा रही थी। भैरव के विपरीत इस कन्या के दो हाथ थे जिनमें से वह एक में लहू से भरा खप्पर और दूसरे हाथ में तीक्ष्ण दुधारी कटार पकड़े थी। जिस प्रकार शिव ने भैरव को ब्रह्महत्या के पातक से मुक्ति के लिये आदेश दिया था उसी प्रकार शिव ने ब्रह्महत्या नामक इस भयावह नारी से भी कहा। जब तक भैरव तीनों लोकों का भ्रमण करते रहें, तुम इनका निरन्तर पीछा करते रहना। तुममें सर्वत्र गमन की शक्ति है अतः इस भयावह रूप में तुम सतत् इनके पीछे लगी रहना, कहीं भी इन्हें स्थायी रूप से निवास न करने देना। परन्तु तुम मेरी नगरी काशी में प्रवेश नहीं कर सकतीं, अतः जब भैरव काशी जायें तुम नगर के बाहर ही रहना।

यह निर्देश देकर शिव अन्तर्ध्यान हो गये और भैरव अपने हाथों में त्रिशूल, डमरू, खप्पर और ब्रह्मा का कटा हुआ सिर लेकर तीनों लोकों के भ्रमण पर निकल पड़े। उनके पीछे-पीछे ब्रह्महत्या चल रही थी। इस प्रकार वे लम्बे समय तक विभिन्न नगरों, लोकों में विचरण करते रहे।

इस प्रकार भ्रमण करते हुए एक दिन भैरव शंकर की नगरी काशी में पहुंचे। अविमुक्ति क्षेत्र काशीपुरी में ब्रह्महत्या तो प्रवेश कर ही नहीं सकती थी, अतः बाहर ही रह गई और इस प्रकार शिव की माया से उत्पन्न उस नारी से भैरव का पीछा छूट गया। काशी में ही एक स्थान पर भैरव के हाथ से ब्रह्माजी का कटा हुआ सिर गिर पड़ा। जिस स्थान पर ब्रह्माजी का कटा हुआ मस्तक भैरव के हाथ से गिरा वह स्थान "कपाल मोचन" नाम से विख्यात है। अब भैरव ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो चुके थे, अतः ब्रह्माजी के दिये गये वरदान को पूर्ण करने के लिये भगवान

शिव ने भैरव को काशी का कोतवाल नियुक्त कर दिया। काशी निवासियों के पाप-पुण्यों का हिसाब रखने और उन्हें दण्ड देने का अधिकार केवल भैरव को है। उनका एक नाम "काशी का कोतवाल" भी है।

भगवान शंकर के अवतारों में भैरवावतार का अपना एक विशिष्ट महत्व है। इनकी कथा के साथ भगवान शिव की उत्कर्ष-कथा संलग्न है।

एक बार सुतत्व की जिज्ञासा से सभी सुमेरू पर्वत पर ब्रह्मा के पास गये और उनसे "अव्यय-तत्व" के बारे में पूछा। ब्रह्मा ने स्वयं को सर्वातिशायी परमतत्व रूप बतलाया। जब यह बात विष्णु को ज्ञात हुई तो उन्होंने ब्रह्मा को अज्ञानी कहकर अपने को ही प्रतिपादित किया। किन्तु जब वेदों से पूछा गया तो उन्होंने शिव को ही सर्वश्रेष्ठ बतलाया। इस पर भी ब्रह्मा और विष्णु ने मोहवश उनके कथन का खण्डन कर दिया। तब उसी समय वहां एक तेजःपुंज के बीच एक पुरुषाकृति दिखलाई पड़ी जिसे देखकर ब्रह्मा का पंचम सिर कुपित हो उठा। ब्रह्मा जब तक उस आकृति को देखते हैं तब तक महापुरुष नील-लोहित के रूप में दिखलाई दिया। उसे देखकर ब्रह्मा ने कहा—"चन्द्रशेखर! डरो नहीं। पूर्वकाल में तुम मेरे भालस्थान से उत्पन्न हुए हो। मैंने ही तुम्हारा 'रुद्र' नाम रखा था। तुम मेरे पुत्र हो। अतः मेरी शरण में आओ।" इस गर्वपूर्ण उक्ति से शिव को बहुत क्रोध आया और उन्होंने एक अत्यन्त भीषण पुरुष को उत्पन्न करके कहा—

"काल की भाँति शोभित होने के कारण आप साक्षात् 'कालराज' हैं। भीषण होने से 'भैरव' है। आप 'कालभैरव' हैं। दुष्टात्माओं का मर्दन करने से आप 'आमर्दक' कहलायेंगे। काशी के आप अधिपति होंगे।"

शिव के इन वरों को प्राप्त कर श्री भैरव ने अपनी वामांगुली के नखाग्र से ब्रह्मा के पंचम सिर को काट दिया। लोकमर्यादा-रक्षक शिव ने तदनन्तर भैरव को ब्रह्महत्या से मुक्त होने के लिये कापालिकव्रत धारण करके वाराणसी में निवास करने का आदेश दिया और वे वहीं कालभैरव के रूप में विराजमान हैं।

इस विश्व में जो शिव-भक्त होकर अगर कालभैरव की भक्ति नहीं करते हैं, तो वे अनेक प्रकार के दुःख को प्राप्त करते हैं।

भक्तों के हितकारक शिव के अनेक अवतार हो चुके हैं उनमें दस अवतार अति महत्पूर्ण हैं। ये अवतार इस प्रकार हैं—

महाकाल और महाकाली, तार तथा तारा, बाल भुवनेश एवं बाला भुवनेशी, षोडश श्रीविद्येश और षोडशी श्रीविद्या, भैरव तथा भैरवी गिरिजा, छिन्नमस्तक एवं छिन्नमस्ता, धूमवान् तथा धूमावती, बगलामुख और बगलामुखी, मातंग तथा मातंगी और कमल एवं कमला। यह दस अवतार सर्वकामप्रद हैं। ये तंत्र शास्त्र में दस विद्याओं के रूप में पूजित हैं।

कश्यप एवं सुरभि के पुत्र "एकादश-रुद्र" भी भैरव के रूप में पूजित हैं—उनके नाम हैं—कपाली, पिंगल, भीम, विरुपाक्ष, विलोहित शास्ता, आजपाद्, अहिबुध्न्य, शम्भु चण्ड तथा भव। ये रुद्र दैत्यों का संहार करते हुए ये ईशान कोण में विराजमान हैं।

एक वर्णन है कि—हिरण्याक्ष का पुत्र "अन्धक" दैत्यों का राजा बना। तब वह पार्वती के रूप पर मोहित होकर उनका अपहरण करने की इच्छा से अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। एक समय जब शिव ब्राह्मणों के हित के लिये भूमण्डल में भ्रमणार्थ चले गये तो उसने अवसर पाकर कैलास पर आक्रमण कर दिया। इधर भगवान विष्णु पार्वती की सहायता के लिये स्त्री-रूप धारण कर पार्वती की सखी के रूप में वहां रहने लगे। नन्दीश्वर और गणपति द्वारपाल के रूप में रक्षक नियुक्त थे। अन्धक को उस समय तो इन्होंने परास्त कर दिया किन्तु दूसरी बार पुनः आक्रमण किया, तब विष्णु ने शिव से कहा कि आप इस दुष्ट का संहार करें। आपके बिना यह अन्य किसी से नहीं मारा जायेगा, तब शिव ने भैरव का रूप धारण किया तथा भीषण युद्ध के पश्चात् उसका वध कर दिया। तभी से शिव अन्धकारि, अन्धकान्तक, अन्धकरिपु आदि नामों से विख्यात हुए।

भैरव की उत्पत्ति के विषय में यूं तो अनेकों कथायें प्रचलित हैं, जिनमें एक कथा यह है—एक समय की बात है कि "आपद" नामक राक्षस ने भगवान की कठोर तपस्या करके असाधारण बल-प्राप्ति का वर प्राप्त कर लिया। इस कारण वह अजेय बन गया। वर देते समय भगवान ने उससे भी पूछा था कि वह अपनी मृत्यु किस प्रकार चाहता है, तो उसने कहा कि उसकी इच्छा है कि उसकी मृत्यु पांच वर्ष की आयु के सुन्दर और तेजस्वी बालक के हाथों ही होनी चाहिये। उसे यह वर भी दे दिया गया था। अब इस राक्षस ने अत्याचार ढाने प्रारम्भ कर दिये और बढ़ते-बढ़ते उसके अत्याचार तीनों लोकों में फैल गये और सर्वत्र त्राहि-त्राहि की पुकार होने लगी। देवता लोग असहाय थे तथा उसके अत्याचार सहन कर रहे थे। इस संकट से मुक्ति पाने के लिये सब देवता एकत्रित होकर उसका वध करने की योजना बनाने लगे। यकायक उन सबकी देह से एक तेजयुक्त धारा निकली और प्रत्येक देवता के तेज से एक-एक पंचवर्षीय बटुक बन गया। इन असंख्य बटुकों को उत्पन्न करने के पश्चात् भी वह तेज धारा निर्माण-कार्य में लगी रही तथा इसने एक अतुलित बलशाली "पंचवर्षीय बटुक" का रूप धारण कर लिया। इस बटुक ने "आपद" नामक राक्षस का वध करके देवताओं को संकट से उबार लिया और तीनों लोकों की रक्षा की।

अब कथा चाहे जो कुछ भी हो वास्तविकता यह है कि भैरव शिव का ही एक रौद्र रूप है और इन्हीं का अवतार है। भगवान शिव धर्म की रक्षा करने के लिये विभिन्न रूपों में अवतार लेते हैं। ऐसा ही एक अवतार भैरव है। भैरव

के अनेक रूप हैं। रुद्रयामल तंत्र में ६४ भैरव उनके नामों के सहित बताये गये हैं और उनकी ६४ ही येगिनियां बताई गई हैं।

"स्कन्दपुराण" के अनुसार "शंकर संहिता" तथा "भैरव-खण्ड" का वर्णन करते हैं। "ब्रह्मवैवर्त-पुराण" "दुर्गोपाख्यान" में भी आठ भैरवों का विवरण है। इनमें महाभैरव, संहारभैरव, असितागभैरव, रूरूभैरव, कालभैरव, क्रोधभैरव, ताम्रचूडभैरव तथा चन्द्रचूडभैरव के नाम हैं तथा इनकी पूजा करके मध्य में नवशक्तियों की पूजा करने का आदेश है। वहीं "गणपति-खण्ड" के ४१वें अध्याय में सात और आठ संख्या वाले भैरवों के स्थान पर "कपालभैरव" और "रुद्रभैरव" का नामोल्लेख हुआ है। तन्त्रसार में—१-असितांग, २-रूप, ३-चण्ड, ४-क्रोध, ५-उन्मत, ६-कपाली, ७-भीषण तथा ८-संहार नामक आठ भैरवों का वर्णन है।

कालिका-पुराण में शिव के नन्दी, भृंगी महाकाल, वेताल तथा भैरव बतलाये गये हैं। ये शिव के अंग रूप हैं तथा अपने तपोबल से गणाध्यक्ष बने हैं।

कहा जाता है करवीपुर के राजा चन्द्रशेखर की पत्नी तारावती के गर्भ से

महादेव के दो पुत्र हुए। ये पार्वती के शाप से वानर-मुख थे। नारद ने इनका नामकरण किया और बड़े का नाम "भैरव" रखा गया।

"श्री बटुक-पटल" ग्रन्थ में शंकर कहते हैं—"हे पार्वती! मैंने प्राणियों को सर्व प्रकार के सुख देने के लिये बटुक-रूप धारण किया है। अन्य देवता तो साधक को केवल समय आने पर ही फल देते हैं परन्तु भैरव-साधना करने पर तत्काल प्रसन्न हो जाते हैं। कष्टों से घिर जाने पर इनकी सेवा करने से शीघ्र ही दुःखों से मुक्ति मिल जाती है और सुख के दिनों में सेवा करने से सुखों में नित्यप्रति वृद्धि होती चली जाती है।

"रुद्रयामल तंत्र" में कहा गया है—भैरव के सहस्त्रों नाम हैं परन्तु उन सब नामों का सार निकालकर १०८ नामों का संग्रह करके शिव ने पार्वती को दिया था। इन नामों का जप करने से समस्त मनोकामनायें पूर्ण होती हैं, पाप क्षीण होते हैं, पुण्यों का उदय होता है, समस्त आपदाओं का निवारण होता है।

भैरव शब्द की अगर व्युत्पत्ति इस प्रकार है—"भ" नाम वाली जो भैरव-मूर्ति है, वह श्यामला है, भद्रासन पर विराजमान है तथा सिन्दूरवर्णी उसकी कान्ति है। उसके एक मुख है और उसने चार हाथों में धनुष-बाण, वर तथा अभय धारण कर रखा है।

"रेफ" नाम वाली भैरव-मूर्ति श्यामवर्ण है, उसके वस्त्र लाल हैं, वह सिंह की पीठ पर आरूढ़ है। उसके पांच मुख और आठ हाथ हैं। वह अपने दाहिने और बायें हाथों में खड्ग, खेट, अंकुश, गदा, पाश, शूल, वर तथा अभय को धारण करती है।

"व" नाम वाली शक्ति के आभूषण और वस्त्र श्वेत हैं, वह देवी लोकों का आश्रय है। कमल-पुष्प उसका आसन है। वह चार हाथों में क्रमशः दो कमल, वर एवं अभय धारण करती है।

इनमें सिन्दूर, श्याम तथा श्वेत वर्ण क्रमशः रजस्, तमस् तथा सत्वगुणों के सूचक हैं। तंत्रों में श्रीभैरव के सात्त्विक, राजस और तामस—तीनों प्रकार से साधना के विधान मिलते हैं।

प्रिय साधकों! भैरव-साधना से ही सुगन्धित हो रही हैं संसार की वस्तुयें जिनमें चंदन की शीतलता, देशी कपूर की शुभ्रता, मधु-सी मादकता, शुद्ध घृत की स्निग्धता और कुमकुम-सी स्पन्दित जीवन की मधुरिमा है। सच ही तो है, किसी भैरव के हृदय की कोमलता लेकर ही तंत्र साधना की जा सकती है।

अध्याय-३

भैरव-साधना कैसे करें?

प्राचीन काल में तंत्र का जो भी सम्मानित स्थान भारत में रहा हो पर सत्रहवीं शताब्दी के बाद से इसका महत्व बराबर घटता गया और लोगों की निगाहों से गिरता गया। इसे ढोंग, आडम्बर, लोगों को मूर्ख बनाने वाली विद्या के रूप में कुख्याति मिली। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक लोगों की घृणा का विषय बन गया। अंग्रेजी सभ्यता से पीड़ित उन्नीसवीं शताब्दी के लगभग पचास वर्षों तक तो तंत्र-मंत्र को अत्यन्त हीन और ढोंग धतूरा माना गया। लोग इस ओर शिक्षा पाने के बाद ध्यान नहीं देते थे। इसका एकमात्र कारण था कि वास्तव में तब तंत्र में अनाधिकृत और निकृष्ट आचरण वाले व्यक्ति प्रवेश कर गये थे। और इसमें ऐसे लोगों के आधिक्य के कारण तंत्र अन्धविश्वास और अश्रद्धा का केन्द्र बन गया।

वैसे तंत्र साहित्य और तंत्र का जन्म भारत में सबसे प्राचीन है। इसके उद्गाता स्वयं भगवान शंकर माने गये हैं। अनाड़ियों के अकुशल हाथों में पड़कर यह कुख्यात हो गया। इसका वास्तविक स्वरूप लोप हो गया। कालान्तर में जब पश्चिम में कुछ अनुसंधान ध्वनियों और अन्तर्मन की शक्तियों पर हुए तो पश्चिम के लोगों का ध्यान इस तंत्र विद्या की ओर भी गया और तब यंत्र-मंत्र-तंत्र के अनेक विद्यान और रहस्यमय शक्तियों का अस्तित्व स्वीकार किया गया। मां आनन्दमयी, महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज, महर्षि अरविंद आदि ने इसे प्रमाणित किया। अवधूत राम ने औघड़ संत बाबा कीनाराम की विद्या को आगे बढ़ाया। इस प्रकार विज्ञान की सहमति के आधार पर तंत्र को शिक्षित वर्ग द्वारा मान्यता मिलने लगी है, पर फिर भी इस विद्या के साथ खिलवाड़ करने वालों की संख्या अधिक रही है। इसी कारण से तंत्र आज भी सम्मानित स्थान प्राप्त नहीं कर सका है। हां इतना परिवर्तन अवश्य आया है कि लोग इस विद्या का महत्व स्वीकार करने लगे हैं और यह धारणा बन गयी है कि यह विद्या है, पर उसकी सही साधना और ठीक उपयोग करने वाले हैं कितने? अधिकांश लोगों ने कुछ अधकचरा ज्ञान प्राप्त कर इसे व्यवसाय का रूप दे रखा है। आडम्बर, डींगें हांकना उनका मुख्य साधन है। विज्ञापनबाजी कर, झूठे तर्क से और प्रमाण-पत्र पर अनेक प्रकार की उपाधियां धारण कर लेते हैं।

फिर तंत्र के नाम पर इनके चारित्रिक पतन की जो सत्य घटनायें सामने आ रही हैं, उनसे भी तंत्र को बेहद हानि पहुंची है। तांत्रिकों की प्रतिष्ठा गिरी है।

और भी ऐसे अनेक कारण हैं, जिनसे तंत्र-विद्या उपेक्षा और घृणा का शिकार बनी, पर इसमें तंत्र-विद्या का भला क्या दोष है? अनाड़ी उसका प्रयोग करें, अधकचरा ज्ञान प्राप्त कर अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करें, धन कमाने का साधन बनायें और अपनी हवस मिटायें तो इसमें दोष किसका है? विद्या कभी भी दोषी नहीं होती है। उसका प्रयोग करने वाला दोषी होता है। तंत्र एक विद्या है, एक ज्ञान है, एक उपलब्धि है। सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि यह विज्ञान मस्तिष्क का है। विचार तरंगों और मन की उस एकाग्रता का है, जिसे बड़े-बड़े तपस्वी भी नियंत्रण में नहीं रख सके। तंत्र का मूलाधार विचारों की साधना है। इस कारण यह अत्यन्त दुरुह साधना है। तपस्या कर एक बार भगवान को प्राप्त किया जा सकता है। भगवान के दर्शन हो सकते हैं, पर सम्पूर्ण तंत्र का ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता है। तंत्र साधना ईश्वर के लिये की गई तपस्या से भी कठिन साधना है। इस कारण हर कोई इसे नहीं कर पाता है। इसका नगण्य-सा अंश प्राप्त करके ही अनेक साधक सन्तुष्ट हो जाते हैं कि इस पर सफलता प्राप्त हो ही नहीं सकती है। सिर्फ कठोर साधना का साहस होना चाहिये, वरना यह साधना आसान नहीं है कि कुछ दिन किया और सिद्धि प्राप्त हो गई।

वास्तव में तंत्र मन की अगाध शक्ति पर आधारित वैज्ञानिक क्रियाओं के समूह का विशाल नामकरण है। अब विज्ञान भी इस बात को स्वीकार कर रहा है कि मन की शक्ति से बड़ी शक्ति का कोई अस्तित्व नहीं है। मन की शक्ति के आगे परमाणु बम की शक्ति भी नगण्य है। इस तथ्य को भारत के अद्वितीय चिंतक मनीषियों ने शताब्दियों पहले जान लिया था और इसी सिद्धान्त पर तंत्र शास्त्र का आविर्भाव हुआ। इसी शक्ति के अनेक प्रकार के प्रयाग जो अलौकिक अविश्वसनीय और चमत्कारिक, रहस्यमय कहे गये हैं। उनका संकलन कर तंत्र शास्त्र का नामकरण हुआ यही इस विषय का मूलाधार है। मनुष्य अपने मन की शक्ति के द्वारा क्या नहीं कर सकता है। सब-कुछ संभव है। तंत्र में कुण्डलिनी का विधान है जो तंत्र की चरम सिद्धि का प्रतिरूप मानी गई है। शीर्ष से लेकर गुप्त स्थान तक जाने वाली सुषुम्ना और इड़ा नलिकाओं की शक्ति को विज्ञान मानता है। सर्पाकार पड़ी कुण्डलिनी गुप्त रहती है। इसमें "वैकुम" की स्थिति रहती है। इसका जागरण कर लेने वाला साधक "परमसिद्ध" हो जाता है, पर क्या यह जागरण संभव है? संभव है, लाखों-करोड़ों में से किसी एक को। इसकी साधना विकट है और सब-कुछ मन को नियंत्रण में रखने की शक्ति पर निर्भर करता है।

हमारे महर्षियों ने प्रारम्भ से ही मन की महत्ता पर प्रकाश डाला है और

बार-बार इस सत्य को स्वीकार है कि मन को वश में कर पाना सबसे महान् कार्य है। एक बार मनुष्य सम्भवतः प्रयत्न करके हिमालय को अपनी हथेली पर उठा सकता है, पर मन पर नियन्त्रण करना इससे भी कठिन कार्य है। मन डोल ही जाता है। न केवल विश्वामित्र का मन डोला था वरन् भगवान शंकर का भी मन डोल गया था, फलस्वरूप अपना तीसरा नेत्र खोलना पड़ा था। मन की यही असीम शक्ति जब मनुष्य अपने नियंत्रण में कर लेता है, तो वह सब प्रकार की साधनायें कर सकता है और प्रत्येक सिद्धि को प्राप्त कर सकता है। सम्पूर्ण तंत्र शास्त्र की क्रियायें, साधनायें और सिद्धियां इसी सिद्धान्त पर आधारित हैं। इस कारण उनको सफल कर पाना कठिन है। इस कारण भी तंत्र को लोग बकवास मानते हैं। तंत्र शास्त्र में वर्णित क्रियायें या साधनायें करने के अनेकानेक साधक प्रयत्न करते हैं, पर सब-कुछ अधूरा-अधूरा रह जाता है। पूरी नहीं कर पाते या पूरी करने पर अज्ञानवश त्रुटियां रह जाने पर अभीष्ट फल ही नहीं मिलता, जबकि भ्रमवश पर समझ बैठते हैं कि उन्होंने सब-कुछ ठीक-ठीक नहीं किया है, तो वह तांत्रिक विधियों को, तंत्र साधना को ही कोसने लगते हैं। बकवास है। मुर्खता है। अंधविश्वास है। ढ़ोंग है, कहने लगते हैं इस प्रकार तंत्र और तंत्र साधना निदित है। लेकिन सच्चाई इसके बिल्कुल विपरीत है।

प्राचीन काल की जीव पद्धति जब तंत्र का विश्वास किया जाता था। तांत्रिक क्रियायें लोग करते थे। उसमें सिद्धियां प्राप्त कर लेते थे, अलग किस्म का था। उस समय का जीवन अत्यन्त सात्विक या और शीशे के समान निर्मल तथा गंगाजल जैसा पवित्र था, तब वातावरण भी इतना प्रदूषित नहीं था। उस समय इस बात की कोई भी इन्चमात्र आवश्यकता न थी कि यह साधक को बतलाया जाये कि तंत्र साधना कैसे की जाये? उस समय सब-कुछ निर्मल था और प्रत्येक वस्तु अपने शुद्ध और मूल रूप में प्राप्त थी। इस कारण सभी प्रकार की तंत्र साधनायें कर साधक इच्छित सिद्धियां प्राप्त कर लिया करते थे। अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक समय में जब अंग्रेज यहां ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सौदागरों के रूप में आये थे, तो कई कम्पनी के अधिकारियों द्वारा इस प्रकार की अनेक तांत्रिक घटनाओं और विलक्षण तांत्रिकों का विवरण लिखा गया है। इष्ट इण्डिया कम्पनी के प्राचीन सुरक्षित दस्तावेजों में आज भी इन लोगों द्वारा लिखे गये यह पत्र दस्तावेज सुरक्षित हैं, पर तबके और अबके वातावरण में काफी परिवर्तन आ गया है। अब तो न वैसे साधक हैं, न ही वैसा वातावरण है। सब-कुछ बदल गया है। खान-पान और रहन-सहन में भी बदलाव आया है। प्रकृति, पेड़-पौधे सब-कुछ बदल गया है। मन की क्रियाओं पर खान-पान, रहन-सहन, वातावरण सबका प्रभाव पड़ता है।

तंत्र के काम में आने वाली वनस्पतियां, अन्य वस्तुयें सब-कुछ बदल गया है। इस कारण लाख प्रयास करने और विधिवत् सारी क्रियायें पूर्ण करने के उपरान्त भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती हैं। इसमें तंत्र शास्त्र का भला क्या दोष है, उसे क्यों झूठा ठहराया जाये?

तंत्र वास्तव में विज्ञान-सम्मत सिद्धान्तों पर आधारित एक प्रकार की वैज्ञानिक साधना है, जिसका सारा मूलाकार ऊर्जा है। ऊर्जा के परिमाण और संतुलन, नियंत्रण के सिद्धान्त पर ही प्रायः सभी तांत्रिक क्रियायें आधारित हैं। जब तक इस तथ्य को हृदयंगम न कर लिया जाये, तब तक तंत्र क्रियाओं, उसकी साधनाओं और सिद्धियों पर आस्था नहीं हो सकती है और न ही उसकी विश्वसनीयता प्रमाणित होगी। किसी भी विद्या को प्राप्त करने के लिये पहले उसका क ख ग सीखा जाता है, तब वह विद्या प्राप्त होती है। इसी प्रकार जब तक तंत्र-मंत्र-यंत्र विज्ञान का मूलाधार न समझ लिया जाये, तब तक उसकी साधना करना व्यर्थ है। पहले बात को समझना आवश्यक है। यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि प्रत्येक वस्तु में, चाहे वह निर्जीव हो या संजीव, चल हो या अचल अपनी एक ऊर्जा होती है। ऊर्जा के साथ-साथ अपना अलग "आभामण्डल" होता है। इसी आभा मण्डल को अंग्रेजी में औरा कहा गया है। वह वस्तु प्रकाश में हो या अंधकार में, उसका आभामण्डल बराबर बना रहता है। वह कभी क्षीण नहीं होता है, न ही मिट पता है। हां वातावरण, प्रदूषण के अनुसार घट-बढ़ होती रहती है। इस प्रारूप में परिवर्तन आंते रहते हैं। तंत्र का सम्पूर्ण ढांचा इसी ऊर्जा और आभामण्डल के सिद्धान्त पर खड़ा है। ऊर्जा के लिये उर्दू में एक शब्द है, "तासीर"! प्रत्येक वस्तु की अपनी एक अलग तासीर होती है। तंत्र ने इसी सिद्धान्त का अधिग्रहण किया है। प्राचीन महर्षियों ने इस लक्ष्य को खोजा, जाना और पीढ़ी-दर-पीढ़ी सब अनुसंधान कर तंत्र शास्त्र को जन्म दिया है। प्रत्येक वस्तु को, प्रत्येक क्रिया को जांचा-परखा गया। उसकी ऊर्जा तथा आभा को मात्रा के अनुसार तंत्र में स्थान दिया गया।

अतएव सत्य तो यह है कि तंत्र शास्त्र में कुछ भी गलत या अवैज्ञानिक नहीं दिया गया है, यह कहना भी गलत न होगा कि उनको विकृत कर दिया गया है। अच्छे प्रामाणिक और प्राचीन तंत्र शास्त्र भी मिलने कठिन हैं। तंत्र की लोकप्रियता और इसमें वर्णित चमत्कारों, अलौकिक सिद्धियों को देखकर धन कमाने की लालच में प्रकाशकों नें खूब छापा। जैसे ग्रन्थ दीख पड़ा जिसने जैसा दिया, छाप मारा। इन्द्रजाल छोटा और बड़ा, शाबर मंत्र, सावरी तंत्र जैसा देखा, छाप मारा और धुआंधार बेचा। इतना सस्ता कर दिया तंत्र को। तंत्र को लोकप्रियता का लाभ छुटभैये लेखकों ने भी उठाया। तंत्र का कुछ भी ज्ञान न रहा, पर तंत्र पर मोटी-मोटी पुस्तकें लिख

मारीं। जिस लेखक के मन में जैसा आया लिख मारा। इस प्रकार के प्रकाशन और तंत्र साहित्य ने भी तंत्र-विद्या को काफी क्षति पहुंचायी है और जन-साधारण की नजर में तंत्र गिरा है। प्रकाशन के क्षेत्र में इस आपकामी के कारण तंत्र मखोल बन गया। एक प्रयोग देखें—दीपावली की रात को काले उल्लू की आंख निकालो। उसको भून डालो। उसका चूर्ण बना लो। जब वह चूर्ण आप अपने शरीर पर लगाओगे तो आप अदृश्य हो जाओगे। आप सबको देख सकोगे पर कोई आपको न देख सकेगा। इसी प्रकार उल्लू की हड्डी पीसकर आंख में आंजने पर गड़ा खजाना दिखलायी पड़ेगा। यह उल्लू पुष्य नक्षत्र में ही पकड़ा जाये। यह सब पढ़कर हंसी आती है। काला उल्लू कहां मिलेगा? ठीक पुष्य नक्षत्र में उल्लू कैसे पकड़ में आयेगा। आशय यह है कि इस प्रकार के नुस्खे दिये गये हैं, जो असंभव है और संभव हो भी गये तो अदृश्य होने के स्थान पर आदमी अन्धा हो जायेगा फिर सारी दुनिया उसे देख सकेगी, वह दुनिया को नहीं देख सकेगा। इस तरह की बेहूदा पुस्तकों ने समझदार लोगों को इस ओर से और भी घृणा करने का अवसर दिया है। वशीकरण के लिये हास्यास्पद विधियां दी हैं। प्रेमिका का नाम लिखकर शहद में डुबोकर हर गुरुवार धूप दिखाओ—और शनिवार के बाद वह कागज प्रेमिका के घर में डाल दो। वह वश में आ जायेगी। एक सज्जन ने ठीक ऐसा ही किया। सब करने के बाद विश्वास हो गया, प्रेमिका वश में आ गयी, दिखलायी पड़ी तो लपक पर पूछ बैठे, "प्रिये! चलो न मेरे साथ। प्रेमिका कुछ न बोल उल्टे पैर घर में घुस गयी और अपने पहलवान जैसे गवार भाई से कहा। भाई ने प्रेमी महाशय को जूते लगाये कि खोपड़ी गंजी हो गई।

तंत्र-मंत्र के नाम पर जो साहित्य प्रकाशित हुआ है, उसकी प्रामाणिकता पर भी प्रश्नचिन्ह लगा हुआ है। शाबर मंत्र, से बड़े का जादू आसाम बंगाल का जादू, गोरखनाथ मच्छिन्द्रनाथ, भैरवनाथ औघड़नाथ के नाम पर तो अजब तमाशा है। शाबर मंत्र के नाम पर तो बड़ी ही हास्यास्पद बात कहकर ज्ञाताओं ने अपनी बेवकूफी पर बड़ी सफाई से परदा डाल दिया है। वास्तव में वास्तविक तंत्र साहित्य संस्कृत या अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में है। मंत्रादि भी ध्वनि विज्ञान के आधार पर उसमें है। संस्कृत विलिष्ट भाषा है। मंत्र स्मरण रखना सबके वश में नहीं है। अतएव इस प्रकार की एक घटना का सहारा लिया गया कि एक बार शिव और पार्वती भ्रमण पर निकले एक घने जंगल में आने पर शंकर भगवान अत्यन्त प्रसन्न हो गये। उन्होंने देखा कि एक साधक उनकी ही संसार को दी गयी तंत्र-विद्या की साधना कर रहा है। वह रुक गये पर घबरा गये कि वह मंत्रों का उच्चारण ठीक से नहीं कर पा रहा है। अशुद्ध उच्चारण के कारण उसके अनिष्ट की संभावना

थी। घबराकर पार्वती की ओर देखा। बोलो, मेरा यह भक्त तो अशुद्ध उच्चारण के कारण संकट में पड़ जायेगा। इस पर पार्वती ने शंकर से कहा—प्रभु! इसमें आपका दोष है। इतनी कठिन शब्द-रचना ही आपने क्यों की? इसे सरल भाषा में करिए। तब भगवान शंकर ने मंत्र-विद्या का सरलीकरण कर दिया। यह सरलीकरण "शाबर विद्या" था। रामायण में गोस्वामी तुलसीदास इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं—

अनमिल आखर अरथ न जापू।
प्रगट प्रभाव महेश प्रताप।।
काले बिलोकि जगहित हर गिरिजा।
साबर मंत्र जाल जिनसिरिजा।।

आज इस सरलीकरण के नाम पर तंत्र की दुर्गति हो गयी है। सरलीकरण इस सीमा तक लोगों द्वारा कर दिया गया कि वह मखौल ही बन गया।

कम से कम भारत में ऐसा कोई गांव या शहर न होगा कि जहां कोई ओझा, गुनिया या तांत्रिक न हो। आश्चर्य की बात है कि अनपढ़ किस्म के लोग ही गांव-देहात में इस कार्य को करते मिलेंगे। इस कारण जब शाबर मंत्र इन तक आये तो इन लोगों ने इनका रूप और विकृत कर दिया। जब पढ़ा-लिखा वर्ग यह मंत्र सुनता है "हराम का जाया, तू किधर जायेगा? इसे क्यों काट खाया ? जा....जा ....जा....हराम का जाया तेरे बाप का क्या खाया? तेरी मां-बहन जिना करे। कसम गोरखनाथ की।"

आप ही विचार करें यह भी कोई मंत्र है। इस तरह के मंत्र-जाप मखौल नहीं तो और क्या हैं? आशय यह है कि इस प्रकार तंत्र शास्त्र विकृत होता गया। अब यदि समाज का एक वर्ग इसे घृणा, नफरत, अशुद्ध, ढोंग, अविश्वास की भावना से देखता है, तो इसमें किसी का क्या अपराध है, ऐसा तो होगा ही। इसी कारण आज तंत्र उपेक्षित-सा है।

साधना में सफलता प्राप्त करने के लिये पहली बात तो यह है कि हमें तंत्र का वास्तविक रूप समझना चाहिये। फिर उचित विधि-विधान के द्वारा उसकी साधना करनी चाहिये। प्रत्येक युग में एक-से-एक तांत्रिक हुए हैं और सभी लोग अब इस बात को मानते हैं कि हां, तंत्र एक विद्या है। एक आलौकिक शक्ति है, अमेरिका, रूस, इंग्लैण्ड जैसे विकसित देशों के वैज्ञानिक इसे स्वीकारते हैं।

पाश्चात्य देशों में तंत्र काले जादू के नाम से प्रसिद्ध भी है। ऐसी दशा में तंत्र विद्या का वास्तविक रूप और उसकी सत्ता या शक्ति को नकारा तो नहीं जा सकता है। अन्त में सबसे बड़ा और अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न यही उठता है कि

तंत्र साधना कैसे की जाये? प्राचीन काल में साधकों का रहन-सहन, दिनचर्या, वातावरण ही इस प्रकार का था कि वह तंत्र साधना के लिये सर्वथा अनुकूल था। समय बदला और सब-कुछ बदल गया। इस सम्पूर्ण बदलाव के कारण ही यह आवश्यक हो गया कि तंत्र साधना कैसे की जाये? सर्वप्रथम इस बात को सीखा जाये। बिना इसके सब-कुछ निष्फल है, व्यर्थ है।

संसार के सभी धर्म, सभी जाति के लोगों में "तंत्र" किसी ना किसी रूप में विद्यमान है। कोई भी सम्प्रदाय अछूता नहीं बचा है और कई स्थान तो केवल तंत्र विद्या के पीठ ही रहे हैं। आसाम का काम-रूप कामाख्या आज भी प्रसिद्ध सिद्धपीठ है। पहले भारत के अन्य भागों से लोग यहां आने से डरते थे। आसाम गुरु गोरखनाथ और उनके शिष्य मच्छिन्द्रनाथ की कर्मभूमि रहा है, इस कारण भी यह क्षेत्र आतंक का कारण है। फिर भगवती की योनि गिरने के कारण प्रसिद्ध कामाख्या मंदिर सबसे बड़ा तंत्रपीठ और तांत्रिकों का तीर्थ है। एक साधन, माध्यम, विद्या है और अधिक से अधिक लोग मन की इस रहस्यमय शक्ति का, अन्तर्मन के चमत्कारों का लाभ उठाकर सुखी-सम्पन्न जीवन व्यतीत कैसे करें, यही मैं तंत्र का उद्देश्य और अपना मिशन मानता हूं। पाठकगण कृप्या क्षमा करें। मैं केवल सात्त्विक ढंग की साधना करूं? इस सीमा तक ही अपने को सीमित रखना चाहता हूं। इसी साधना को मैं उचित और सच्ची मानता हूं ताकि सभ्यतापूर्वक समाज में रहकर समाज के नियमों का पालन करते हुए तंत्र साधना कर स्वयं अपना और दूसरों का कल्याण कर सकें। तंत्र का उद्देश्य यही है। मैंने स्वयं देखा है, अनेक तांत्रिक अपने साधना स्थल को विचित्र वस्तुओं से सजाकर रखते हैं। तंत्र चमत्कार, प्रदर्शन या धनोपार्जन के लिये नहीं है। खेद है कि अधिकांश तांत्रिकों और एक दो सिद्ध करने वालों ने इसका रूप विकृत कर रखा है।

तंत्र साधना में "ध्यान" पहली आवश्यकता है। जब तक ध्यान की शक्ति न होगी, तब तक आप किसी भी प्रकार की साधना नहीं कर सकते हैं। जिस प्रकार लैंस पर सूर्य की शक्तियां जब तक एक बिन्दु के रूप में एकाकार हो जाती हैं, तो उसके द्वारा बीड़ी, सिगरेट, कपड़ा, कागज आदि पदार्थों में अग्नि उत्पन्न हो जाती है, उसी प्रकार मन की एकाग्रता अर्थात् ध्यान के कारण शरीर की सम्पूर्ण ऊर्जा एक बिन्दु में सिमट जाती है और यह जब लक्ष्य पर गिरती है तो लक्ष्य पूरा होता है। अर्जुन अपने इसी ध्यान और एकाग्रता के कारण लक्ष्य भेद कर द्रौपदी को प्राप्त कर सका था। ऐसा ही ध्यान तंत्र में भी प्रत्येक साधना और सिद्धि के लिये अत्यावश्यक है। जब तक ध्यान से केन्द्रित करने का अभ्यास न हो जाये, भैरव-साधना में कदम नहीं रखा जा सकता है। ध्यान के कारण ही मनुष्य अपने लक्ष्य में सफ़लता प्राप्त करता है। ध्यान ही उसका प्रत्येक कार्य सफल बनाता है। मन की सम्पूर्ण शक्ति जब किसी कार्य में लग जाती

है तो कार्य सफल हो जाता है। विचलित मत या चंचल मन के द्वारा सफलता नहीं मिलती, अपने मन पर नियंत्रण कर एक ही विचार पर ध्यान लगाना ही सच्ची साधना है। आत्मा की शान्ति, सुख और ईश्वर की प्राप्ति का भी तो यही साधन बतलाया गया है। अपना सारा ध्यान लगायें और सफलता प्राप्त करें ध्यान के कारण ही अनेक चमत्कार होते हैं। ऐसी शक्ति होती है ध्यान में।

आप कोई भी साधना करनें से पहले ध्यान लगाना सीखें। छोटी-छोटी बातों पर ध्यान लगायें। ध्यान लगाने का कार्य "पद्मासन" में करें। सबसे पहले आप बिन्दु सामने रख ध्यान लगावें। अपने सारे विचार उस पर ले आयें। कुछ समय के अभ्यास के बाद आपका ध्यान लग जायेगा, पर कुछ देर बाद आपका मन भटकने लगेगा। आपके मस्तिष्क में दुनिया-भर की न जाने क्या-क्या बातें आने लगेंगी। बस यही तो गड़बड़ है। इसी पर आपको कसकर नियंत्रण करना है। यहीं पर अपने आपको काबू में रखना है। अपने को रोकना है।

तंत्र साधना कैसे की जाये? इस सम्बन्ध में कोई विशेष ग्रन्थ या स्पष्ट दिशा निर्देश भी नहीं है। केवल अनेक प्रकार की तांत्रिक साधनाओं का अध्ययन मनन करने के उपरान्त ही, जिस प्रकार की व्यावहारिक रूपरेखा बनती है। वही वहां पर वर्णित है। सबसे पहले प्रश्न यह है कि तंत्र साधना करने वाले की पात्रता क्यों है? उसमें क्या योग्यता होना आवश्यक है? अब तक के निष्कर्षों के अनुसार वह वयस्क होना चाहिये। पढ़ा-लिखा, सात्त्विक, विचारों वाला, निडर, श्रद्धावान और अच्छे स्वास्थ्य का धनी। विवाहित, अविवाहित का प्रश्न ही नहीं है। वह ग्रहस्थ भी हो सकता है। तांत्रिक परिधान स्मरण करना आवश्यक नहीं है। साधना काल में तांत्रिक परिधान पहनना आवश्यक है। ग्रहस्थ भी तांत्रिक साधना सफलतापूर्वक सम्पन्न कर सकता है। बशर्ते कि उसकी क्रियाविधि विधान के रूप से शुद्ध हो।

तंत्र-विद्या के मुख्यतः दो रूप हैं—एक सात्त्विक, दूसरा तामसिक। सात्त्विक रूप में देवी-देवताओं की उपासना और लोगों के कष्ट निवारण, समाज कल्याण के लिये किये गये तांत्रिक अनुष्ठान। तामसिक तंत्र में श्मशान साधना, अघोरी रूप, कारण आदि भयंकर अभिचारिक क्रिया हैं। तंत्र इसी दो प्रकार के रूपों में विभाजित है। इन दो रूपों को आप जो नाम दें। दोनों रूपों के तांत्रिक सदा होते आये हैं। अब यह साधक पर निर्भर है कि वह किस प्रकार की, कौन-सी, किस रूप की साधना करना चाहता है? वैसे मैं सात्त्विक साधना के पक्ष में हूं। तामसिक साधना के पक्ष में बिल्कुल नहीं हूं। फिर भी यह तंत्र साधना का ही एक अंग है। यह औघड़ साधना है, इसको करने वाला अघोरी कहलाता है।-इसमें अत्यन्त अमानवीय कृत्य करने पड़ते हैं। बाबा कीनाराम, बिहार के दूल्हा बाबा इसके प्रमाण थे। इस

प्रकार की साधनायें अत्यन्त तामसिक होती हैं। इनमें जरा-सी असावधानी अथवा भूल या तो पागल कर देती है अथवा करुण मृत्यु का कारण बनती है। साथ ही इसमें बड़ा ही घिनौना जीवन व्यतीत करना पड़ता है। बिहार के दूल्हा बाबा जिस किंसी के घर में प्रवेश करते थे विष्ठा की गन्ध उसके नथुनों में भर जाती थी और जो बिना घबराये इस गंध को सह लेता था। उसका घर धन-धान्य से भर जाता था। भिखारी रहने पर भी कुछ समय में ही लखपति हो जाता था। दूल्हा बाबा बहुत घिनौना रहता था। इस जटिल, भयानक औघड़पंथी साधना से मेरा परिचय है। कई प्रकार के कटु अनुभव भी हैं। फिर भी इसको वर्जित मानकर मैं केवल सात्त्विक तंत्र का साधक हूं। मेरा मिशन ही है तंत्र सबके लिये। इसे गोपनीय या बपौती मानकर अपने तक सीमित नहीं रखना चाहता। सर्वसाधारण भी इसका भरपूर लाभ उठायें। जिस प्रकार व्यायाम, योगासन आदि से मनुष्य का शरीर स्वस्थ रहता है। अच्छे विचार, अच्छे कार्य करने से शांति, सुखकर जीवन व्यतीत करता है। अपने परिश्रम के बल पर सम्पन्न बनता है।

इसी प्रकार नित्य विधि-विधान से पूजा करे, ब्रह्मचर्य-पालन के साथ-साथ मन से पवित्र रहे, भूमि पर आसन ग्रहण करे और पृथ्वी पर सोये; तो स्वप्न में सूचना अवश्य प्राप्त हो जायेगी। जिन-जिन मंत्रों से जिन-जिन यंत्रों की सिद्धि होती है उन-उन मंत्रों को ग्रहण करना चाहिये। निषिध विधि का त्याग कर देना उचित होगा। तत्पश्चात् एकान्त वातावरण में उस यंत्र को लिखे तो वह सफलता प्राप्त करेगा।

सहयोग की भावना से सहजीकरण हेतु यंत्र बीज तथा मंत्र प्रस्तुत है—यंत्र बीज व मंत्र चार प्रकार के हैं—सिद्ध, साध्य, अरि, सुसिद्ध। ९/१/५ में सिद्ध, ६/१०/२ में साध्य, ३/६/११ में सुसिद्ध और ४/८/१२ में रिपु संज्ञक होते हैं। अपनी राशि से मंत्र की या यंत्र राशि यदि ९/१/५वीं हो तो सिद्ध ६/१०/२ में साध्य, ३/६/१२ में सुसिद्ध व ४/९/११वीं में शत्रु होता है।

सिद्ध कुछ काल में सिद्ध होता है। साध्य सिद्ध हो यह आवश्यक नहीं। अरि मूल को काटता है और सुसिद्ध तत्काल फल देता है। कारण राशिकाल स्वप्न और साधक के मनोगत अभिप्राय को भली-भांति जानकर क्रिया आरम्भ करनी चाहिये।

हरएक व्यक्ति मंत्र-तंत्र विद्या को पकड़कर उस पर अनेक प्रकार के अभ्यास शुरू कर देता है। कई तरह की अटकलें लगाना आरम्भ कर अपने पाण्डित्य की परीक्षा अपने आप ही शुरू कर देता है तथा धड़ाधड़ विज्ञापन और बनावटी उपाधियां प्राप्त कर प्रसिद्ध होने लगता है। यह कोई साधारण विद्या नहीं जो कोई पंसारी

की तरह हर जगह दुगान लगाकर अपनी विद्वता दिखलाना शुरू कर दे। इस विद्या को हासिल कर पाना अपने आप में कुछ महत्व रखता है। अपने आपको समाज से ऊपर रखने वाले महान् साधकों की पंक्ति में रखना होता है। मंत्रसिद्धि कर लेना भी इतना आसान कार्य नहीं कि जिसके मन में आया वह कर ले।

मंत्र उपासना का व्यापक प्रभाव देखते हुए, मनीषियों ने मंत्रों के दस प्रकार के कर्म चुने हैं। कहने का अर्थ है कि मंत्रों के माध्यम से दस तरीकों से सिद्धियां की जा सकती हैं। इन दसों कर्मों के आधार में सम्पूर्ण मानव समाज एकत्र होकर एक साथ मिल जाता है, क्योंकि समस्त मानव समाज इन दस श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी मूल समस्यायें प्राप्त कर सकता है।

अब आइये जरा मंत्र द्वारा सम्पादित होने वाले दस कर्मों का भी विवरण देखें—

(१) शान्ति कर्म—जो मंत्र-जप मनुष्य को भौतिक व्याधियों, रोग, आतंक से मुक्ति प्रदान करता है, उसे शान्ति कर्म कहा जाता है। सदा शुद्ध मन और भावना के साथ जाप करना और इस आराधना के समय कोई लालसा और आशंका न हो, वह विशुद्ध शान्ति कर्म के नाम से जाना जाता है।

(२) स्तम्भन कर्म—इस कर्म में मंत्र के जाप की शक्ति से मंत्रकर्त्ता किसी व्यक्ति, पशु-पक्षी एवं अन्य प्राणी के कार्य एवं गति को स्थिर कर दे, उसकी चंचलता पर नियंत्रण करके उसे शान्त, स्थिर कर दे तो उस कर्म को स्तम्भन कर्म कहते हैं।

(३) मोहन—वह प्रयोग जिसमें मंत्र के प्रभाव का अभीष्ट स्त्री, पुरुष, पशु-पक्षी एवं अन्य जीव उपासक के प्रति सम्मोहित हो जायें मोहन क्रिया कहलाता है। आजकल प्रचलित विद्या हिप्नोटिज्म इसी विद्या का एक अंग है।

(४) उच्चाटन—मंत्र के प्रयोग से जब किसी व्यक्ति को भयभीत, विचलित, पागलों के समान आचरण करने वाला बना दिया जाये तो उस प्रयोग को उच्चाटन क्रिया कहते हैं।

(५) वशीकरण—मंत्र शक्ति द्वारा किसी को अपने प्रति वशीभूत करने की क्रिया, वशीकरण अथवा वश्य कर्म कहलाती है।

(६) आकर्षण—किसी जानकार प्राणी के प्रति ऐसा मंत्र प्रयोग करना जिससे वह स्वयं आकर्षित होकर उपासक के पास आ जाये, उसे आकर्षण कर्म कहा जाता है।

(७) जूंभण—उपासक जब मंत्र शक्ति से वशीभूत होने वाले प्राणी द्वारा अपने मनोनुकूल व्यवहार एवं आचरण या व्यवहार कराता है तो उसे जूंभण-क्रिया कहते हैं।

(८) **विद्वेषण**—किन्हीं सम्बन्धियों के बीच विरोध की मनःस्थिति उत्पन्न करने वाली तांत्रिक-क्रिया विद्वेषण कहलाती है।

(९) **मारण**—मंत्र की शक्ति के प्रभाव से किसी प्राणी का प्रणान्त कर देना ही मारण कर्म कहलाता हैं।

(१०) **पौषिक**—साधक द्वारा मंत्रबल का अवलम्ब लेकर धन-धान्य, यश, सम्मान, कीर्ति, वैभव की वृद्धि करना पौषिक कर्म कहलाता है।

यहां पर एक बात विशेष रूप से कहने की है कि किसी भी कार्यसिद्धि हेतु उससे सम्बन्धित मंत्र किसी योग्य गुरु की दीक्षा से ही प्राप्त करना चाहिये। क्योंकि मंत्रदान के समय गुरु उसके प्रयोग का विधि-विधान साधक को समझा देता है।

यंत्र सम्बन्धी ग्रन्थों के शुभारम्भ हेतु भिन्न-भिन्न समय नक्षत्र, वार, काल-दिनों का उल्लेख है जिन्हें सीखना ध्यान में रखना होगा, याद रखना पड़ेगा, चैत्र को "मलमास" कहा गया है। नीचे दिया समय मंत्र-सिद्धि के लिये शुभ है—

नक्षत्र—अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी हस्त, चित्रा, स्वाति आदि।

दिन—रविवार, सोमवार, गुरुवार, शुक्रवार।

तिथि—पूर्णिमा, द्वादशी, एकादशी, दशमी, सप्तमी, पंचमी, तृतीया, द्वितीया।

तंत्र शास्त्र में कुल १८ सिद्ध विद्याओं का वर्णन है। उनमें से १० महाविद्यायें होती हैं। महाविद्या दो भागों में विभक्त है—

(१) काली कुल, (२) श्री कुल।

ज्ञान-वृद्धि हेतु तथा इसे और अधिक सरल बनाने की दृष्टि से दोनों भागों को अलग-अलग विभक्त किया गया है।

काली कुल के अन्तर्गत—

(१) काली,

(२) तारा,

(३) भुवनेश्वरी,

(४) छिन्नमस्ता।

श्री कुल के अन्तर्गत—

(१) त्रिपुर सुन्दरी,

(२) भैरवी,

(३) बंगला;

(४) कमला,

५. धूमावती,

६. मातंगी।

साधक इन महाविद्याओं के मंत्रों को ग्रहण कर सकता है तथा इसके लिये यह प्रश्न नहीं बचेगा कि कौन-सा मंत्र किस विद्या का है?

मंत्र के पहले अक्षर वाले नाम का प्रथमाक्षर, कुलाकुल चक्रानुसार जो आगे स्पष्ट किया है, एक ही कोष्टक में हो तो मंत्र साधक के कुल का होता है और साधना अवश्य सफल होती है।

कुलाकुल चक्र

वायु	अग्नि	भूमि	जल	आकाश
अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ ऋ	ल ल
क	ख	ग	घ	ड़
ब	छ	ज	झ	ज्
ट	ठ	ड	ढ	ण
त	थ	द	ध	न
प	फ	ब	भ	मं
य	र	ल	व	श
ष	क्ष	त्र	स	ह

अब अभ्यास के लिये कुलाकुल चक्र में अपने नाम के प्रथम अक्षर को देखें कि वह किस कोष्ठक में आता है। उसके बाद मंत्र के पहले अक्षर को देखें, वह किस कोष्ठक में है। यदि दोनों अक्षर एक ही वर्ग के अर्थात् मित्र तत्व के हों तो आप यह समझिये कि मंत्र शुभ है। अन्यथा अशुभ या निष्फल मानिये।

उदाहरण—

तत्व जल	—	भूमि	=	मित्र
तत्व वायु	—	अग्नि	=	मित्र
तत्व वायु	—	भूमि	=	शत्रु
तत्व जल	—	अग्नि	=	शत्रु
तत्व आकाश	—	सम है।		

नामं राशि तथा मंत्र राशि सम्बन्ध प्रायः अपने नाम की राशि से मंत्र की राशि ६/८/१२वीं हमेशा अशुभ मानी गई है। १/५/९ शुभ। इसी प्रकार नाम राशि

से मंत्र राशि ३/६/११ हो तो समान गुण यानी जितनी शुभ है साथ ही साथ उतनी ही अशुभ है।

गण साधनगण तीन प्रकार के माने गये हैं—

(१) मनुष्यगण, (२) राक्षसगण, (३) देवगण।

साधारणतया मनुष्य-मनुष्य या मनुष्य-देव अथवा देव-देवगण श्रेष्ठ होता है और इसी क्रम में देव तथा राक्षसगण में परस्पर दुश्मनी होती है। इसलिये मंत्र साधना के पूर्व में यह आवश्यक रूप से जान लें कि मंत्र और साधक किस गुण में हैं, तब ही अपनी साधना शुरू करें अन्यथा हित के साधन पर अहित हो सकता है।

तंत्र विज्ञान में १० संस्कार मंत्र साधन के बताये गये हैं। इन दसों संस्कारों को ज्यादा-से-ज्यादा ६ दिनों में ही कर लेना चाहिये।

(१) जनन संस्कार—एक त्रिकोण बना दें तथा इस त्रिकोण के तीनों कोणों में ६/६ रेखायें बनाकर ४६ त्रिकोण बना लेवें जिसमें भात का पूजन करें। उसके बाद सम्बन्धित देवता का आह्वान करें और मंत्र के १-१ वर्ग का अलग-अलग पत्र लिखें। इसे जनन संस्कार कहते हैं।

(२) दीपन संस्कार—मंत्र को मध्य भंग में लगाकर जाप करने को 'दीपन संस्कार' कहते हैं।

(३) ताउन संस्कार—'फ़ट्' से सम्पुटित १००१ जप।

(४) अभिषेक संस्कार—भोजपत्र पर मंत्र को लिखकर 'ॐ हंसः ॐ' से अभिमंत्रित करें।

(५) विमलीकरण संस्कार—'ॐ यो वोषट्' से सम्पुटित करें तथा १००१ जप करने को कहते हैं।

(६) जीवन संस्कार—'स्वधावषट्' से सम्पुटित १००१ जप।

(७) तर्पणा संस्कार—दूध, घी, जल से १००१ तर्पण मुख्य मंत्र से करें।

(८) गोपन संस्कार—ही बीज से सम्पुटित १००१ जप।

(९) अप्यान संस्कार—ही बीज से सम्पुटित १००१ जप।

(१०) पुरश्चरण—क्रमानुसार संस्कार के उपरान्त मंत्र पुरश्चरण करना चाहिये। पुरश्चरण से जप, होम, तर्पण, अभिषेक, ब्राह्मण—ये पांच आवश्यक अंग हैं। जप में जितनी संख्या निर्दिष्ट की गई उससे पूर्ण जप किया जाना चाहिये। उससे कम न करें। उसके पश्चात् निर्दिष्ट संख्या में ही हवन भी जरूरी है, मंत्र-जाप के साथ देव-पूजा की एक अनोखी बात है। तंत्र में पूजन विधान कुछ अलग से ही लिखित है, इसमें पांच प्रकार का शोधन किया जाता है जिसे पंच शुद्धात्मक पूजन कहा

जाता है। सबसे पहले मंत्रों से भूमि को पवित्र किया जाता है। फिर आसन को और फिर निज देह शोधन अनिवार्य है। तत्पश्चात् देव मंत्र शोधन करना चाहिये।

अन्त में माला को अभिमंत्रित किया जाना होता है और माला संस्कार के बाद इष्ट की प्राण-प्रतिष्ठा की जानी चाहिये। मंत्र उत्कीर्ण कराने के बाद शुभ मुहूर्त में यंत्र का विधान से पूजन किया जाना चाहिये और नित्य प्रति षोड्शोपचार पूजन करना श्रेष्ठ रहता है। सबसे पहले ऋद्धि-सिद्धि के दाता गणपति का पूजन वांछनीय है तथा अन्य कर्मकाण्ड तदोपरान्त ही उपर्युक्त विधि से शुभारम्भ करें तथा अन्य कर्मकाण्ड तदोपरान्त ही सम्पूर्ण करें तो आपका प्रयत्न अवश्य सफल हो।

श्री भैरव की शास्त्रों में वर्णित महिमा अपार है। तंत्रों में पृथक्-पृथक् आगमों की गणना में भैरवागम का विशेष स्थान है। शैवागम और रुद्रागम में भी भैरवागम का समावेश है। इनकी संख्या ६४ बताई गई है। आगम के चार पाद ज्ञान, योग, चर्या और क्रिया में सभी प्रकार की साधनाओं का समावेश हुआ है। १४ भैरवागम अद्वैत सिद्धान्त के प्रतिपादक हैं, इसके साथ ही भैरवाष्टक, यामलाष्टक, मताष्टक, मंगलाष्टक, शुक्राष्टक, बहुरूपाष्टक, वागीशाष्टक और शिखाष्टक—इन आठ अष्टकों में भी बटुक भैरव के विभिन्न नाम, रूप, गुण, कर्मादि के आधार पर भैरवोपासना का वर्णन किया है।

६४ तंत्रों में ५ से १२ तक की संख्या वाले तंत्र सिद्ध, कुण्डाल, काल, कालाग्नि, योगिनी, महाभैरव और शक्तिभैरव हैं और ये ऐहिक फल देने में उपयोगी बताये हैं।

वैसे सर्वत्र यह स्पष्ट है कि भगवती महाभैरवी हैं और भगवान् शिव महाभैरव हैं। अतः भैरव की उपासना से सर्वसिद्ध सुलभ है।

रुद्रयामल में कहा गया है—आपदुद्धारक श्री भैरव के सहस्त्र, दशसहस्त्र और अर्बुद नाम हैं। उन्हीं का सार-संगह करके १०८ नामों का संग्रह बनाने की भगवती पार्वती ने शिवजी से प्रार्थना की थी—

तस्य नाम-सहस्त्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च।
सारमुद्धृत्य तेषां वे नामाष्टशतक वद।।

तद्नुसार सर्वकामनाओं को पूर्ण करने वाला, सर्वपापहर, पुण्य, सर्वापतिनिवारक, साधकों को सुखप्रद और यशस्कर "अष्टोत्तरशतनामयुत भैरवस्तोत्र" कहा गया है। इससे यह स्पष्ट है कि इसमें आये हुए १०८ नाम भैरव अनन्तनामी।

अध्याय-४

भैरव-साधना के चरण

भैरव शिव का अवतार है और इनकें अवतरण के समय ही स्वयं ब्रह्मा, विष्णु और शिव ने इन्हें अनेक शक्तियां और अशीर्वाद प्रदान किये थे। यही कारण है कि भैरव अधिकांश देवी-देवताओं से ही नहीं, ईश्वर के नाना प्रकार के अवतारों से अधिक शक्तिशाली है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि शंकर का रुद्रावतार होने के कारण यह अपने साधकों की थोड़ी-सी सेवा, आराधना से ही प्रसन्न होकर उनके सभी मनोरथों की तत्काल पूर्ति कर देते हैं। इनके यंत्र को सम्मुख रखकर अथवा वैसे ही इनके मंत्रों की साधना भी बड़े पैमाने पर की जाती है। आराधना-उपासना की इन सभी विधियों में यद्यपि उपादानों तथा पूजा-पद्धतियों के दृष्टिंकोण से पर्याप्त अन्तर है।

भैरव-साधना साधक के जीवन का शृंगार है, उसके जीवन की परिपूर्णता है, क्योंकि बिना भैरव-साधना किये बिना उनकी शक्ति तत्व को अपने भीतर आत्मसात किये, साधक उच्चावस्था प्राप्त कर ही नहीं सकता।

एक बार मेरे गुरुजी ने हंसी के मध्य कहा था, "ये सब कहां से सीख लिया तूने, तुझे अनेक बार समझाया है, कि इन व्यवसायी तांत्रिकों के पास मत बैठा कर, जो चौबीसों घण्टे चिलम सुलगाते रहते हैं। ये बेचारे खुद भटके हुए हैं, तुझको क्या ठीक रास्ता बतलायेंगे?"

देवभूमि हिमाचल प्रदेश के प्रवास में उन्होंने मुझसे यह स्वीकार किया, कि अब तो तथाकथित वाममार्गी तांत्रिक तो केवल पंचमकारों को भोग करने के लिये ही ऐसा विचित्र वेश धारण कर लेते हैं, किन्तु वास्तविक वाममार्गी तांत्रिक तो केवल इन्हें अशुभ के प्रतीक के रूप में "धारण" करता है। उसके लिये ये क्रियायें केवल "तम" को प्रदान की जाने वाली भोज्य सामग्रियां मात्र ही होती हैं। वह स्वयं इनसे सर्वथा दूर ही रहता है।

मैंने स्वयं अनुभव किया, कि हालांकि गुरुजी के पास मांस-मदिरा की पता नहीं कहां से सदैव प्रचुरता रहती थी, किन्तु वह अपने निजी जीवन में दूध का प्रेमी होने के अतिरिक्त किसी भी नशीले पदार्थ या मांस-मछली को स्वयं कभी

ग्रहण करते थे। मैंने उनसे उनकी साधना पद्धति इत्यादि के विषय में जानने का बहुत प्रयत्न किया, किन्तु उन्होंने केवल इतना ही स्वीकार किया, कि वह एक सच्चे भैरव साधक हैं।

मैंने ऐसे भी भैरव साधक देखे हैं, जो कदाचित् पूर्वजन्म की साधनाओं के बल पर अथवा किसी अन्य संस्कार के कारण भैरव-साधना में हालांकि सफलता पा तो गये हैं, किन्तु नीचपन पर उतरकर उसका प्रयोग इस प्रकार करते हैं, जैसे वे स्वामी हों और भैरव उनके सेवक। इन साधकों का परिणाम भी मैंने देखा है, किन्तु गुरुजी भैरव की तामसिक रूप में साधना करते हुए भी कितने सौम्य थे।

कालान्तर में जब मैं दीक्षित हुआ, तब मैंने एक अवसर पर उनको अपने इस संस्मरण के विषय में बताया। गुरुदेव ने स्वीकार किया, कि हालांकि भैरव-साधना की एक पद्धति शुद्ध "तामसिक" है, जोकि सारी विघ्न-बाधाओं को इतनी कठोरता से समाप्त कर देती है, कि उसके समक्ष विश्व का कोई भी वेग ठहर ही नहीं सकता, किन्तु दुर्भावनावश इसका प्रयोग अनाधिकारी तांत्रिकों द्वारा किये जाने के कारण इसका रहस्य कोलाचार्यों ने लुप्त ही कर दिया था। यों भी अब साधकों के भीतर शायद वह मानसिक क्षमता ही नहीं रह गई है, जिससे वे तमोगुण को सहन कर सकें।

सच्चे भैरव साधक को साक्षात् शिव मानने का कारण है कि अपने आराध्य देव की ही भांति विष को पचाने की सामर्थ्य रखता है, न कि नशे, स्त्री और कच्चे मांस के टुकड़ों को।

प्रत्येक तंत्र साधना के लिये एक निश्चित यंत्र और शुभ मुहूर्त होता है, उसी में वह साधना सम्पन्न की जाती है। साधना के समय होने वाले आकाशीय शकुन और अनुभव साधना को सफलता या रुकावट बतलाते हैं, साधना में जो विधि मुख्य है, उसके भाग हैं—पूजन, संकल्प, न्यास, जप, क्षमा याचना, निसर्जन आदि।

तंत्र-मंत्र साधना के मध्य आह्वाहनीय अग्नि साधक के शरीर में प्रज्ज्वलित होती है, मंत्र को देवता का आभास होता है, देवता शरीर में आवेशित होता है, ध्यान देवता पर फिर संकल्प पर केन्द्रित होता है तब शरीर कमान की तरह तन जाता है, केवल साधना का विचार ही हृदय में रह जाता है, ध्यान की पराकाष्ठा होती है और कुम्भक लग जाता है, उस समय जो विचार आता है, वह शून्य से स्थूल रूप धारण करके परालौकिक माध्यम से साधना कार्य सम्पूर्ण कराता है। इस समय साधक पर मंत्र का देवता का भाव आया होता है। शरीर में संकल्प के अनुकूल प्रतिक्रिया प्रारम्भ ही हो जाती है, इस अनुभव को स्मृति मस्तिष्क में लिखा जाता है। इसे ही साधना में सफलता कहा गया है।

साधक को किसी भी साधना के मार्ग में उतरने से पहले कुछ मूलभूत बातों पर विचार कर लेना चाहिये। तंत्र-मार्ग में सबसे पहले कर्म-साधना में कर्म को प्रधानता देकर साधक में संस्कार भरने का प्रयत्न किया जाता है और इसी बात को मानकर कर्म को जीवन-मुक्ति का कारण माना गया है। इसके बाद ज्ञान-साधना में ज्ञान-प्राप्ति की प्रमुखता रहती है। साधक ज्ञान के माध्यम से मुक्ति की कामना करता है। इसके उपरान्त योग आता है।

योग का तात्पर्य है स्वयं को आदि तत्व में लीन कर देना। योग-साधना में साधक और साध्य के बिलगाव को योग की युति द्वारा संयुक्त कर परस्पर तारतम्य स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है।

इसके बाद भक्ति आती है जिसमें श्रद्धा, विश्वास शुद्धता व पवित्रता के साथ-साथ सदाचार भी सम्मिलित है। निराकार या साकार के साधकों, दोनों भक्तों की भक्ति निष्काम है।

तंत्र-साधना में आडम्बर, पाखण्ड या दिखावे आदि का स्थान नहीं है, इसमें अहं भाव तथा वासनादि भी नहीं है, इसमें कथनी व करनी में कोई अन्तर नहीं है, यहां केवल सदाचार ही सदाचार है।

प्रिय पाठकों ! मानव-शरीर इतना रहस्यमय है, कि हजारों वर्षों से योगी व तांत्रिक इसके रहस्य को समझने का प्रयास कर रहे हैं और हरेक बार यही अनुभव होता है कि अभी बहुत-कुछ समझना है। फिर भी खोजकर्त्ताओं का यह प्रयत्न रहा है कि वह अधिक से अधिक इस विषय में ज्ञान अर्जित करें और अपने ज्ञान का अनुभव आने वाली पीढ़ी को दें।

आप स्वयं देखें मानव-मन दो भागों में विभक्त है—अन्तर्मन एवं ब्राह्मण। हम इसे अन्तश्चेतना तथा बहिश्चेतना भी कह सकते हैं। इसमें अन्तश्चेतना सदैव सक्रिय शुद्ध एवं निर्मल बनी रहती है। मानव जो भी दैनिक कार्य व्यवहार अपनाता है, उसकी प्रेरणा में बहिश्चेतना की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, अन्तश्चेतना की नहीं, क्योंकि अन्तश्चेतना मानव को विशुद्ध मानव बनाये रखने में सहायक होती है।

जब अन्तर्मन और ब्राह्मण परस्पर जुड़ जाते हैं तो इन दोनों को जोड़ने की क्रिया ही "क्रिया योग" कहलाती है। इस दशा में अर्थात् दोनों मन जुड़ने की प्रक्रिया में व्यक्ति एक दिव्य प्रकाश की अनुभूति अपने भीतर अनुभव करने लगता है, जिससे उसके तनाव समाप्त होने लगते हैं। उसे आनन्द की अनुभूति होने लगती है और वह समझ लेता है, कि वास्तविक सुख उसके भीतर उपस्थित है, जिसे कहीं बाहर से नहीं लाना है।

हमारे धर्म के मूलाधार ग्रन्थ ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर उपासना शब्द का

उपयोग हुआ है। वेदों में उपासना शब्द का प्रयोग साथ रहने के रूप में प्रयुक्त हुआ है। आप स्तम्बधर्मसूत्र में उपासना का अर्थ "सेवा" है तो "गौतमधर्मसूत्र" में उपासना का अर्थ "प्रणाम" करना है। गीता में उपासना शब्द को "भक्ति" के. अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। रामायण में उपासना का अर्थ "समीप रहना" है मनुस्मृति में उपासना का अर्थ "ध्यान" है। इस प्रकार "उपासना" अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। साधना से सम्बन्धित शब्दों और क्रियाओं का विवेचन करने वाले प्राचीन प्रामाणिक ग्रन्थ "अमरकोष" के अनुसार—

"पूजा नमस्या पचितिः सपर्याचर्हणाः।
समःवरिवस्या तु शुश्रुषा परिचर्याप्युपासना।।"

यह श्लोक है।

आपके हृदय में यह भाव अवश्य ही आ रहे होंगे, हम भैरव-साधना ही क्यों करें जबकि हमारे यहां तैंतीस करोड़ देवी-देवता हैं। फिर भैरव देव की ही साधना क्यों की जाये। ये ऐसे प्रश्न हैं जो आपके हृदय में उठ सकते हैं। जहां तक अन्य देवों के स्थान पर भगवान भैरव को प्रमुखता देने का प्रश्न है—भैरव शिव के अवतार हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और स्वयं शिव से अनेक वरदान प्राप्त होने के कारण अत्यधिक तेजस्वी और सर्वशक्ति-सम्पन्न हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि यह शंकर और उनके अवतार हनुमान से भी शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। थोड़ी साधना से ही प्रसन्न होकर साधक की सभी मनोकामनाओं की तत्काल पूर्ति कर देने वाले हैं।

जहां तक भैरव की साधना की विधियों को प्राथमिकता देने का प्रश्न है कारण एकदम स्पष्ट है। वर्षों की कठोर साधना तो आज संभव ही नहीं, यज्ञ और हवन करना भी सहज नहीं रहा। आज लकड़ी का एक टुकड़ा प्राप्त करने के लिये भी जहां जीवित हरे-भरे वृक्षों की हत्या करनी पड़ती है और यज्ञ और हवन के लिये शुद्ध वस्तुओं की प्राप्ति जटिल बन चुकी है, वहां यज्ञ तो क्या हम नित्य हवन करने की कल्पना भी नहीं कर सकते। सबसे बड़ी बात तो यह है कि यज्ञ, हवन, भरपूर दान अथवा सभी लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करते हुए मूर्ति को नित्य सजाना-संवारना, आज सामान्य ग्रहस्थ के लिये संभव नहीं। अगर भ्रष्टाचार और बेईमानी से धन अर्जित कर ये कार्य किये जायेंगे तब हम प्रभु की प्राप्ति तो क्या, उसकी सामान्य कृपाओं को भी प्राप्त नहीं कर सकेंगे क्योंकि शुद्ध आत्मा और पवित्र मन-मस्तिष्क के अभाव् में की गई कोई भी साधना ढोंग तो हो सकती है, देवता की सच्ची साधना कदापि नहीं।

आज का साधक अपनी शान्ति खो चुका है और परिवार के भीतर तनाव है। समाज में हिंसा का बोलबाला है। इन सभी संतापों का मूल कारण है असन्तोष जिसने साधक

को पशु बना दिया है। आखिर मार्ग मिलेगा भी कैसे, एकमात्र मार्ग है—साधना—ईश प्रारम्भ में हम मूर्ति-पूजा करते हैं, साधना में विविध उपादानों के साथ-साथ सम्पूर्ण कर्मकाण्ड और मंत्रों के प्रयोग करने पड़ते हैं। जब आराधक और भगवान में पूर्ण तारतम्य स्थापित हो जाता है तब हमारी अराधना में से लौकिक वस्तुयें तो हट जाती थीं।

अब मैं भैरव-साधना का श्रीगणेश कर रहा हूं। आप सर्वप्रथम भैरवनाथ की मूर्ति या चित्र के सम्मुख बैठकर उनकी पूजा-आराधना करना। मन्दिर में नियमपूर्वक जाकर अथवा घर पर ही नित्य निश्चित समय पर भैरव के विग्रह का विविध प्रकार से श्रृंगार करना, भोग लगाना, आरतियों और भजनों का गायन साधना के प्रथम चरण हैं। यह सामान्य साधना के अन्तर्गत आते हैं। यह साधना प्रारम्भ में उसी प्रकार अनिवार्य है जिस प्रकार बालकों को अक्षर ज्ञान के लिये पढ़ाना। जब बालक अक्षरों को पहचानना सीख जाता है तब वह अक्षर और शब्द जोड़-जोड़कर बड़ी-बड़ी पुस्तकें भी आराम से पढ़ लेता है, यही सिद्धान्त साधना-मार्ग में भी लागू होता है। भैरव-साधना में मंत्रों का स्तवन आवश्यक है। स्वास्ति-वाचन इस प्रकार है—

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषाः विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोवृहस्पतिर्दधातु ।। १।। ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।। २।। ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः शनप्त्रेस्थे विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसिविष्णवेत्वा ।। ३।। ॐ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रोदेवता दित्यादेवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता वृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता।। ४।। ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथ्वीशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्तिर्विश्ववेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शांतिसर्व शांतिः शान्तिरेव शांतिः सामाशांतिरोध। ॐ विश्वानिदेव सवितर्दुरि तानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव। शान्तिर्भुवतु ।। ५।।

"स्वास्तिवाचन" के पश्चात् आगे लिखे मंत्र का उच्चारण करते हुए जल से आचमन करें तथा अपने मस्तक पर तीन बार जल छिड़कें। तत्पश्चात् दोनों हाथों को धो लें।

ॐ केशवाय नमः स्वाहा।
ॐ नारायणाय नमः स्वाहा।
ॐ माधवाय नमः स्वाहा।

साधना करते समय किसी भी वस्तु का मूल रूप से प्रयोग नहीं किया जाता,

अतः आप व्यावहारिक रूप में न तो आचमन करेंगी, न सिर पर पवित्र जल छिड़केंगी और न ही हाथ धोयेंगी। केवल सुखासन की मुद्रा में बैठे रहेंगे और केवल मंत्रों का उच्चारण ही करेंगे, वह भी मन ही मन।

ॐ अपवित्रः पवित्रे वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत पुण्डरीकाक्षं सः स्वाहाभ्यशुन्तरे चिः।।

उक्त मंत्र का उच्चारण करते हुए भावनात्मक रूप में अपने सिर पर तीन बार जल छिड़ककर आचमन करें तथा हाथ धो लें। "पवित्रीकरण" के उपरान्त भूत-शुद्धि की क्रिया की जायेगी—

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधेन जपकर्म समारभे।।

लौकिक वस्तुओं और आराध्य भैरव की मूर्ति सम्मुख रखकर साधना करते समय ही पूजन सामग्री का प्रयोग किया जाता है। मानसिक उपासना करते समय कोई वस्तु हमारे पास नहीं होती। अतः अन्य क्रियाओं के समान ही भूत-शुद्धि के बाद गणेशजी का ध्यान करते समय भी केवल मंत्र ही पढ़े जायेंगे। गणेश जी के ध्यान में इन मंत्रों का पाठ करें—

ॐ सुमुखश्चैकदन्तच कपिलोगजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायक।।
धूम्रकेतर्गणाध्यक्षो भालाचन्द्रो गजननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि।।
विद्यारम्भ विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।।

संकल्प वाक्य का अर्थ प्रभु-चरणों में परिचय है। संकल्प के इन वाक्यों का उच्चारण ही करेंगे—

"हरिः ॐ तत्सत्। नमः परमात्मने श्री पुराणपुरुषोत्तमाय श्रीमद्भगवंते महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याद्य ब्राह्मणो द्वितीय प्रहरार्धे श्रीश्वेत वाराहकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे जम्बूदीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्य्यवर्तान्तर्गत क्षेत्रे सृष्टिसंवत्सराणांमध्ये 'अमुक' नाम्नि संवत्सरे,'अमुक' अयने, 'अमुक' ऋतौ, 'अमुक' मासे, 'अमुक' पक्षे, 'अमुक' तिथो, 'अमुक' नक्षत्रे, 'अमुक' योगे, 'अमुक' राशिस्थे सूर्ये, चन्द्रे, भौमे, बुधे, वृहस्पतौ, शुक्रे, शनौ, राहो, केतौ एवं गुणविशिष्टायां

तिथौ, 'अमुक' गोत्रोत्पन्न 'अमुक' नाम्नि शर्मा (वर्मा आदि) ऽहं धर्मार्थकाममोक्षहेतवे श्रीगणपत्यादि सह श्री भैरव देवस्य पूजनमहं करिष्यते।"

उक्त संकल्प वाक्य में जहां-जहां 'अमुक' शब्द आया है, वहां क्रमशः विद्यमान संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, नक्षत्र, योग, दिन, सूर्यादि नवग्रहों कि स्थिति वाली राशियों के नाम, अपने गोत्र तथा अपने नाम का उच्चारण करना चाहिये। ब्राह्मण को "शर्माअहं", क्षत्रिय को "वर्माअहं", वैश्य को "गुप्तोअहं तथा शूद्र को "दासोअहं" शब्द का उच्चारण नाम के साथ करना चाहिये।

अब आप भैरव के जिस रूप क़ी भी साधना कर रहे हैं उसी रूप का हृदय में ध्यान धरकर, मन की आंखों से उन्हें अपने निकट अनुभव करते हुए करें भैरव के ध्यान के मंत्रों का स्तवन।

प्रणवं कामदं विद्याल्लज्जाबीजं च सिद्धिदम्।
बटुकामेति विज्ञेयं महापातक नाशम्।।१।।

उद्यद्भास्कर सन्निभं त्रिनयनं रक्तांगरागस्त्रजं।
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।।
नीलग्रीवमुदार कौस्तुभधरं शीतांश चूडोज्जवलं।
बंधू कारुणवाससं भयहरं देवं सदाभावयेत्।।२।।

नमो भैरव रूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो भद्रस्वरूपाय जगदाद्य नमो नमः।।३।।

वन्दे बालं स्फटिक सदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्ग।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किंकिणीनूपुराद्यैः।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं।
हस्ताग्राभ्यां बटुक सदृशं शूलदंडौपधानम्।।४।।

करकलित कपालः कुंडलीदंडपाणि।
स्तरुणतिमिरनीलो ब्याल यज्ञोपवीती।
कृतुसमयसपर्याविघ्नविच्छेदहेतु
जयंति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम्।।५।।

अब आप भैरव की साधना प्रारम्भ कर चुके हैं। आपका ध्यान केन्द्रित हो चुका है। भैरव के सभी रूपों में से किसी भी रूप की साधना आप पूर्ण करेंगे।

भैरव शिव के रोद्रावतार हैं और उनके बारह में से अधिकांश रूप में ही हैं। परन्तु बटुक भैरव के रूप में तो विष्णु के समान ही आप पूर्ण सात्त्विक ही हैं। इस मंत्र द्वारा भी आप आह्वान कर सकते हैं—

वंदे बालं स्फटिक सदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्ग।
दिप्याकल्पैर्नवमणिमयैः किंकिणीनूपुराद्यैः।।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं।
हस्ताग्राभ्यां बटुक सदृशं शूलदंडोपधानम्।।

भैरव शिव के समान ही अंग अभूत लगाने वाले हैं। उनका एक रूप है, वहीं दूसरा राजसी रूप भी है। राजसी रूपों में भैरव के आह्वान का मंत्र इस प्रकार है—

उद्यद्भास्कर सन्निभं त्रियनयनं रक्तांगरागस्त्रजं।
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।।
नीलग्रीवमुदारभूषणंयुतं शीतांशुखण्डोज्ज्वलं।
बन्धू कारूणावाससं भयहरं देवं सदाभावये।।

अघोरी और तंत्र साधना करने वाले प्रायः ही भैरव के किसी रौद्र रूप की साधना करते हैं। श्री भैरव का आह्वान करने हेतु तामस ध्यान के इस मंत्र का वाचन किया जाता है—

ध्यायेन्नीलाद्रिकांतिं शशिकलधरं मुंडमालं महेशं।
दिग्वस्त्रं पिङ्गकेशं डमरूहस्त सृणिं खड्गपाशाभयानि।।
नागं घंटां कपालं करसरसिरुहैर्विभ्रतं भीमदंष्ट्रं।
दिव्याकल्पंत्रिनेत्रंमणिमयविलसत्किंकिणीनूपुराढ्यम्।।

इस प्रयोग को सम्पन्न करने पर निर्विचार मस्तिष्क की अवस्था आने लगती है, क्योंकि हमारे मस्तिष्क में एक सेकण्ड में लाखों विचार आकर चले जाते हैं, हम भविष्य के ताने-बाने इन विचारों से जोड़ते रहते हैं और इनका दुष्प्रभाव यह होता है कि कई बार हमारी साधना ना चाहते हुए भी खण्डित हो जाती है।

आपत्ति के समय दीपदान करना चाहिये। इन प्रयोगों के लिये तिथि नक्षत्र योग करण राशि सूर्यादि ग्रह विचार अपेक्षित नहीं है। इस सम्बन्ध में विस्तार से पात्र निर्माण वस्तु, दान, आकार घृत-तेलमान विर्तिकामना आधार भूमि नाशनार्थ अन्य देवपूजन व दीपदान की बातें हैं। कामना दृष्टि से कर्म का विधान है।

मुख्य रूप से भैरव, हनुमान, शीतला, दुर्गा, कार्तवीर्योजुंन देवों की प्रसन्नतार्थ किया जाता है। पौष मास में रविवार के दिन सूर्य के समक्ष दीपदान का महत्व है। कार्तिक मास में विष्णु की तुष्टि के वास्ते दीपदान होता है।

सूर्य, चन्द्र और अग्नि में तीनों तेजोमय देव कर्म साक्षी हैं। दीपदान के दो प्रकार हैं—

(१) पूजाराम्भ से पूर्व।

(२) पूजा समाप्ति उपरान्त।

ऋतु—वसन्तु, हेमन्त, शिशिर, वर्षा, शरद।

मास—बैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष पौष, माघ, फाल्गुन।

पक्ष—शुक्ल।

तिथि—१/२/३/५/६/७/१२/१३/१५

नक्षत्र—रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य तीनों उत्तरा, हस्त, स्वाति, विशाखा, ज्येष्ठा, श्रवण सौभाग्य शोभत प्रीति, सुकर्म, धृति, वृछि, हर्षण, व्यतीपात, वैघृत, उपयोगी हैं।

सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, संक्रान्ति, कृष्ण अष्टमी दुर्गात्सव, नवरात्रि महापर्व।

समय—प्रातः, सायं, मध्यरात्रि पूर्णाहुति से पूर्व, आंवले का चूर्ण, पीप पात्र, घृत या तेल, बत्तियां, आधार यंत्र, चावल, लाल चन्दन, कलश, सुपारी, अष्ट गंध, फल, कुमकुम, सिंदूर, लाल पुष्प, लाल वस्त्र, पंच गव्य, शलाका, वस्त्र, बिल्व पत्र, दक्षिणा, नैवेद्य, इत्र, पांच फूल, लकड़ी की बनी ८ कीलें, भैरव दंड, पके अक्षत, छुरी।

८ पल घृत का ८ पल धातु पात्र में दीप-दान करने से यात्रा निर्विघ्न होती है।

१० पल तेल से प्रतिदिन १० पल धातु के पात्र में ७ दिन तक दीपदान से लक्ष्मी सम्पन्न, राजा ऐश्वर्य पाता है।

१० पल मान वाले पात्र की ऊंचाई छः अंगुल हो, ३० तंतु से बनी बत्ती प्रयोग करें।

६ अंगुल की ऊंचाई वाले ११ पल के पात्र में १६ पल से दीपदान से ग्रह पीड़ा का निवारण होता है।

३२ पल के पात्र में १६ पल तेल से २४ तंतुओं की बनी बत्ती बनाकर दीपदान करने से मारण उच्चाटन कार्य होते हैं।

२० पल घृत से १५ पल के पात्र में ऊंचाई ६ अंगुल हो ऐसा दीपदान २० दिन देने से क्षय व अपस्मार रोग नष्ट होते हैं।

६ अंगुल की ऊंचाई वाले ३० पल के पात्र में ५० पल तेल का दीपदान देने से राज वश्य चोरी शान्त होती है।

३० पल के पात्र में १९ दिन तक प्रतिदिन तेल का दीपदान करने से कन्या-प्राप्ति के इच्छुक को भैरव कृपा से इच्छित कन्या प्राप्त होती है।

९ अंगुल की ऊंचाई वाले ६० पल से २४ अंगुल चौड़े पात्र में ७५ बत्तियों वाला दीपक जलाने से शत्रु नष्ट होते हैं।

९ अंगुल की ऊंचाई ५२ पल के पात्र में १०० पल तेल भरकर दीपदान से शत्रु नष्ट होते हैं। १६ अंगुल की ऊंचाई २४१ अंगुल चौड़ा तथा १०० पल के भार वाले पात्र में ३०० बत्तियों का दीपक भय नष्ट करता है।

१२ अंगुल की ऊंचाई, ३२ अंगुल की चौड़ाई १०० पल के भार वाले दीप में १००० बत्तियां जलाकर दीपदान से वृद्धि व आरोग्य की वृद्धि होती है।

नित्य दीप करने के लिये ३ पल का पात्र १ पल या ३ पल घृत व २१ तंतु की बत्ती उत्तम मानी है।

महान् कार्य हेतु स्वर्ण के वशीकरण में चांदी का या तांबे का, विद्वेषण में कांसे का, मारण में लोहे का, उच्चाटन में मिट्टी का, विवाद में गेहूं के आटे का, मुख स्तम्भन में मांस के चूर्ण का, शान्ति में मूंग के चूर्ण का, सन्धि में नदी के किनारों की मिट्टी का, दीप दो पल पतीला का होता है।

पात्र-रचना—पात्र की रचना में द्रव्य के मान से गुरुता व लघुता का निर्णय करना चाहिये—

छः अंश की गहराई, १६ अंश की गोलाई, ६ अंगुल की ऊंचाई और ऊपर से १६ अंगुल की चौड़ाई वाला पात्र बनाना चाहिये।

घृत तेल के तौल से पात्र का भार—

घृत या तेल यदि	१०,००० पल हो तो ५०० पल का पात्र
घृत या तेल यदि	३००० पल हो तो १२५ पल का पात्र
घृत या तेल यदि	२००० पल हो तो १२५ पल का पात्र
घृत या तेल यदि	१००० पल हो तो ३०० पल का पात्र
घृत या तेल यदि	१०० पल हो तो ५२ पल का पात्र
घृत या तेल यदि	७५ पल हो तो ६० पल का पात्र
घृत या तेल यदि	५० पल हो तो ३० पल का पात्र
घृत या तेल यदि	३० पल हो तो २० पल का पात्र
घृत या तेल यदि	२० पल हो तो १६ पल का पात्र
घृत या तेल यदि	१० पल हो तो २ पल का पात्र
घृत या तेल यदि	११ पल हो तो ३ पल का पात्र

घृत तेल के दीपक—

(१) गोघृत सर्वसिद्धिकारक है।
(२) मारण में भैंसे के दूध का घृत।
(३) विद्वेषण में ऊंटनी के दूध का।
(४) शांति में भेड़ के दूध का।
(५) उच्चाटन में बकरी के दूध का।
(६) स्वार्थसिद्धि में तिल का तेल।
(७) मारण में सरसों का तेल।

मुख-रोग में फूलों से बने तेल का दीपक जलायें—

कामना भेद से घी या तेल का तौल।

(१) कैद से छूटने के लिये ३ हजार पल।
(२) राज्य-प्राप्ति हेतु १० हजार पल।
(३) नष्ट वस्तु प्राप्ति हेतु १ हजार पल।
(४) सर्वकार्यसिद्धि हेतु १ हजार पल।
(५) सिंह-बाघ-सर्प रक्षार्थ ३०० पल।
(६) शत्रु-नाश के लिये २०० पल।
(७) शत्रु-पराजय के लिये ७५ पल।
(८) चोर-भय शांति ५० पल।
(९) कन्या-प्राप्ति के लिये २१ दिन, प्रतिदिन ३० पल।
(१०) रोग-निवृत्ति के लिये १४ दिन, प्रतिदिन ३० पल।

(११) सामान्य रोग-निवृत्ति के लिये १ दिन, प्रतिदिन ३० पल।
(१२) चोर-नाश में २० पल।
(१३) भूत-प्रेत-पिशाच हेतु २५ पल।
(१४) गृह-पीड़ा हेतु १६ पल।
(१५) राज वशीकरण हेतु ७ दिन तक प्रतिदिन १० पल।
(१६) प्रस्थान के लिये ८ पल।
(१७) नित्य पूजा में १ पल या आधा पल गौ या भैंस का घी।

बत्ती—ये दीपक की बत्तियां सूत या डोरे की बनती हैं। डोरे को ३ बार धोकर क्रमशः वशीकरण में श्वेत, विद्वेषण में पीत, मारण में हरा, उच्चाटन में केसरिया। स्तम्भन में काला व शांति में चितकबरा रंग लें तथा रंग न मिले तो सफेद सूत से बत्ती बनायें। फिर उस सूत के १५/२०/३०/४०/५०/१०८/१००० तंतुओं की बत्ती बनायें। ये तन्तु इकाई की संख्या में से नित्य दीप में ४२/१२/११ या विषय संख्या ही लें।

१६ अंगुल लेबी सुवर्ण, चांदी उटुम्बर व उत्तम दिखने वाली सीधी, आगे से तीखी, मध्य में त्रिशूल से अंकित, मूल में स्थूल हो। यह शलाका दीपपामन्त्र के दाहिने भाग में हो।

दीप स्थापना—

इस यंत्र का स्वरूप वर्णमाला एवं कुछ बीजमंत्रों के लेखन से तैयार किया जाता है। वहीं कलश के नीचे रखा जाता है। इसके अभाव में दीपक के नीचे त्रिकोण, वृत्त व षट्कोण बनाकर उस पर अक्षत चढ़ाकर स्थापना करें।

पूर्व दिशा में	—	सर्वसुख
पश्चिम में	—	स्तम्भन, उच्चाटन, रक्षण, विद्वेषण में
उत्तर में	—	लक्ष्मी-प्राप्ति
दक्षिण में	—	मारण

दीप स्थापन के समय असत्य भाषण न करें। ब्राह्मण का आगमन आदि शुभ है। म्लैच्छ, बिल्ली, चूहे का आना अशुभ। दीप की ज्वाला सीधी शुभ उत्तम, तिरछी, धूम्रयुक्त, काली चर, चर शब्द वाली तत्काल बुझ जाने पर, दीप पात्र ढुलक जाने, घृत या तेल झरने पर अशुभ समझें।

आराधना-साधना के मंत्र

श्री भैरव के किसी भी रूप की साधना की जाये अथवा उनके किसी मंत्र की साधना का महत्व होता है, बाह्य उपादान तो समर्पण को प्रकट करने के लिये हैं। सर्वप्रथम आप प्रार्थना करेंगे—

तीक्ष्ण दंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसी।।

इसके बाद आप मंत्र द्वारा उनसे और अधिक निकट आने की प्रार्थना करेंगे और तब दूसरे मंत्र के स्तवन द्वारा उनसे बैठने के लिये प्रार्थना करेंगे—

आयाहि भगवान रुद्रो भैरवः भैरवीपते।
प्रसन्नोभव देवेश नमस्तुभ्यं कृपानिधि।।

उक्त मंत्र द्वारा श्री भैरव का आह्वान करने के पश्चात् उन्हें "आसन" प्रदान करने के हेतु निम्नलिखित मंत्र का उच्चारण कीजिये—

भूतेश्वर गणाध्यक्षो भगवान् मुण्डमालिनः।
आसनन्दिव्यमीशान दास्येऽहन्तुभ्यमीश्वरम्।।

अब आप इस श्लोक का पाठ कीजिये—

रुद्रो बटुक भूतीशो भूतनाथः प्रजापतिः।
पाद्यं गृहाणमद्दत्तं बीरवंधो दयाकरः।।

अर्घ्य अर्पण का मंत्र निम्न है—

कालीशः कालिकाकान्तः कालिकानन्दवर्धनः।
अर्घ्य गृहाण देवेश साम्ब सर्वार्थदायक।।

"अर्घ्य" के पश्चात् "आचमनीय" के रूप में पृथ्वी पर जल का निक्षेप करें—

घोर नादो घनः श्यामो घनस्वामी घनातकः।
गृहाणाचमनीयं च पवित्रोदक कल्पितम्।।

गोदुग्ध, दही, घी, शहद, शर्बत और अन्त में शुद्ध जल और इस श्लोक के स्तवन द्वारा उन्हें स्नान कराया जाता है—

मधुरं गोपयः पुण्यं परपूतं पुरस्कृतम्।
स्नानार्थ देवदेवेश गृहाण परमेश्वर।।

भैरव को "दधि स्नान" कराइये—

दुर्लभन्दिविसुस्वाद दधि सर्व प्रियम्परम्।
तुष्टिउम्भैरवीनाथ स्नानाय प्रतिगृह्यताम्।।

अब घृत से स्नान करायें—

घृतं गव्यं शुचि स्निग्धं सुसेव्यं पुष्टिदायकम्।
गृहाण कालिकानाथ स्नानाय चन्द्रशेखर।।

अब आप मधु स्नान कराइये—

मधुरं मृदु मोहध्नं स्वाभंग विनाशनम्।
महादेवे दुगुत्सृष्टं तव स्नानाय भैरव।।

इसके पश्चात् शर्करा स्नान कराया जायेगा—

तपशान्तिकारी शीरा मधुरास्वाद संयुता।
स्नानार्थ देवदेवेश शर्करेयं प्रदीयते।।

अन्म में शुद्ध जल से स्नान करायें—

गङ्गागोदावरी रेवा पयोष्णी यमुना तथा।
सरस्वत्यादि तीर्थानि स्नानार्थ प्रतिगृह्यताम्।।

वस्त्र, यज्ञोपवीत और गंध का अर्पण—

भैरव को स्नान कराने के पश्चात् वस्त्र और यज्ञोपवीत अर्पित किये जायेंगे और फिर भैरव के मस्तक पर चंदन और सम्पूर्ण शरीर पर भस्म लगाई जायेगी। वस्त्र समर्पण के लिये आप इस मंत्र का पाठ करेंगे—

वस्त्राणि पट्टकलानि विचित्राणि नवानि च।
भयानीतानि देवेश प्रसन्नोभव भैरव।।

वस्त्र समर्पित करने के पश्चात् जनेउ समर्पित करें।

रजतंताम्रं कार्पासस्य तथैव च।
उपवीतम्मया दत्तं प्रीत्यर्थ प्रतिगृह्यताम।।

यज्ञोपवीत के पश्चात् निम्नलिखित मंत्र का उच्चारण करते हुए गंध अर्थात् चंदन का तिलक समर्पित करें। भैरवदेव को लाल चंदन एवं सिन्दूर समर्पित करने का विधान है—

सर्वेश्वर जगद्वन्द्य दिव्यासन समास्थित।
गंध गृहाण देवेश चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

भैरवदेव भी भगवान शंकर के समान सम्पूर्ण शरीर पर भस्म लपेटते हैं, अतः गंध अर्थात् चन्दन अर्पित करने के पश्चात् अग्रलिखित मंत्र का उच्चारण करते हुए "भस्म" समर्पित करें—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायषं . तन्नो ऽअस्तु त्र्यायुषम्।।

तिलक के ऊपर चन्दन, चावल भी चिपका दिये जायें। भैरवदेव को अक्षत भी अर्पित करेंगे—

अक्षतांश्च सुरश्रेष्ठ शुभ्राधूनाश्च निर्मलाः।
मयानिवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर।।

भैरव पूजन में आक, कनेर तथा धतूरे के पुष्प एवं लाल रंग के गुड़हल आदि के पुष्प चढ़ाने चाहियें। पुष्प अर्पण का मंत्र है—

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयाऽहृतानि पूजार्थ पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम्।।

पुष्प और पुष्पमाला समर्पण के पश्चात् निम्नलिखित मंत्र का स्तवन करते हुए "धूप" दीजिये—

वनस्पति रसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोयं प्रतिगृह्यताम्।।

धूप के पश्चात् इस मंत्र का उच्चारण करते हुए दीपक जलाइये—

साज्यं च वर्ति संयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्।।

भैरवदेव जी से नैवेद्य स्वीकार करने के लिये प्रार्थना करें—

अपूपानि च पक्वानि मण्डका वटकानि च।
पायसं सुपमन्नं च नैवेद्यम्प्रतिगृह्यताम्।।

आप अब उन्हें जल पिलायेंगे और इस मंत्र का स्तवन भी करेंगे—

पानीयं शीतलं शुद्ध गाङ्गेयंमहदुंत्तनम्।
गृहाणपार्वतीनाथ तव प्रीत्या प्रकल्पितम्।।

निम्नलिखित मंत्र का उच्चारण करते हुए करोद्वर्तन समर्पित करें—

कर्पूरादीनि द्रव्याणि सुगन्धीनि महेश्वर।
ग्रहाण जगतन्नात करोद्वर्तन हेतवे।।

निम्नलिखित मंत्र का उच्चारण करते हुए अब "फल" समर्पित करेंगे—

कूष्मण्डं मातुलिङ्गञ्ज नारिकेल फलानि च।
ग्रह्वातु जगन्नाथ विशिष्टो खेटक प्रिय।।

पाप आप निम्न मंत्र द्वारा प्रस्तुत करते हैं—

पुङ्गीफलम्महद्द्रव्यं नागवल्लीदलैर्यूतम्।
गृहाण देवदेवेश द्राक्षादीनि गणेश्वरः।।

अब प्रारम्भ होता है आरती उतारने और पुष्पांजलि समर्पित करने की प्रक्रिया। यह इस मंत्र के द्वारा किया जाता है—

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीज समन्वितम्।
पंचरत्नं मयादत्तं गृहतां लोक वल्लभः।।

द्रव्य समर्पण के पश्चात् भगवान भैरव की आरती उतारी जाती है—

अग्निर्ज्योतिरविर्ज्योति ज्योतिर्नारायणोविभुः।
नीराजयामि देवेशं पञ्चदीपे सुरेश्वरं।।

आरती के बाद फूल चढ़ाये जाते हैं। इस प्रक्रिया को पुष्पांजलि कहा जाता है। अब निम्न मंत्र बोलेंगेः—

देवो दैत्येश्वरो वीरो वीरवंधो दवाकरः।
पुष्पांजलि गृहाणेश भूतेश्वर नमोस्तुते।।

प्रणाम के लिये यह मंत्र बोलें—

पार्थिवः पार्थ संपूज्यः पार्थदः प्रणतः प्रभुः।
पृथिवीशः पृथातुन्दः धरणीनायको नमः।।
यानि कानि च पापनि जन्मान्तर कृतानि च।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिणां पदे-पदे।।

इसके पश्चात् आरतियों, भजनों और विनतियों का गायन किया जाता है, परन्तु मानसिक उपासना के बाद मंत्रों, स्तोत्रों, कवचों और सहस्त्रनाम आदि का मन ही मन अथवा अत्यन्त मन्द स्वर में जप करने का भी विधान है।

प्रिय पाठकों! यह सब-कुछ "रुद्रयामल तंत्र" नामक ग्रन्थ में दिया हुआ है। इसके अतिरिक्त एक-दो तंत्र ग्रन्थों में भी यह सम्मिलित है। अतः इन प्राचीन ग्रन्थों को आधार मानते हुए मैंने इसे शुद्ध रूप में इस पुस्तक में प्रस्तुत किया है।

श्री भैरव के तीन रूप हैं। मैं इन तीनों रूपों का ध्यान-मंत्र प्रस्तुत कर रहा हूं। अपनी इच्छा के अनुसार भैरव के सात्त्विक, राजसी अथवा तामसिक रूप जिनका वर्णन आगे किया गया है—का ध्यान एकाग्रचित्त होकर करें।

सात्त्विक ध्यान—

वन्दे बालं स्फटिक-सदृशं कुण्डलोद् भासिताङ्गं।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणी-नूपुराद्यैः।।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं।
हस्ताग्राभ्यां बटुकसदृशं शूलदण्डोपधानम्।।

सफेद स्फटिक के समान वर्ण, कुण्डलों से युक्त सुन्दर सुशोभित मुख, दिव्य शब्द करने वाले मणिजड़ित करधनी तथा नूपुरों को धारण करने वाले, तेजस्वी, प्रसन्न-

वदन, त्रिनेत्रधारी, दोनों हाथों में शूल और दण्ड धारण करने वाले बालक रूप भगवान बटुक को मैं प्रणाम करता हूं। इस रूप से आये आरोग्य ऐश्वर्यवृद्धि-चतुवर्ग धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष फल-प्राप्ति, अकाल मृत्यु-निवारण होता है।

राजस ध्यान—

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्तांगरागस्रंजं।
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।।
नीलग्रीवमुदारभूषयुतं शीतांशुखण्डोज्ज्वलं।
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये।।

उगते हुए सूर्य के समान त्रिनेत्रधारी, लाल वर्ण के अंगराग तथा माला से शोभित, प्रसन्न मुख, वरदाता, हाथों में कपाल तथा शूल को धारण करने वाले, नीलकण्ठ, अनेक प्रकार के आभूषणयुक्त, चन्द्रकला से विभूषित, मुग्गुल के पुष्प के समान लाल रंग के वस्त्रधारी, भयहारी का मैं ध्यान करता हूं। इस रूप से धर्मार्थ, कार्य की सिद्धि की प्राप्ति होती है।

तामस ध्यान—

वन्दे नीलाद्रिकान्तं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं।
दिग्वस्त्रं पिंगकेशं डमरुमय सृणिं खड्गपाशाभयानि।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्बिभ्रतं भीमदंष्ट्रं।।
दिव्या कल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत् किङ्किणीनूपुराढ्यम्।।

नील पर्वत के समान नील वर्ण वाले, चन्द्रकलाधारी, मुण्डमालाधारी, शंकर, दिगम्बर, दिव्यवस्त्रधारी, घुंघराली पीली जटा धारण करने वाले, अपने आठ हाथों में डमरू, अंकुश खड्ग, पाश, अक्षय, नाग, घण्टा, कपाल रूप आयुधो को धारण करने वाले, भयानक दाढ़ों वाले त्रिनेत्र, नाना मणियों से जड़ित करधनी एवं नूपुरधारी भैरव का ध्यान करता हूं। इससे शत्रुओं का दमन, भूत-प्रेतादि बाधा निवारण, तांत्रिक प्रयोगों से रक्षा करने हेतु किया जाता है।

श्री भैरवनाथ को किस दिन किस वस्तु, पदार्थ को भोग लगाना है। यह भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आप वार के अनुसार प्रसाद इस प्रकार रखें—

रविवारे पायसान्नं सोमवारे च मोदकम्।
भौमे गुडाज्यगोधूमा बुधे च दधिशर्करा।।
गोधूमपूरिका युक्ता घृतमध्ये सुपाचिता।
गुरौ चणकखण्डाज्यं केवलं चणक भृगौ।।
शनौ माषान्ततैलं च इति वारबलिः क्रमात्।।

साधना के दिनों में श्री भैरव की पूजा करके नैवेद्य अर्पित करना चाहिये। यह नैवेद्य प्रत्येक बार के लिये पृथक्-पृथक् होता है। यथा रविवार को पायसान्न दूध की खीर अथवा खीरान्न, सोमवार को मोदक (गेहूं के आटे का बना हुआ अथवा खोए का), मंगलवार को—गुड़ एवं घी से बनी हुई गेहूं की लपसी। बुधवार को—गेहूं की शुद्ध घी में तली हुई पूरी और दही-बूरा। गुरुवार को— चने के आटे (बेसन) के लड्डू। शुक्रवार को—भुने हुए चने अथवा कच्चे मलाये हुए चने। शनिवार को माप (उड़द) के बड़े तेल में तले हुए। इसके अतिरिक्त श्री भैरव को जलेबी, इमरती, सेव, भजिये, तले हुए पापड़ का भी नैवेद्य लगाया जाता है। तंत्रार्क में अन्यत्र विभिन्न कर्मों की सिद्धि के लिये भिन्न-भिन्न वस्तु के नैवेद्य का भी विधान है।

अन्त में इतना ही श्री भैरवनाथ भगवान रुद्र के अशंयवतार हैं। एक स्थान पर वह स्वयं कहते हैं—

अणोरणीयानहमेव तद्वन्महानहं विश्वमहं विचित्रम्।
पुरातनोऽहं पुरुषोऽहमीशो हिरण्मयोऽहं शिवरूपमस्मि।।
वेदैरनेकैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्।
न पुण्यपापे मम नास्ति नाशो न जन्म देहेन्द्रियबुद्धिरस्ति।।

मैं अणु से भी अणु हूं, इसी प्रकार मैं महान् से भी महान् हूं, यह विचित्र विश्व मेरा ही रूप है। मैं पुरातन पुरुष हूं। मैं ईश्वर हूं, मैं हिरण्मय पुरुष ब्रह्मा हूं, मैं शिवस्वरूप हूं। समस्त वेद मेरा ही ज्ञान कराते हैं, मैं ही वेदान्त का कर्त्ता हूं, वेदवेत्ता भी मैं ही हूं। मुझे पुण्य-पाप नहीं लगते, मेरा कभी नाश नहीं होता और न जन्म ही होता है और न मेरे शरीर, मन-बुद्धि और इन्द्रियां ही हैं।

कहा गया है—

यथा कामं तथा ध्यानं कारयेत् समाधकोत्तमः।

जैसा कार्य हो, साधकोत्तम वैसा ही ध्यान करे।

विशेष फल की दृष्टि से भी बताया है कि—

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातमपमृत्युनिवारणम्।
आयुरारोग्य—जननमपवर्ग—फल—प्रदम्।।
राजसं ध्यानमाख्यातं धर्मकामार्थ-सिद्धिदम्।
तामसं शत्रुशमनं कृत्याभूत-ग्रहास्पदम्।।

अध्याय-६

तंत्र, भैरव और भैरवी

भारतीय अध्यात्म के सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बोध देते हुए मानव की ईश्वरीय सत्ता-युक्त वस्तुओं के प्रति अभिरुचि के मूलभूत कारण बताते हुए कहा है कि—

चतुर्विद्या भजन्ते मां जमाः सुकृतिनोर्स्जुन।
आर्सो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरषम्।।

अर्थात् पृथ्वीवासियों में श्रेष्ठ है अर्जुन! आर्त संकट में पड़ा हुआ जिज्ञासु अर्थात् ज्ञान का इच्छुक अर्थात् सांसारिक सुखों का अभिलाषी तथा ज्ञानी, ऐसे उत्तम कर्म वाले लोग ही मेरा स्मरण करते हैं।

यह कथन हम और आप सभी के लिये समान रूप से लागू होता है।

हममें कोई पीड़ित है तो कोई जिज्ञासु, तो कोई अर्थ कामना का इच्छुक। इसकी आवश्यकता कहां तक है, किसी से छिपा नहीं है। ये आवश्यकतायें कष्टों से मुक्ति पाने, ज्ञातव्य को जानकर जिज्ञासा को शांत करने तथा सांसारिक भौतिक सुखों को प्राप्त करने के लिये निरन्तर बढ़ती चली जाती हैं। इसी कारण हमारे महार्षियों ने इससे मुक्ति पाने के लिये जो उपाय बताये हैं, उनमें से तंत्र अपना विशेष महत्व रखता है।

इसी तंत्र की शक्ति से हमारे तांत्रिक ऋषि-मुनियों ने अनेक प्रकार की सिद्धियां प्राप्त की थीं। आज हम सभी तंत्र के द्वारा अपनी-अपनी आवश्यकता की पूर्ति का प्रयत्न करते हैं और कुछ सफलता भी प्राप्त कर लेते हैं। इसी कारण तंत्र को आवश्यकता की पूर्ति का साधन माना गया है।

हम जब भी दुःखों और कष्टों से मुक्त होते हैं, तब इच्छायें व कामनायें और अधिक बढ़ने लगती हैं। हम कम से कम श्रम में अधिकाधिक पूर्ति करना चाहते हैं। वस्तुतः तंत्र ही एक ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा कम से कम श्रम व शक्ति से अधिकाधिक सफलता प्राप्त की जा सकती है।

तंत्र सामान्य मार्ग है। साधना-मार्ग के सभी अभीष्ट मार्गों का एक अद्भुत, समन्वयकारी मार्ग है। ज्ञान-योगी, भक्ति-कर्म आदि सभी मार्गों व मतों की साधना

का समावेश है। सभी एक-दूसरे के परस्पर पूरक हैं, विरुद्ध नहीं। साधना याज्ञिक कार्य अनुष्ठानिक कर्म है। हठ योग व समाधि योग का भी अपना अलग महत्व है।

श्रद्धा-भक्ति के मार्ग में साधक अद्वैत ज्ञान में साम्राज्य से प्रतिष्ठित होते हैं।

आज के युग में मनुष्य द्वारा आध्यात्मिक उन्नति की चेष्टा असंभव है। अतः प्रवृत्ति मार्ग में तंत्र की उपासना सहज व सरल है। तंत्र भोग व मोक्ष दोनों देता है। कहा गया है—

योगी चेन्नेव व भोगी स्याद्भोगी चैनैव यौगवित्।
भोग योगात्मक कौल तस्मात् सर्वाधिकः प्रियेः।।

जरा सोचें, मनुष्य में भोग न होने से त्याग कैसे आयेगा? मात्र कंठस्थ उपदेश या भाषणों के माध्यम से इन्द्रिय-शक्ति से मनुष्य को निवृत्त करने की कामना करते हैं। तंत्र में "पंचमकार" को साधना के रूप में स्वीकार किया है। वह लोग जो इन्द्रिय भोग में लिप्त हैं, वे साधना का अंग कहकर व्यवहार करेंगे। अध्यात्म धर्म व उपासना लोगों के दैनिक जीवन से अलग वस्तु नहीं है वरन् प्रतिदिन के सरल जीवन मारा के समान आवश्यक है। इसका ज्ञान तंत्रशास्त्र ने ही मनुष्य के भीतर पैदा किया।

जगत्-कारण-महामाया मातृत्व का प्रचार और साथ ही साथ सभी स्त्री-मूर्तियों पर एक शुद्ध व पवित्र भाव को लाना भी एक पवित्र उद्देश्य है।

नारी का शरीर पवित्रतम् तीर्थ है। नारी पर मनुष्य, बुद्धि का त्याग कर, हर पल देवी बुद्धि रखें और जगदम्बा की विशेष शक्ति के प्रकाश की भावना कर हर समय स्त्री—पर भक्ति और श्रद्धा का प्रदर्शन करें। तंत्र साधना में नर व नारी का समान अधिकार है। सिद्धि के मार्ग में और साधना के हर अंग में नर और नारी के संयुक्त कर्म का भी विधान है। नारी श्रेष्ठ है। नारी ही शक्ति है। कुमार व कुमारी की अवस्था में मनुष्य अपूर्ण है। साधना-क्षेत्र में उसका अधिकार नहीं है। शादी के पश्चात् ही पूर्णता मानी गई है एवं साधना कर्म में अधिकार पैदा होता है। तंत्र नर और नारी के संगम व प्रणय के विधि-विधान अत्यधिक उदार है। एक साधक को एकाधिक शक्ति का व एक साधिका को एकाधिक भैरव का रूप ग्रहण करना तंत्र में है। युवा अवस्था में हमारी आसक्ति नारी की और सहज एवं स्वाभाविक रूप से होती हैं। आकर्षण से अपने मन को बरबस हटाने का आदेश तंत्र नहीं देता है। यदि स्त्री संग ही किया जाये तब मनुष्य के अध्यात्मवाद की उन्नति होती है। सच्चे साधु कभी लम्पट नहीं होते। तंत्र में बिना स्त्री के भी सिद्धि-लाभ किया जा सकता है। भैरव-साधना में स्त्री सहयोग अनिवार्य नहीं है।

शरीर को कष्ट देने या सुखाने की बात तंत्र में नहीं है, भोग व योग एक ही क्षमता के दो भाग हैं।

"कुलार्णव" तंत्र में स्पष्ट कहा है कि सत्ययुग में श्रुति के विधानानुसार

त्रेता में स्मृतिनुसार, द्वापर में पुराणानुसार एवं कलियुग में तंत्र अनुसार ही धर्म करना कल्याणप्रद है।

"विष्णु यामल" में भी स्पष्ट कहा गया है—

आगं मौक्त विधानेने कलौ देवान् यजेत् सुधि।
नहि देवाः प्रसीवन्ति कलौ चान्य विधानताः।।

वर्तमान समाज में पंचमकार में लिप्त मानव को देखकर ही विचार आता है कि तंत्र साधना शुद्धिति का आधुनिक युग में ही विशेष प्रयोजन है। तांत्रिक साधना में नैतिक बन्धन की आवश्यकता न होने के कारण भी यह उदार है। नीति बंधन के कारण अन्याय साधना की प्रद्धति में प्रवृत्ति के साथ प्रकृति का विरोध भी है।

भारत में शक्ति की उपासना चिरकाल से है। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई यह स्पष्ट करती है कि यह नगर कई बार बसा व कई बार उजड़ा है। इसका प्राचीनतम सभ्यताकाल चार हजार ईसा पूर्व आंकते हैं। खुदाई से प्राप्त अनेक वस्तुओं के साथ अनेक देवी-देवताओं की मूर्तियां उपलब्ध हुई हैं। लिंग, योनि, स्वास्तिक शक्ति, औम, नदी के नाम हैं। इससे स्पष्ट है कि उस समय शक्ति उपासना अवश्य प्रचलित थी।

मंत्र अत्यन्त प्राचीनकाल में भारतीय अध्याय का प्रमुख सहयोगी रहा है। तंत्र शास्त्र का रचनाकाल स्वयं इंस बात को प्रमाणित करता है।

तंत्र शब्द का अर्थ बड़ा विस्तृत है। सिद्धान्त व्यवहार नियम वेद की एक शाखा, शिव-भक्ति आदि की पूजा और अभिचार आदि का विधान करने वाला शास्त्र आगम कर्मकाण्ड पद्धति और अनेक उद्देश्यों का पूरक उपाय अथवा उसकी युक्ति महत्वपूर्ण है। वैसे यह शब्द "तन" और "त्रै" से बना है। अतः तत्व को अपने अधीन करना। यह अर्थ तो व्याकरण की दृष्टि से स्पष्ट है, जबकि तत् पद से परमात्मा तथा "त्र" से स्वाधीन बनाने के भाव को ध्यान में रखकर तंत्र का अर्थ देवताओं की पूजा से प्रकृति और परमेश्वर को अनुकूल बनाना होता है। परमेश्वर की उपासनार्थ जो भी उपयोगी साधन हैं, उन्हें भी तंत्र कहा गया है।

सर्वस्थों येन तन्यन्त चाय ते चः भयाज्जनात्।
इति तन्यस्थ तंत्रत्व तन्यज्ञाः परि चक्षते।।

जिसके द्वारा सभी मंत्रार्थों—अनुष्ठानों का विस्तारपूर्वक विचार हो तथा जिसके अनुसार कर्म करने पर लोगों की रक्षा हो वही तंत्र है। तंत्र का दूसरा नाम आगम है। अतः तंत्र और आगम परस्पर पर्यायवाची हैं।

आगतं शिव थकोभ्यो गतं च गिरिरामुखे।
पतं च वासुदेवस्य, तत आमग उच्यते।।

जो शिव के मुख से आया और पार्वती ने सुना तथा जिसे भगवान विष्णु ने अनुमोदित किया वही तंत्र है। इस प्रकार तंत्रों के प्रथम प्रवक्ता भगवान शिव हैं, सम्मति देने वाले भगवान विष्णु हैं जबकि पार्वती उसका केवल श्रवण कर जीवों पर कृपा करके उपदेश देने वाली हैं। अतएव भोग और मोक्ष दोनों के उपायों को बताने वाला विज्ञान "तंत्र" कहलाता है।

खेद का विषय है कि आज भी शिक्षित समाज तंत्र की वास्तविक भावना से दूर केवल परम्परामूलक धारणाओं के आधार पर इस भ्रम से छूट नहीं पाया है कि तंत्र का अर्थ है जादू-टोना। अधिकतर यही समझते हैं कि जैसे सड़क पर खेल दिखाने वाला बाजीगर अपने करतब दिखाकर लोगों को आश्चर्य में डाल देता है, ठीक उसी प्रकार तंत्र भी करतब दिखलाने वाला शास्त्र होगा और तंत्र-सिद्धि क्षणिक होती है। यह मिथ्या धारणा है। धीरे-धीरे समय बदला और आगे चलकर तंत्र में पंचमकार का प्रवेश हो गया है—

मास, मीन, मुद्रा, मद्य।

मैथुन—इनके साथ-साथ शिव साधना व बलिदान आदि के निर्देश भी प्राप्त होते गये।

इस शास्त्र के प्रति भ्रम का कारण यह भी है कि मध्यकाल में जब हीनयान का प्रचार जोरों पर था विदेशी आक्रमणों से जनमानव ग्रस्त था, स्वयं जनता अशक्त थी तब ऐसे मार्गों का अवलम्बन ले रही थी, संतों ने स्वयं तंत्र साधंना के बल पर ही लोगों को भक्ति की ओर प्रेरित किया जो कि आत्म-कल्याण व शान्ति का सरल एवं सुगम उपाय था।

यह सत्य है कि तंत्रों की भावना विशुद्ध आचार-पद्धति के वास्तविक ज्ञान के अभाव से ही, लोगों में इसके प्रति घृणा उत्पन्न हुई है और कुछ स्वार्थी लोग तुच्छ क्रियाओं व आडम्बरों द्वारा जन सामान्य को तंत्र के नाम पर ठग लेते हैं।

वास्तव में तंत्र एक स्वतंत्र शास्त्र है जो कि पूजा आचार-पद्धति का परिचय देते हुए इच्छित तत्वों को अपने आधीन बनाने का मार्ग दिखलाता है। यह साधना शास्त्र है। इसमें साधनां के अनेक प्रकार बताये हैं जिसमें देवताओं के रूप-गुण कर्मादि के चिन्तन की प्रक्रिया बतलाते हुए पटल-पद्धति-कवच नाम व स्तोत्र पांच अंगों वाली पूजा का ही विधान बतलाया गया है—

(१) पटल,

(२) पद्धति,

(३) कवच शक्ति,

(४) सहस्त्र नाम शक्ति,

(५) स्तोत्र शक्ति।

(१) पटल—इसमें प्रधानतः जिस देवता का पटल होता है उसका महत्व इच्छित कार्य की शीघ्र सिद्धि हेतु जप, होम आदि की सूचना का निर्देश रहता है। इसके साथ ही यदि मंत्र शापित है तो उसका उत्कीलन आदि भी बतलाया जाता है।

(२) पद्धति—इसमें साधना के लिये शास्त्रीय विधि का निर्देश होता है जिसमें प्रायः दैनिक क्रिया से लेकर पूजा व जप समाप्ति तक के मंत्र तथा विनयोग आदि का पूरा-पूरा वर्णन रहता है। इस प्रकार नित्य पूजा और नैमित्तिक पूजा दोनों का प्रयोग तथा कर्मों की सूचना प्राप्त होती है।

(३) कवच—प्रत्येक देवी-देवता की उपासना में अनेक नामों के द्वारा उनका अपने शरीर में निवास तथा रक्षा की प्रार्थना करते हुए जो न्यास आदि किये जाते हैं वे ही "कवच" होते हैं। तब ये कवच पाठ द्वारा सिद्ध हो जाते हैं तो सार्थक किसी भी रोगी पर इनके द्वारा झाड़ने-फूंकने की क्रिया करता है और उससे रोग शान्त हो जाते हैं। कवच का भोज-पत्र पर लेखन, पानी का अभिमंत्रण, यंत्र तथा अन्य वस्तुओं को अभिमंत्रित करने का कार्य इन्हीं से होता है।

(४) सहस्त्र नाम—उपासना किये जाने वाले देव के १००० नामों का संकलन इसमें रहता है। ये सहस्त्र नाम ही विविध प्रकार की पूजाओं में स्वतंत्र पाठ के रूप में प्रयुक्त होते हैं। ये नाम अत्यन्त रहस्यपूर्ण देवताओं के गुण कर्मों का आख्यान करने वाले व सिद्ध मंत्र-स्वरूप होते हैं। इसलिये इनका भी अनुष्ठान होता है।

(५) स्तोत्र शक्ति—अराध्य देव की स्तुति ही स्तोत्र कहलाती है। प्रधानतः स्तोत्रों में गुणगान व प्रार्थना रहती है। परन्तु कुछ सिद्ध-स्तोत्रों में मंत्र प्रयोग आदि भी गुप्त संकेतों द्वारा बतलाये जाते हैं। उपरोक्त पांच अंगों से पूर्ण शास्त्र ही तंत्र शास्त्र कहा जाता है।

बिनाहमूगममार्गेण नास्ति सिद्धि कलौ प्रिये।
निर्वीर्याः श्रोत जातीया विषहीनोरगा इव।
सलादौ सफला आसान् कलौ ते मृतका इव।।
पाञ्चालिका यथा मित्रौ सर्वोन्द्रिय-समन्विताः।
अमूरशक्ताः कार्मोशु तथान्मे मन्त्र राशयः।।
कला वन्योदितौर्मार्गेः सिद्धि मिच्छति यो नरः।
वृषितौ जान्हवीतरि कूपं खनति दुर्मतिः।।
कलौ वन्यौदिता मान्याः सिद्धःस्तूर्ण-फलप्रदाः।
शास्ताः कर्मसु सर्वेषु जप-यज्ञ-क्रिया दिषु।

तंत्र-मंत्र विज्ञान के कुछ साधकों का विश्वास है कि—

वैदिक मंत्र विष-रहित सर्पों के समान निर्जिव हो गये हैं, वे त्रेता, द्वापर में सफल थे पर अब कलियुग में मृतक समान जिस प्रकार दीवार में सर्व इन्द्रियों से युक्त पुतलियां अशवत होती हैं ठीक उसी प्रकार तंत्र से अतिक्ति मंत्र समुदाय अशक्त है। कलियुग में अन्य शास्त्रों द्वारा कथित मंत्र से जो सिद्धि चाहता है वह अपनी प्यास बुझाने के लिये गंगा के पास रहकर भी दुर्बुद्धिवश वह कुआं खोदना चाहता है। कलियुग में तंत्रों में कहे गये मंत्र सिद्ध हैं तथा शीघ्र सिद्धिदायक तथा जप-यज्ञ व क्रिया में भी प्रशस्त हैं।

मत्स्य पुराण में लिखा है कि—

विष्णुर्वरिष्टो देवानां ह्रदानामुधिर्य था।
नदीनां च यथा गंगा पर्वातनां हिमालयाः।।
तथा समस्त शास्त्राण तन्त्र शास्त्र मनुत्तमन् सर्व काम।
प्रदं पुण्यं तन्यं वे वेद सम्मतम्।।

देवों में विष्णु, सरोवरों में समुद्र, नदियों में गंगा और पर्वतों में हिमालय श्रेष्ठ है, वैसे ही समस्त शास्त्रों में तंत्र शास्त्र सर्वश्रेष्ठ है। वह सर्व कामनाओं को देने वाला है।

उत्तर काल में तंत्र आधारित प्रयोगों पर श्रद्धापूर्वक विश्वास नहीं किया अपितु स्वयं प्रयत्न करके सुख-सुविधायें भी उपलब्ध की हैं। धीरे-धीरे तांत्रिक कर्मों में कुछ सामाजिक तथा अन्य दैशीय क्रिया-कलापों के प्रभाव से पंचमकारोपासना मलिन प्रक्रियायें हिंसक वृत्ति आदि भी समाविष्ट हो गईं। इन्द्रियां-लोलुप लोगों ने अपने क्षणिक स्वार्थ को अपनाकर इन बातों को अबोध व्यक्तियों में पर्याप्त विस्तार किया।

"कुलार्णव" तंत्र में पंचमकार के प्रयोग का निषेध करते हुए स्पष्ट है कि—

प्राणिनश्च त्वया धात्या वक्तव्यं च मूषा वचः।
अदत्तं च त्वया ग्राह्य सेवनं योषितामपि।।
अनेन वज्र मार्गेण वज्रसत्वान् प्रचोदयेत्।
एर्षो, हि सर्व बुद्धानां समयः परमशाश्वत।।

तंत्र शक्ति अर्थात् बहुजन हिताय—अध्यात्म हमारे प्राचीन भारतीय चिन्तन की आत्मा है। यहां पर सर्वस्व शिवम् की पवित्र भावना से किया, देखा और जांचा जाता है। जो भी खोज एवं जांच हुई उसमें अध्यात्म और बहुजन हिताय का लक्ष्य शिव के साकार निहित रहा है।

यंत्र-तंत्र शक्ति से सिद्धियां—मंत्र और ऊपर आश्रित यंत्र-तंत्र आदि के माध्यम से जहां आध्यात्मिक क्षेत्र में शून्य, मोक्ष, कैवल्य और महासमाधि की अवस्था प्राप्त की

जाती थी। वहीं भौतिक जगत् में उनके प्रयास से सुखद सिद्धियां भी उपलब्ध होती थीं। साधनाकर्त्ता इन उपलब्धियों का प्रयोग निजहित एवं जनहितार्थ भी करते थे।

समय गुजरता गया और मंत्र-विद्या के विकास ने तीन रूप धारण किये, जिन्हें मंत्र, यंत्र और तंत्र के नाम से जाना गया। पहले इसके स्वरूप, महत्व, उद्देश्य और परस्पर सम्बन्ध को जान लेना भी अति आवश्यक है।

तंत्र वस्तुतः व्यवहारिक विषय है। वैसे यंत्र और मंत्र का प्रभाव इसमें भी होता है पर इसका तीसरा आयाम विशुद्ध भौतिक है। पदार्थवादी अध्यात्म "अनुभव" पर विषय है, जबकि तांत्रिक माध्यम दृश्य जगत की वस्तुयें हैं। पदार्थ विज्ञान से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। यद्धपि मंत्रों का प्रयोग इसके कई सिद्धान्तों में अपरिहार्य है। पर कुछ ऐसे प्रयोग भी हैं जिनमें विशुद्ध पदार्थवादी साधना की जाती है। इस दृष्टि से तंत्र-विद्या आयुर्वेद और रसायन शास्त्र की जननी कही जा सकती है।

बहुत-से खोजकर्त्ताओं का मत है कि वेद का सरलीकरण "उपनिषद्" के स्वरूप हुआ, वही बाद में "पुराण" और तत्पश्चात् "तंत्र" के रूप में आया।

ऐतिहासिक दृष्टि से ईसवी सन् आरम्भ होने के दो हजार वर्ष पूर्व से तंत्र-ग्रन्थों की रचनायें आरम्भ हो गई थीं। ईसा से १५०० वर्ष पूर्व तंत्र-विद्या न केवल भारत में बल्कि यहां से चलकर तिब्बत, चीन, थाई देश, काम्बोज और मंगोलिया तक प्रसार पा चुकी थी। बौद्ध युग में तो इसका प्रवाह इतना वेगवान् था कि बौद्ध-संस्कृति को तंत्र-संस्कृति का यथार्थ कहा जाने लगा।

इस विद्या का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित सभी विषय आते हैं। सृष्टि, प्रलय, मंत्र साधना, देवताओं के लोक, तीर्थ, चारों आश्रम, ब्राह्मण वर्ण अन्य तीनों वर्ण भी, मंत्र-विद्या, कल्प-वर्णन, ज्योतिष, पुराण, व्रत-उपवास, नित्य कर्म, समाज सेवा, राजनीति, शरीर विज्ञान, स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध, दान-पुण्य, सांसारिकता लोकाचार और अध्यात्म। यहां तक कि योग-साधना से लेकर मोक्ष तक।

तंत्र शास्त्र के प्रणेता भगवान शिव माने जाते हैं। किसी-न-किसी रूप में सभी हिन्दू सम्प्रदाय इस मान्यता का पोषण करते हैं। यही कारण है कि समस्त तंत्र-साधक भगवान् शिव को अपना आदिदेव स्वीकार करते हैं।

इस शास्त्र में एक विरोधाभास भी है। तंत्र साहित्य की रचना परिणाम की दृष्टि से आश्चर्यजनक है। खेद है कि सैकड़ों ग्रन्थ आज उपलब्ध नहीं हैं। केवल उनके नाम का उल्लेख मिलता है। विदेशी आक्रामकों ने यहां की संस्कृति और श्री को छिन्न करने के लिये "ग्रन्थनाश" का अस्त्र अपनाया था, फलतः अनेक दुर्लभ पाण्डुलिपियां उनके द्वारा भस्मीभूत कर दी गईं।

तंत्र साहित्य को पुस्तक रूप बहुत बाद में मिला। शताब्दियों तक वह गुरु-शिष्य के मध्य मौखिक शिक्षण और स्मृति-संरक्षण के रूप में चलता रहा। बाद में भोजपत्र, ताड़पत्र, ताम्रपट्ट अथवा ऐसी ही किसी वस्तु पर लिखकर उन्हें स्मरणीय बनाया गया। कागज का आविष्कार तो बहुत बाद में हुआ। तब केवल हस्त लेखन ही प्रचलित था, छापेखाने तो अभी कल ही बने हैं—लेखन कला के जन्म के हजारों वर्ष बाद।

तंत्र साहित्य के ग्रन्थों की सूची बनाना सहज नहीं है, अपितु यह कार्य अत्यन्त कठिन है। फिर भी हम देखते हैं कि दो-चार नाम इतने प्रचलित और विख्यात हैं कि उनके द्वारा ही तंत्र सम्बन्धी लेखन की सत्यता सिद्ध हो जाती है। इस सन्दर्भ में ये ग्रन्थ मुख्यतया प्राप्त कर चुके हैं—

महासिद्धसार तंत्र — आगमतत्व विलास
कुलावर्ण तंत्र — तंत्र सार
वाराही तंत्र — शंकर तंत्र
रुद्रयामल तंत्र — शारदा तिलक
शक्ति मंगल तंत्र
आगम द्वैत निर्णय

अर्थात् संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि तंत्र साहित्य की प्रचुरता का अनुभाग इसी तथ्य से हो जाता है कि विभिन्न सम्प्रदायों के अन्तर्गत तंत्र ग्रन्थों की संख्या इस प्रकार बताई जाती है—

तंत्र का नाम	तंत्र के प्रकार
विष्णुक्रान्ता	६४ तंत्र
रथक्रान्ता	६४ तंत्र
अश्वक्रान्ता	६४ तंत्र
शिवजी द्वारा वर्णित	२३ तंत्र
मूलतंत्र में वर्णित	६४ तंत्र
अन्य साक्ष्यों द्वारा प्राप्त	६४ तंत्र
बौद्ध साहित्य	५५ तंत्र
संकलन ग्रन्थ	१६ से अधिक

हम देखते हैं कि लगभग ५०१ तंत्र ग्रन्थों का पता चलता है।

प्रमाणित है कि मंत्रों का आदान-प्रदान, यंत्रों का निर्णय, आचार, भेद, कठिनाई से प्राप्त योगाभ्यास और अनेक वैदिक मंत्र दृष्टि में आते हैं। बिना मंत्र-जाप, होम,

किये सुखपूर्वक साधक को पल में सम्पूर्ण कामनाओं को प्रदान करने वाली सिद्धि प्राप्त होती है। सम्पूर्ण शास्त्रों के साररूप तथा मंत्रों के उत्तम साररूप अथर्ववेद के अति सारयुक्त काम्य कर्म के करने वाले अनेक हैं।

ऐसे लिखित कल्प हमेशा जिस स्थान में प्रतिदिन पूर्व होते हैं। वहां मृत्यु, चोर, भूत-प्रेत एवं अन्यान्य उपद्रवों से छुटकारा मिलता है। कल्प में विश्वास करने से निःसन्देह अभिचार हो जाता है और सन्देहपूर्वक किया हुआ विपरीत परिणाम देता है। साधक स्नान कर, पवित्र हो, शुद्ध मन से सबसे पहले अपने इष्ट देव का ध्यान कर पूजा करें। विचारों का केन्द्रीकरण, केवल मात्र एक ही विचार को केन्द्रित किये रखना, अन्य किसी भी विचार को मन में आने देना ही ध्यान की क्रिया है। जितनी देर तक आप इस प्रकार एकाग्र होकर ध्यान लगा सकेंगे, उतनी ही अधिक ऊर्जा आपके शरीर से निकलेगी और उसका प्रभाव पड़ेगा। यह देखें कि कितनी देर तक आप ध्यान लगा सकते हैं? दो-चार मिनट की बात न करें। इतनी देर तो साधारण मनुष्य भी ध्यान लगा सकता है। फिर आप तो तंत्र के अनन्य साधक हैं।

प्रारम्भ में आप केवल एक मिनट ध्यान लगायें। एक मिनट के बाद उठ जायें। फिर अगले दिन दो मिनट। इस प्रकार एक-एक मिनट प्रतिदिन बढ़ाते जायें। जब आप तीस मिनट कर सकेंगे, तो आपको विचित्र अनुभूतियां होने लगेंगी। आप अपने आप में परिवर्तन पायेंगे। आप अनुभव करेंगे कि आपके शरीर में एक अजब-सी स्फूर्ति, शक्ति और हल्कापन आ गया है, आप चुस्त-तन्दरुस्त तथा हर पल उत्साह से भरे रहेंगे। जब आपको ऐसे अनुभव होने लगें, तब समझ लें, आप साधना में सिद्धि के मार्ग पर आ चुके हैं।

इसी ऊर्जा को तंत्र के क्षेत्र में विशेष स्थान प्राप्त है और प्रत्येक साधना की सिद्धि का मूलाधार है। आपके शरीर में यही ऊर्जा-शक्ति वातावरण को आपकी इच्छानुकूल बनायेगी।

तंत्र साधना का पहला और सबसे बड़ा मूलमंत्र ध्यान है, कि किसी भी वस्तु या विषय पर जब आप ध्यान केन्द्रित न करेंगे, पूरी एकाग्रता के साथ एक बिन्दु पर अपने को केन्द्रित न कर पायेंगे, तब तक आप किसी भी प्रकार की तंत्र साधना नहीं कर सकते हैं। एकाग्रता और आत्मविश्वास केवल ध्यान के ही परिणाम हैं। जब आपके मन का आत्मविश्वास जाग उठता है कि अमुक साधना या कार्य आप करके रहेंगे, अमुक सिद्धि आपको मिलकर ही रहेगी, तो अवश्य ही ऐसा होता है। दृढ़ संकल्प और आत्मविश्वास का ही फल होता है। यहां दृढ़ संकल्प और तीव्र आत्मविश्वास ध्यान की संतान हैं। ध्यान से आत्मविश्वास और आत्मविश्वास से निडरता आती है। इसी कारण अपने लक्ष्य की पूर्ति का साधक सदैव ध्यान लगाये रखता है। अपने ध्यान

के बल पर ही वह उद्देश्य की प्राप्ति करता है। दुनिया-भर के मनोवैज्ञानिक आज दृढ़ आत्मविश्वास, संकल्प शक्ति और अडिग एकाग्रता का लोहा मान रहे हैं। यह मनोविज्ञान एक आविष्कार बन गया है। इसी ध्यान शक्ति का प्रयोग साधना में भी किया जाता है। इसी कारण तंत्र कोई अलौकिक विद्या नहीं वरन् विज्ञान-समस्त विज्ञान की एक शाखा मानता हूं। तंत्र साधना विज्ञान क्रिया है, जिसमें मनोविज्ञान ऊर्जा, प्रकाश, ध्यान और पंच तत्व सम्मिलित हैं।

तंत्र साधना कोई भी वयस्क कर सकता है। वयस्क होने के उपरान्त आयु की उस सीमा तक कर सकता है, जहां तक कि उसके हाथ-पैर काम करते हैं। आप अपनी तंत्र-मंत्र-यंत्र से सम्बन्धित साधनाओं को गोपनीय ही रखें। तंत्र साधना या क्रियाओं को प्रदर्शन या चर्चा का विषय न बनायें। मौन भाव से एकान्त में, जो शुद्ध हो तथा वायु और प्रकाश भली प्रकार आता हो वहां गुरु से प्राप्त साधना करें। ध्यान योग का अभ्यास सदा पूर्व की ओर मुंह करके करना चाहिये। कहा जा चुका है कि प्रातःकाल का समय उपयुक्त होता है। पूर्व से ऊर्जा वितरित होती है।

तंत्र-मंत्र-यंत्र साधना शुरू करने से पहले किसी को गुरु बना लेना आवश्यक है। केवल पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर ऐसा करना उचित नहीं है। यह एक अत्यन्त जटिल मानसिक क्रिया है। जाने-अनजाने हल्की-सी भी त्रुटि भीषण परिणाम प्रस्तुत कर सकती है। किसी कर्मठ, विद्वान तांत्रिक के मार्ग-निर्देशन पर कार्य करना उचित होगा। पाठकगण! आपके मन में यह प्रश्न अवश्य करवट ले रहा होगा कि क्या पुस्तकें बेकार हैं? क्या पुस्तकों में व्यय किया गया आपका धन बेकार गया? पुस्तकें क्यों और किसके लिये छापी जाती हैं? आपके यह प्रश्न सर्वथा उचित हैं। पुस्तकें हमें अवश्य पढ़नी चाहियें। इससे हमें प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त होता है। पुस्तकें हमें ज्ञान उपलब्ध कराती हैं। पुस्तकें उद्देश्य नहीं हो सकती हैं। हां उद्देश्य तक पहुंचाने का माध्यम अवश्य बन सकती हैं।

तंत्र द्वारा अनेक प्रकार की साधनायें कर अनेक प्रकार की अलौकिक सिद्धियां प्राप्त की जा सकती हैं। सिद्धि को प्राप्त करने के लिये की जाने वाली कोई भी साधना जटिल दुःखद होती है। मानव कल्याण के लिये साधनायें करना उचित होता है और यही तंत्र विज्ञान का सदुपयोग भी है। व्यक्तिगत स्वार्थ, धन सम्पत्ति, यश किसी को वश में करने के लिये अगर आप तंत्र साधना करना चाहते हैं, तो कृपया साधना न करें। यह उचित नहीं मानी गयी। इस प्रकार की साधना से आगे चलकर हानि हो सकती है। मानव-कल्याण के लिये साधना करने के लिये धैर्य और कठोर परिश्रम की आवश्यकता है। आपकी वाणी से जो निकले वह फलीभूत हो। यह तंत्र की सबसे बड़ी साधना है।

प्राचीन काल में ऋषि-मुनि जो कहते थे, वही होता था। शाप या वरदान अवश्य ही फलीभूत होता था। उन्हें "वाक्‌सिद्धि" थी। इस वाणी साधना के लिये सर्वप्रथम आप कम से कम बोलें। संक्षेप में और सत्य बोलने का अभ्यास करें। मौन अधिक से अधिक रहें। इस प्रकार वाणी क्षय न होगा। गम्भीर रहें और संकल्प करते रहें कि जो कुछ भी आप कहेंगे, वही होगा। इसका प्रारम्भ आपको संकल्प शक्ति के साथ करना होगा। प्रत्येक दिन एक संकल्प प्रातःकाल करें और उसके पूर्ण होने की प्रतीक्षा करें। यह संकल्प गोपनीय रखें। किसी को न बतायें। जब तक किया गया कोई संकल्प आप पूरा न कर लें, तब तक उसे बदलें नहीं। एक न एक दिन वह पूरा ही होगा। तब दूसरा संकल्प करें, कुछ समय बाद आप अनुभव करेंगे कि आपके संकल्प बड़ी सरलता से पूरे हो रहे हैं। उनमें समय की अवधि कम से कम लग रही है। अभ्यास करते-करते यह साधना सरल हो जायेगी। स्मरण रखें, संकल्प इस प्रकार के और मानवीय सीमा के भीतर करें अर्थात् जो मानव द्वारा सहज सम्भव हो, मानवीय क्षमता से परे संकल्प न करें। इस प्रकार के संकल्पों के द्वारा जब आप सफलता प्राप्त कर लेंगे तो फिर आप जो कहेंगे, वह पूरा होगा। जिससे जो कह देंगे, वह होकर रहेगा।

भैरव-साधना के द्वारा आप अनेक का कल्याण कर सकते हैं। लोगों के कष्ट का निवारण कर उनकी.चिन्तायें मिटा सकते हैं। इस प्रकार आपका तंत्र कल्याणकारी ही होगा। पहले आप आगन्तुक की पूरी बात ध्यानपूर्वक सुनें। मन में विचारपूर्वक निर्णय करें कि जो यह चाहता है उचित है या अनुचित, अनुचित हो तो कुछ न कहें, स्पष्ट रूप से सभ्यतापूर्वक इंकार कर दें। उचित कार्य जानकर कर्म के अनुसार तंत्र प्रयोग करें। उदाहरणार्थ, एक युवती कहती है कि महाराज! मैं अपने प्रेमी के साथ रहना चाहती हूं। मेरा पति मेरे प्रेमी का कुछ अनिष्ट न करे, ऐसी व्यवस्था आप करें, क्या आप यह अनुरोध स्वीकार करेंगे? नहीं, यह कार्य आपको नकारना होगा। अनुचित, मानव समाज व्यवस्था विरुद्ध कार्यों में आप बिल्कुल सहयोग न दें।

संकल्प, साधना-शक्ति के द्वारा आप अपना अलग महत्वपूर्ण स्थान बना सकते हैं, पर इस शक्ति को सदैव बनाये रखने के लिये आपको सात्त्विक जीवन व्यतीत करना होगा। कुकर्म, बुरे विचार, लोभ-लालच या अन्य स्वार्थ अथवा तामसिक जीवन से दूर रहना पड़ेगा। इस प्रकार तंत्र द्वारा प्राप्त की गयी यह साधना-शक्ति सदा प्रभावशाली बनी रहेगी।

यह छोटी-बड़ी बातें जिनकी हम प्रायः जाने या अनजाने में उपेक्षा या अवहेलना कर देते हैं, भैरव-साधना में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। यह सूत्र

सदैव स्मरण रखें। पवित्रता, शुद्धता, सावधानीपूर्वक और योग्य गुरु के निर्देशानुसार सम्पन्न की गयी साधनायें कभी असफल नहीं होती हैं। तंत्र साधना कैसे करें? उत्तर यही है जो ऊपर लिखा गया है।

भैरव-साधना में दृढ़ इच्छाशक्ति का होना आवश्यक है। इसके अभाव में मंत्र सिद्ध होने में बाधा पड़ सकती है।

मानव की इच्छायें, भावनायें, बुद्धि के द्वारा परिष्कृत होकर सुधर जाती हैं। और तब वही दृढ़ इच्छा निश्चय का रूप धारण कर लेती है और तब वही दृढ़ निश्चय हो जाने पर सफलता कदम चूमने लगती है, ऐसी अवस्था में मानव की संकल्प शक्ति बन जाती है। आप कल्पना करें कि क्या इच्छाशक्ति के अभाव में कोई कार्य हो सकता है?

उत्तर होगा—नहीं। क्रिया में दृढ़ता ही प्राणी को विजयश्री का मार्ग देती है। मानव मन की थाह पाना कठिन है। शक्तियां सुप्तावस्था में विद्यमान रहती हैं। प्रश्न तो यह है कि उन शक्तियों को जगाये कौन? और यह कार्य संकल्पकर्त्ता का है। किसी कार्य के लिये संकल्प किया नहीं कि सम्बन्धित शक्ति जाग उठती है।

बारूद स्वयं कभी नहीं फटता अपितु एक जलती चिंगारी की आवश्यकता होती है। जलती चिंगारी माध्यम बन गई है भीषण विस्फोट के। मनुष्य शक्तियों का भण्डार है, परं वह स्वयं उसे नहीं जानता, पर कोई तो अर्जुन बनकर दिखा दे।

भैरव-साधना के बल पर जीता है। साधना द्वारा विजय प्राप्त करता है। साधना सापान है, साधना मुक्ति का मार्ग है, परन्तु साधना की नींव पक्की श्रद्धा है जहां श्रद्धा वहीं सिद्धि है। श्रद्धा का अभाव है। वहीं कुतर्क, अविश्वास, कुटिलता जन्म ले लेती हैं। ये सभी असफलता के प्रतीक बन जाते हैं और व्यक्ति सफलता से असफलता की ओर उन्मुख हो जाता है। इस प्रकार यही कहा जा सकता है कि श्रद्धा के अभाव में सफलता सदैव संदिग्ध रहती है।

श्री भैरव के मंत्रों की साधना से पूर्व साधक गुरु-मंत्र का जाप कम से कम सात बार अवश्य करना चाहिये। यह क्रिया सम्पन्न करके अपने अभीष्ट मंत्र की साधना करें और इस बात का विशेष ध्यान रखें कि ना पढ़ना एक तरह से आपकी असफलता का कारण है, उसका उच्चारण शुद्ध होना भी आवश्यक है। इसे इसके मूल रूप में ही पढ़ें।

साधना सात्त्विक, राजस और तामस तथा भैरव के रूप आदि को लक्ष्य में रखकर ध्यान भी किये जाते हैं। इस दृष्टि से कुछ पद्य इस प्रकार हैं, यह मैं पहले भी लिख चुका हूं।

वन्दे बालं स्फटिक-सदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्गं।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणी-नूपुराढ्यैः।।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं।
हस्ताग्राभ्यां बटुकसदृशं शूलदण्डोपधानम्।।

राजसं ध्यानम्—

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्तांगरागस्रजं।
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।।
नीलग्रीवमुदारभूषणयुतं शीतांशुखण्डोज्ज्वलं।
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये।।

तामसं ध्यानम्—

वन्दे नीलाद्रिकान्तं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं।
दिग्वस्त्रं पिंगकेशं डमरुमथ सृणिं खड्गपाशाभयानि।।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्बिभ्रतं भीमीदंष्ट्रं।
दिव्याकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत् किङ्किणीनूपुराढयम्।।

तांत्रिक परम्परा में अनेक मंत्र शप्त एवं किलित हैं, जिनका कारण ऋषियों के विभिन्न व्याख्यानों से ज्ञात होता है। श्रीबटुक-भैरव-मंत्र और स्तोत्र दोनों के विषय में शापोद्धार के लिये "मंत्र" एवं एक अष्टपद्यात्मक-स्तोत्र का निर्देश तंत्रों में प्राप्त है, जोकि इस प्रकार है—

शाप-विमोचन मंत्र इस प्रकार है—

ॐ ह्रीं बटुक! शापं विमोचय विमोचय ह्रीं क्लीं।

उपर्युक्त मंत्र का २१ बार जप करना चाहिये, इससे मंत्र की सिद्धि में सहयोग मिलता है। तदनन्तर शापोद्धार-स्तव का भक्तिपूर्वक पाठ करें। जो इस प्रकार है—

ॐ वृन्दारकप्रकरवन्दितपादपद्मं।
चञ्चत्प्रभापटलनिर्जितनीलपद्मम्।
सर्वार्थसाधकमगाधदयासमुद्रं,
वन्दे विभुं बटुकनाथमनाथबन्धुम्।।

श्री भैरव की साधना में मंत्र, तंत्र साधनायें प्रमुख हैं। अब यहां संक्षेप में मंत्रादि साधनाओं का भी वर्णन कर रहा है। साधक जिस रूप में साधना करना चाहें गुरु-उपदेश से करें।

मंत्र साधना में विनियोग, न्यास और ध्यान के साथ मंत्र का जप होता है। जैसा मंत्र का स्वरूप होता है उसके अनुसार ही विनियोगादि में भी परिवर्तन होता रहता है। मंत्रों के साथ कामना की दृष्टि से बीजमंत्रों का संयोग पल्लव अथवा सम्पुट के रूप में किया जाता है। इसके कारण भी विधि में कुछ परिवर्तन-परिवर्धन होते हैं।

श्री बटुकभैरव का प्रसिद्ध मंत्र—

"ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं" यह २१ अक्षरों का है। "तंत्रसार" में "एकविंशात्यक्षरात्मा शक्तिरुद्धो महामनुः" कहकर इसी मंत्र की महिमा बतलाई है। "रुद्रयामल" में इस मंत्र के आदि में ॐ लगाने का भी आदेश है—"आदो प्रणवमुद्धत्य देवी प्रणवमुद्धरेत्" इत्यादि।

बटुक भैरव—ब्रह्मकवच में प्रणवसहित यंत्र के लिये ही—'द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रः क्रमेण जगदीश्वरि' कहा गया है तथा अन्यत्र में प्रणव माना है।

कालसंकर्षण तंत्र में—

तारो माया तदनु बटुकाय द्वयं क्ष्रौं तदाप-
च्छब्दोद्धाराय च शिरसि कुरु द्वन्द्वमुक्तञ्च सम्यक्।
ह्रींबीजं यद्बटुकपुटितं भौवनं चाग्निजाया-
एषा विद्या बटुक भव ते वाञ्छितं मे ददातु।।

कहकर ॐ ह्रीं बांबटुकाय क्ष्रौ, क्ष्रौ आपदुद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं बटुकाय स्वाहा" यह मंत्र बतलाया है। इसके ऋषि कालाग्निरुद्र हैं।

अरिष्टनिवारण मंत्र—

ॐ क्ष्रौ क्ष्रौ स्वाहा।

शान्ति-प्राप्ति के लिये—

ॐ ह्रां ह्रौ नमः ॐ भूः ॐ भुवः ॐ ह्रीं बटुकाय विद्महे आपदुद्धारणाय धीमहि तन्नो बटुकः प्रचोदयात् ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः ॐ नमः ह्रीं ह्रां ॐ।

इसी प्रकार भैरव के अनन्त रूपों के अनन्त मंत्र तंत्र ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं तथा "आकाश भैरव" तथा स्वर्णाकर्षण-भैरव की उपासना तो अनेक साधक करते भी हैं।

साधकगण उत्तरोत्तर साधना करते हुए आगे बढ़ें और शास्त्राज्ञा एवं गुरु-उपदेश के अनुसार अपनी प्रगति कर भैरव की कृपा प्राप्त करें।

ॐ ह्रीं क्ष्मौं व्रौं ह्रीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारणभैरवाय नमः।

यह मंत्र भी है।

रक्षा-प्राप्ति के लिये निम्नलिखित मंत्र जप करें—

ॐ ह्रीं भैरव भैरव भयकरहर मां रक्ष-रक्ष हुं फट् स्वांहा।

सर्वविध बाधा-निवारण के लिये यह उत्तम मंत्र है—

ॐ भैरवाय वं वं वं ह्रां क्षरौ नमः।

सिद्धिप्रभ भैरव मंत्र—

ॐ ह्रीं बटुकाय क्ष्रौ क्ष्रौ आपदुद्धारणाय सर्वबाधाविनिर्मुक्तं धनधान्य समन्वित च मां कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ नमः।

श्री बटुक—मालामंत्र—

ॐ ऐ ह्रीं श्री ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं द्रां द्रीं क्री स्वं सः ही ही हां ह्रीं ह्रुं भ्रां भ्रीं भ्रूं वं शलवरयूं महाकालाय महाभैरवाय मां रक्ष रक्ष मम पुत्रान् रक्ष रक्ष मम भ्रातरं रक्ष रक्ष शिष्यान् रक्ष रक्ष साधकान् रक्ष रक्ष समं परिवार रक्ष रक्ष ममोपरि दुष्टदृष्टि दुष्टबुद्धि प्रयोगान् कुर्वन्ति कारयन्ति करिष्यन्ति तान् हन् हन पापं मथ आरोग्यं कुरु परबलानि क्षोभय क्षोभय क्षौ क्षौ ह्रीं बटुकाय के लिये रुद्राय नमः।

यह माला मंत्र मूल मंत्र जप के आदि और अन्त में ३-३ बार अवश्य जपना चाहिये।

मूलमंत्र—

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणं कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ स्वाहा।।

भैरवमंत्र—

ॐ वं वं वं बटुकभैरवाय नमः। कृष्णभैरवाय नमः।

अध्याय-७

विविध हवन सामग्री प्रयोग

साधक वशीकरण के लिये—लाल पुष्प, लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये—कमलपुष्प, दीर्घ आयु के लिये—दूर्बा, कुरोगनाश के लिये—गुड, वस्त्र-प्राप्ति के लिये—वस्त्र, धान्य-प्राप्ति के लिये—धान्य, सर्वसिद्धि के लिये—पुत्रजीवफल, पुत्र-प्राप्ति के लिये—अश्वत्यसमिधा, शत्रुनाश के लिये—लवण-घृत, वाक्सिद्धि के लिये—पलावपुष्प, कवित्व-प्राप्ति के लिये—कपूर अगर गूगल, राज के लिये—सरसों तथा पटसन, अन्न-वृद्धि के लिये—घृताक्त अन्न, चिरजीविता के लिये—लाजा और घृत।

इसी प्रकार बहुत-सी वस्तुओं के द्वारा तथा अन्य तांत्रिक विधानों से भी कार्यसिद्धियां होती हैं। इस सब में श्री बटुक भैरव का मंत्र जप आवश्यक है। ग्रहण अथवा उत्तम पर्वों के अवसर पर मंत्र का पुरश्चरण कर लेने से ये प्रयोग शीघ्र फल प्रदान करने वाले कहे गये हैं।

वन्ध्या पुत्रप्रद प्रयोग

आधा पल हल्दी और उतना ही वछ का चूर्ण, गोमूत्र तथा गोघृत मिलाकर उसकी गोली बनायें तथा उसे कमल की पंखुड़ी में रखकर बटुकनाथ के समक्ष रखें और १००० संख्या में मंत्र का जप करें। बाद में उसे अभ्रुप्राप्ति की कामना से वह गोली खिला दें तो पुत्र-प्राप्ति होगी।

रविवार के दिन प्रातःकाल श्मशान में जाकर मंत्र का १०,००० जप करें तथा अर्द्धरात्रि के समय जायफल, जावित्री तथा कनेर के फूल घृत में मिलाकर दशांश हवन करें तो शत्रुस्तम्भ हो।

मोहन प्रयोग

सोमवार को मध्याह्न के समय कुयें के जल से स्नान कर गूणी में बैठकर मंत्र का १०,००० बार जप करें तथा महिप का घृत, दही और चीनी—इनको मिलाकर हवन करें तथा हवन का तिलक करें तो जो देखे वही वश में हो।

मारण प्रयोग

मंगलवार को अर्द्धरात्रि के समय चौराहे पर जाकर मंत्र का १०,००० जप करें। घृत, खीर, लाल चन्दन व स्त्री के केश मिलाकर दशांश हवन करें तो काल के समान होने पर भी शत्रु अवश्य नाश को प्राप्त हो।

आर्ध्वय प्रयोग

बुधवार को चार घड़ी सूर्य रहे तब सूने घर में जाकर मंत्र का १०,००० जप करें। फिर घृत, खांड, सनैली का फूल अथवा कनेर के फूल, बिल्व का फल—इन सबकी दशांश आहुति दें तो आकर्षण हो।

वशीकरण प्रयोग

बृहस्पतिवार को प्रातःकाल सूर्योदय के समय नदी के किनारे जाकर मंत्र का १०,००० जप करें तथा घृत, आंवला और बिल्व-फल का दशांश हवन करें तो वशीकरण हो।

उच्चाटन प्रयोग

गुरुवार के दिन सायंकाल वट-वृक्ष के नीचे बैठकर मूलमन्त्र का १०,००० जप करें फिर घृत, दूध, दही, ईत्र का रस, गोमूत्र और खीर मिलाकर दशांश का हवन करें तो शत्रु का उच्चाटन हो।

यह मन्त्र सरल और अत्यन्त उपयोगी है। अगर कोई सम्पूर्ण आस्था के साथ इसकी साधना करके इसे सिद्ध कर लेता है तो उसे पर्याप्त लाभ मिलता है।

प्रातःकाल पवित्र होकर, धुले वस्त्र पहनकर, साधक को आसन ग्रहण करना चाहिये। मुंह पूर्व की ओर करके भैरव का ध्यान करें और उपरोक्त मन्त्र का १०९ बार जप करें। यह क्रिया २१ दिन तक करें। इस मन्त्र की खास विशेषता यह है कि जप मन्त्र सिद्ध होगा और रोजगार मिलेगा।

मन्त्र इस प्रकार है—

काली कंकाली महाकाली मरे सुंदर जिए काली, चार वीर भैरूं चौरासी तब तो पूजूं पान मिठाई, अब बोली बाबा भैरव की दुहाई।

भैरव तो मात्र उस सर्वव्यापी शक्ति, उन महाविद्याओं का ही अंश-स्वरूप है और जब महाविद्याओं की साधना करने में कोई नुकसान नहीं, तो फिर भैरव की साधना में ऐसा कैसे सम्भव है....और अगर अनुभव के आधार पर सच कहूं तो भैरव-साधना अन्य शक्ति साधनाओं से अधिक उपयोगी एवं उन तक पहुंचने की प्रथम सीढ़ी है।

शिव की शिवापूर्ण शक्ति-रूपा मां है और उन्हीं के दस अंशों से दस महाविद्याओं का प्रादुर्भाव होता है अर्थात् अगर हम दसों महाविद्याओं को संग्रहीत करें तो जो पिंड प्राप्त होगा वही वास्तव में भैरव की शक्ति कहलाती है।

सिद्ध तांत्रिकों को रहस्यवादी गुप्त साधना की तरफ लोगों को खींचा, परन्तु मनुष्य के अहं के कारण गुप्त तन्त्रों, इनके ग्रन्थों का लोप हो गया, फिर भी नाथों ने इस विद्या को अपनाया, सम्वर्भित किया, तन्त्र को सीखा, भैरव-उपासना को यवनों को दिया भी मूल यवन तन्त्र भैरव उपासना है। इस प्रकार भैरव-साधना पद्धति का निर्माण हुआ।

तांत्रिकों की दृष्टि में संन्यास धारण कर वन में रहना या गृहवास करना भैरव सिद्ध-प्राप्ति का साधन नहीं, क्योंकि बोधि न घर में है और न वन में। इस भेद को भली प्रकार जानकर चित्त को निर्मल करें। वही यथार्थ है। मेरी इस बात का सदैव ध्यान रखें।

अब श्री क्रोध भैरव-साधना प्रस्तुत है।

मन्त्र जप के समय धैर्य की परम आवश्यकता है, क्योंकि इस तीव्र मन्त्र का जप अत्यन्त दुष्कर है। मन्त्र जप सम्पुप्त होने के पश्चात् कुछ देर तक अपने आसन पर आंख मूंदकर बैठे रहें और अपने शत्रु को काल्पनिक रूप से समक्ष मानकर अपना उग्र रूप बनावें।

शनैः-शनैः स्वतः ही चित्त-शांति हो जाने पर उठकर सामग्री को श्मशान में फेंक दें तथा यंत्र को भी पोंछ कर साफ कर लें तथा स्वयं भी पुनः स्नान कर लें। अगर कोई अज्ञात शत्रु हो, तो समस्त साधना सामग्रियों के साथ कुछ साबुत काली लवंग के दाने भी रखकर मेरे सभी ज्ञात-अज्ञात शत्रुओं को मति स्तम्भित हो कहकर उसे भी वहीं फेंक दें।

श्री भैरव केवल शत्रुनाश हेतु ही नहीं, अपितु साधना की ऊंचाइयों को प्राप्त करने के लिये भी श्री भैरव का उग्र रूप में स्मरण करना पड़ता है। श्री भैरव तामसिक देव ही नहीं अपितु तामसिक शक्तियों के अधिष्ठाता भी हैं।

साधक यंत्र का निर्माण करें तथा जहां जहां "भ" बीज "र" बीजमन्त्र अंकित हैं उन पर पुष्प चढ़ावें। निम्न मन्त्र का अभिमंत्रित शुद्ध मूंगे की माला से मन्त्र जप करें। मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ हुं ह्रौं रं ज्वाल करालायै क्रोधश्च काल भैरवाय नमः।

प्रत्येक मंत्र साधना मंत्र देवता की सृष्टि करती है और शनैः-शनैः इनकी संख्या बढ़ती जाती है।

श्री भैरव-साधना सम्पन्न करके साधक ज्ञान-विज्ञान में अग्रणीं हो जाता है

तथा किसी भी विषय पर घण्टों धाराप्रवाह बोलना उसके लिये बायें हाथ का काम होता है। इस तरह वह समस्त विद्वत् समाज में पूज्यनीय होता है।

भैरव क्योंकि स्वयं समस्त सिद्धियों का स्वामी है अतः ऐसा साधक स्वयं भी समस्त सिद्धियों को हस्तगत कर लेता है और दिव्य पुरुष कहलाता है।

यह जीव अनादि काल से संसार के कल्पित नाम रूपों में आसक्त होकर विविध प्रकार के दुःखों को भोग रहा है। कलियुग में वेद विहित कर्मों का अनुष्ठान ठीक-ठीक नहीं हो पाता, उसमें कमीबेशी हो जाती है, अतएव फल-प्राप्ति में सन्देह होता है केवल श्री भैरव-साधना ही सम्पूर्ण फल प्रदान करती है इसमें भी सन्देह नहीं है।

न कोई देव न देवी छोटे होते हैं, न कोई उच्च। आवश्यकता होती है, तो केवल एक सम्पूर्ण दृष्टि की और यही बात भगवान भैरव के प्रति प्रचलित मान्यताओं के प्रति भी कही जा सकती है।

श्री भैरव साधक कहने के इच्छुक साधक को चाहिये, कि वह समय रहते भैरव यंत्र व अभिमंत्रित माला को प्राप्त कर रविवार की रात्रि में दस बजे चमकीले काले वस्त्र पहन साधना में प्रवृत्त हो। दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बैठना आवश्यक है। कड़वे तेल का दीपक जलायें और उसकी निम्न मन्त्र से अभ्यर्धना करें—

ॐ ह्रीं ऐं श्रीं क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञाय प्रचण्ड पराक्रमाय बटुकाय इमं दीपं ग्रहाण सर्वकार्यणि साधय साधय, दुष्टान नाशय नाशय, त्रासय त्रासय सर्वतो रक्षां कुरु-कुरु हुं स्वाहा।

इसके पश्चात् अक्षत, कुमकुम, पुष्प व जल हाथ में लेकर दीपक के सामने छोड़ निम्न मन्त्र उच्चरित करें—

गृहाण दीपं देवेश, बटुकेश महाप्रभो।
ममाभीष्टं कुरु क्षिप्रमापद्भ्यो समुद्धर।।

फिर निम्न मन्त्रोच्चारण के साथ दीपक को प्रणाम करें—

भरे बटुक! मम् सम्मुखोभव, मम कार्य कुरु-कुरु इच्छित।
देहि-देहि मम सर्व विध्नान् नाशय नाशय स्वाहा।।

अपने मन की इच्छाओं व उनमें आ रही बाधाओं का उच्चारण कर साथ ही श्री भैरव से प्रार्थना कर निम्न मन्त्र की ५१ माला जप करें। मन्त्र जप दीपक की लौ पर ध्यान केन्द्रित करते हुये ही करें—

मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ ह्रीं काल भैरवाय ह्रीं नमः।।

मन्त्र जप के पश्चात् पुनः दीपक के सम्मुख निम्न मन्त्र का उच्चारण करें—

श्री भैरव नमस्तुभ्यं सत्वरं कार्यसाधक
उत्सर्जयामि ते दीपं त्रायस्व भवसागरात्
मन्त्राणाक्षर हीनेन पुष्पेण विकलेनवा
पूजितोऽसि मयादेव! तत्क्षमस्व मम प्रभो।

ध्यान रखें, कि दीपक को बुझाना नहीं है अपितु वह जब तक जले उसे जलने देना है। तंत्र साहित्य के शोध में रुचि होने के साथ-साथ तन्त्र-मन्त्र के स्थलों और घटनाओं को देखने की मेरी प्रबल जिज्ञासा प्रारम्भ से ही रही। जहां भी जाता तो सबसे पहले ऐसे स्थानों की जानकारी अवश्य लेता और वहां जाकर घटनाक्रम को देखता। भैरव-साधना पर भी खोज मैंने बड़ी लग्न से की है।

भैरव-साधना का एक पक्ष यह भी है, कि जहां वे एक उग्र देव हैं वहीं अन्तर्मन से पूर्ण शांत व चैतन्य देव भी हैं जिनकी यथेष्ट रूप में उचित साधना विधि से साधना करने पर यह सम्भव ही नहीं है कि उनके साधक के जीवन में किसी प्रकार का भौतिक अभाव रह जाये।

श्री भैरवजी की सवारी कुत्ता है। श्वान पर सवार श्री भैरव की साक्षात् पूजा-अर्चना की जाती है। श्री भैरव के दर्शन के पश्चात् नवग्रह की पूजा-अर्चना करने का विधान है। नवग्रह में क्रमशः गणेशाय नमः, मंगलाय नमः, सूर्याय नमः, चंद्राय नमः, बुद्धाय नमः, गुरुवे नमः, शुक्राय नमः, शनि देवाय नमः, राहवे नमः, और केतवे नमः देवों की पूजा की जाती है।

श्री भैरव श्मशानवासी हैं। भूत-प्रेत यानियों के अधिपति हैं। अपने भक्तों की हर प्रकार से रक्षा एवं शत्रुओं का संहार किया करते हैं। सभी प्रकार की विघ्न-बाधाओं को दूर कर बल, बुद्धि, तेज, धन और यश देकर मुक्ति प्रदान करते हैं।

श्री भैरव के समक्ष ६ मास तक जप करने वाला मनुष्य श्री भैरवनाथ की आज्ञा से सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। काशी में रहने वाला व्यक्ति यदि कालराज का भजन नहीं करता तो उसका पाप बढ़ता ही जाता है। कारागार में रहने वाला अथवा किसी बड़ी मुसीबत में फंसा हुआ व्यक्ति श्री भैरव के प्रादुर्भाव की कथा को अगर श्रद्धापूर्वक सुने तो वह संकट से मुक्त हो जाता है।

श्री भैरव की उपासना वेद व पुराणों में भी वर्णित है। इनकी उपासना में फल-फूल, नारियल, देशी कपूर, सिंदूर, लोहबान एवं मद्य का विशेष महत्व है। इनकी साधना में मन्त्र जाप रुद्राक्ष की माला से भी किया जाता है।

होली या रविवार के दिन रात्रि दस बजे के बाद स्नानादि से निवृत्त होकर चमकीली धोती पहनकर तथा काले ही आसन पर दक्षिणाभिमुख होकर बैठ जायें।

किसी पात्र में काले तिल की ठेरी बनाकर उस पर भैरव यंत्र स्थापित करें। पंचोपचार, पूजन करें। एकाग्र भाव से रुद्राक्ष की माला से २१ माला २१ दिन तक जप करें तो आर्थिक विषमता तथा दरिद्रता नाश के लिये इससे बढ़कर अचूक साधना कोई नहीं है। व्यवसाय-वृद्धि तथा व्यापारिक उन्नति के लिये स्वर्णाकर्षण भैरव-साधना अत्यंत उपयोगी बताई गई है। मन्त्र महोदधि नामक प्राचीन तन्त्र ग्रंथ के अनुसार जो व्यक्ति नित्य ५१ दिन ५०० मन्त्र जप करता है, उसकी दरिद्रता दूर हो जाती है।

प्रायः लोग धन सम्बन्धी समस्याओं के लिये तथा कुबेर की साधना करते हैं। उचित जानकारी के अभाव में वे स्वर्णाकर्षण भैरव-साधना से वंचित ही रहते हैं, क्योंकि बहुत कम लोग इस तथ्य से अवगत हैं कि भैरव रक्षाकारक देव होने के साथ धन, समृद्धि प्रदायक भी हैं। मन्त्र इस प्रकार है—

ऐं ह्रीं श्रीं ऐं श्रीं आपदुद्धारणाय ह्रां ह्रीं ह्रूं अजामलबलद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णार्षण भैरवायै दारिद्र्य विद्वेषणाय महाभैरवायै नमः श्रीं ह्रीं ऐं।।

जीवन में व्यापार की सफलता, नौकरी में उत्थान, स्वास्थ्य की प्राप्ति, वैवाहिक कष्टों से मुक्ति, शीघ्र विवाह तथा असाध्य रोगों, परेशानियों से छुटकारा पाने हेतु भैरव देव की साधना हेतु कुछ मन्त्रों का नियमित जप सिद्धिदायक माना गया है।

शब्दों के विशिष्ट समूह को मन्त्र कहते हैं। ग्रहों के दुष्टप्रभावों के कारण जीव को अनेक बार कष्ट उठाने पड़ते हैं। ग्रहों के इन दुष्टप्रभावों को न्यून करने में मन्त्र साधना का विशिष्ट महत्व है। मन्त्र साधना में त्रुटि नहीं होनी चाहिये, अतः मन्त्रोच्चार किसी योग्य गुरु के निर्देशन में ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण भाव रखते हुये शुभ मुहूर्त में विधि-विधान से करना चाहिये। साधकों के ज्ञानवर्धन हेतु कुछ सुगम एवं कल्याणकारी मन्त्रों का वर्णन दिया जा रहा है—

यह भैरव-साधना अत्यधिक सुगम एवं सरल है और इसको स्त्री-पुरुष, कोई भी सम्पन्न कर सकता है। इसमें निम्न सामग्री की आवश्यकता होती है। वह है भैरव-यंत्र और अभिमंत्रित काली रुद्राक्ष की माला किसी भी कृष्ण पक्ष के शुक्रवार को रात्रिकाल में साधक सफेद स्वच्छ धोती पहनकर श्वेत आसन पर दक्षिणाभिमुख होकर बैठ जाये और अपने सामने सफेद वस्त्र पर भैरव-यंत्र स्थापित कर, उसका विधिवत् पंचोपचार पूजन सम्पन्न करे। फिर यंत्र पर लाल सिन्दूर अर्पित करते हुये जीवन में सभी दृष्टियों से पूर्णता प्राप्त करने की इच्छा कहे तथा कामना करे कि भैरव निरन्तर सहयोगी बने रहें।

इसके उपरान्त से निम्न मन्त्र की ३१ मालायें मंत्र जप करें।

मंत्र— ।। ॐ भ्रं भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवनाथाय फट्।।

साधना समाप्ति के उपरान्त समस्त साधना सामग्रियों का किसी भैरव-भक्त को दान कर दें। ऐसा करने से साधना फलीभूत होती है तथा साधक की मनोकामनायें पूर्ण होती हैं और वह संसार में धन, मान, यश, प्रतिष्ठा एवं वैभव प्राप्त कर सबके द्वारा आदरणीय होता है।

मेरी इस पुस्तक में से श्री बटुक भैरव स्तोत्र कहा जाता है। एक समय भगवान शंकर कैलास पर्वत पर माता पार्वती के साथ बैठे हुये थे। माता पार्वती ने उनसे प्रश्न किया कि आप सब धर्म शास्त्रों के प्रणेता हैं, कृपया कोई ऐसा मन्त्र बताइये जो आपदाओं से उद्धार करने वाला हो और साधक को सर्वसिद्धियों का देने वाला हो। तब भगवान शंकर ने कहा कि हे देवी! सुनो मैं तुम्हें वह मन्त्र बताता हूं जो सब दुःखों को दूर करने में समर्थ है, शत्रुओं का नाश करने वाला, रोगों को दूर करने वाला, ग्रहों को शांत करने वाला, विपदाओं से रक्षा करने वाला है। जो अभी तक किसी को ज्ञात नहीं था, जिसके स्मरण मात्र से भूत-प्रेत पिशाच दूर भाग जाते हैं, वह मन्त्र यह है—

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुउद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ नमः शिवाय।

भैरव शिव के अतिप्रिय, विश्वासपात्र, निकट और शक्तिवान गण हैं। वे स्वयं में देवताओं की भाँति पूज्य हैं। उन्हें शिवजी के गणों में सर्वोच्च अधिकारी माना जाता है। जहां कहीं भी मंदिर निर्मित होता है, वहां एक रक्षक के रूप में भैरवनाथ की प्रतिमा भी स्थापित की जाती है। मंदिरों में जहां शिवजी के ज्योतिर्लिंग स्थापित हैं, वहां भैरव भी कहीं न कहीं दृष्टिगोचर होते हैं। भैरव के अनेक रूप हैं— काल भैरव, रुद्र भैरव और बटुक भैरव आदि। तन्त्र साधना में बटुकभैरव को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। वैसे किसी भी रूप में भैरव की स्तुति की जाये वह निःसन्देह फलदायक होती है।

हालांकि भैरव की रूपाकृति भयंकर है, देखने मात्र से रोमांच हो जाता है। किन्तु अपने भक्तों पर कृपालु होकर, उनका संकट निवारण करने में आगे रहते हैं। भैरव की सबसे सरल स्तुति तो यह है कि उनके नाम का स्मरण किया जाये। नाम स्मरण के लिये मन्त्र की भाँति इस प्रकार उनका नाम का जप किया जा सकता है—

भैरवाय नमः अथवा ह्रीं भैरवाय नमः अथवा ॐ भैरवाय नमः अथवा ॐ ह्रीं भैरवाय नमः।

केवल इतना ही करने से भैरवनाथ प्रसन्न होते हैं।

हमारे तन्त्र शास्त्रों में बटुक भैरव की साधना भी दी गई है। तन्त्र साधना में भी हम मन्त्र का प्रयोग तो करते हैं परन्तु इसमें हम कुछ विशिष्ट वस्तुओं का हवन, दीपदान आदि करके देवता की प्रसन्नता प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं।

किस प्रकार की कार्यसिद्धि के लिये हवन सामग्री आदि किन पदार्थों से बनाई जाये यह स्मरण रखना आवश्यक है।

"रुद्रयामल तन्त्र" जिसमें बटुक भैरव स्तोत्र दिया गया है उसी में बटुक भैरव के कुछ तांत्रिक प्रयोग भी दिये हुये हैं। समस्त प्रयोगों में जप मन्त्र वही है अर्थात्—**ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारण कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ स्वाहा।** दो तोला हल्दी और इतनी ही मात्रा में बच लेकर बारीक कूटकर कपड़े में छानकर चूर्ण बना लें। इसमें थोड़ा-सा गोमूत्र तथा थोड़ा-सा देशी घी मिलाकर ५-५ रत्ती की गोलियां बनाकर इन्हें कमल की पंखुड़ी में रखकर बटुक भैरव के सामने रखें और एक हजार एक की संख्या में उपरोक्त मन्त्र का जप करें। बाद में इसकी एक-एक गोली सेवन करायें उसके गर्भ स्थापित होता है।

निम्न मन्त्र सवा लाख जप कर जप का दशांश करने पर सिद्ध होता है। प्रतिदिन प्रातःकाल पवित्र होकर यथाविधि पूजनादि करने के पश्चात् यथाशक्ति संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिये।

इस प्रकार साधना करने से भैरव सिद्ध हो जाते हैं और वे साधक की अभिलाषा पूर्ण करते हैं। मन्त्र इस प्रकार है—ॐ नमो काल गौराक्षेत्रपाल बामं हाथं कान्ति जीवन हाथ कृपाल, ॐ सूरजथंभ प्रातः-सायं रथभेजलतो विसाररारथंभ कुसीचाल पाषान चाल शिला चाल चाल हो चाली न चाले तो पृथ्वी मारे को पाप चलिये चोखा मन्त्र ऐसाकुनी अबनारहसही।

साधना के द्वारा धारण करने हेतु गंडा बनाया जाता है। गंडा ही श्री काल भैरव का प्रमुख रूप से प्रसाद है। गंडा एक प्रकार का रेशमी काले व पीले भूरे रंग के धागे से गुथकर बनाया जाता है। अधिकतर काले रंग का रेशमी धागा ही इसमें प्रयोग किया जाता है। गंडा तांत्रिकों द्वारा निर्मित किया जाता है। ऐसा माना जाता है कि इसको धारण करने से ग्रह-बाधा एवं भूत-प्रेत अनेकानेक बीमारियों से शीघ्र मुक्ति मिलती है।

यह तो पहले ही लिखा जा चुका है कि न तो इन मन्त्रों का धर्म-ग्रन्थों और तन्त्र शास्त्रों की पुस्तकों में कहीं वर्णन मिलता है और न ही इनके महत्व एवं विधि-विधान के बारे में विश्वासपूर्वक कुछ कहा जा सकता है। वैसे भी यंत्र, मन्त्र और तन्त्र की साधना के लिये किसी योग्य और समर्थ गुरु का मार्गदर्शन अनिवार्य है। केवल सुनी-सुनाई बातों के आधार पर अथवा पुस्तक पढ़कर इस प्रकार के मन्त्रों की साधना को हानि भी पहुंचा सकती है। इस विषय में सावधानी अनिवार्य है। एक और मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ नमो काली कंकाली महाकाली के पूत कंकाली भैरव हुक्मे

हाजिर रहे मेरा भेजा तुरत करे रक्षा करे आन बांधूं बान बांधूं चलते-फिरते को औसान बांधूं दशोदिशा बांधूं नौ नाड़ी बहत्तर कोण बांधूं। फूल में भेजूं फूल में जाये काठे जी पड़े थर-थर कांपै हल हल हलै गिर गिर परै उठ उठ भगै बक बक बकै मेरा भेजा सवा घड़ी पहर सवा दिन सवा मास सवा बरस का बावला न करे तो काली माता की शय्या पर पांव धरे, वचन जो चूकै तो समुद्र सूखै, वाचा छोड़ कुवाचा करै तो धोबी की नाद चमार के कुण्ड में परै। मेरा भेजा बावला न करै तो रुद्र के नेत्र से अग्नि ज्वाला कढ़ै सिर की जटा टूटि भूमि पर गिरे माता पार्वती के चीर पै चोट पड़ै, बिना हुक्म के नहीं मारना, हो काली के पुत्र कंकाल भैरव फुरो मन्त्र इश्वरो वाचा।

मेरी इस पुस्तक में बार-बार यज्ञ के विषय में कहा गया है। यज्ञ का अपना वैज्ञानिक और शास्त्रोक्त अर्थ है।

इस सृष्टि के क्रिया-कलाप यज्ञ-रूपी धुरी के चारों ओर चल रहे हैं। ऋषिये ने "अय यज्ञों विश्वस्य भुवनो भुवन नामि" कहकर यज्ञ को भुवन की इस जगती की सृष्टि का आधार कहा है।

यज्ञ हमारी वैदिक संस्कृति का एक प्रमुख स्तम्भ है। गायत्री और यज्ञ का युग्म है। एक को भारतीय संस्कृति की जननी और दूसरे को भारतीय धर्म का पिता कहा गया है। दोनों एक-दूसरे पर आधारित हैं। प्राचीनकाल से आज तक यज्ञ हमारी परम्पराओं से किसी न किसी रूप से जुड़ा रहा है। ब्राह्मण, पण्डित तांत्रिक का तो मुख्य धर्म-यज्ञ ही था और उनका समस्त जीवन यज्ञ के आयोजनों में लगा रहता था।

वैदिक काल सृष्टि का आरम्भिक काल माना गया है। सृष्टि के आदि में हमें भगवान का ज्ञान वेद तत्व ऋषियों द्वारा प्राप्त हुआ। प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रंथ सिद्धान्त शिरोमणि में कहा गया वेदास्ता वेद यज्ञ कर्म प्रकृताः यानी यज्ञ ज्योतिष के आइने में भी महत्वपूर्ण हैं। वेद का मंत्र भाग भी यज्ञ के बारे में यही बताता है। जिस प्रकार परमात्मा वेद के प्रत्येक मन्त्र से प्रतिपादित है ठीक उसी प्रकार यज्ञ भी वेद के प्रत्येक मन्त्र से प्रतिपादित हैं। जन्म से लेकर मरण तक संस्कारों का विधान है ये सभी यज्ञ परक हैं। यज्ञ के बिना इनमें से एक भी संस्कार सम्पन्न नहीं हो सकता। यज्ञोपवीत का तो नाम ही यज्ञ की महत्ता का बोधक है। विवाह संस्कार में तो यह एक मुख्य धर्म है। यज्ञ का भौतिक विज्ञान भी है। वायु शोधन की दुर्गन्ध को सुगन्ध से दमन करने की यह प्रक्रिया मनुष्य की सबसे बड़ी खुराक, प्राण वायु के परिशोधन में महत्वपूर्ण योगदान करती है। रोग कीटाणुओं को मारने की जितनी शक्ति यज्ञ में है उतनी सरल और सस्ती पद्धति अभी तक नहीं खोजी जा सकी है।

साधनाओं में हवन अनिवार्य है। जितने भी जप किये जाते हैं चाहे वो वेदोक्त हों चाहे तांत्रिक हवन उनमें आवश्यक है । अनुष्ठान या पुरश्चरण में जप से दसवां भाग हवन होता है। अगर किसी कारण दसवें भाग की आहुति न दी जा सके तो सौवां भाग आवश्यक है ही। पापों के प्रायश्चित-स्वरूप दुर्भाग्यों की शान्ति किसी अभाव की पूर्ति कोई सौभाग्य प्राप्त करने रोग निवारणार्थ, देवताओं को प्रसन्न करने के हेतु यज्ञ किये जाते थे। प्रयोग होने वाली हवन सामग्री निम्न है। अगर, तगर, देवदारु, चन्दन, रक्त चन्दन, गुग्गुल जायफल, लौंग, चिरायता, असगंध यह दसों वस्तुयें समान भाग में लेनी चाहियें, साथ में दसवां भाग शर्करा और दसवां भाग शुद्ध घी भी मिला लेना चाहिये।

प्रिय साधकों! साधना प्रारम्भ करने से पूर्व नित्य सम्पन्न करने के बाद और हल्का-सा व्यायाम कर लें तो अधिक उचित है। प्रयोग सम्पन्न करने के बाद हल्का फलाहार या गऊ का दूध अपनी सुविधानुसार ग्रहण कर लें, तत्पश्चात् ही अपने दैनिक कार्य को करना शुरू करें।

तन्त्र साधना से आप समस्त रोगों का शमन कर सकते हैं। इनमें से दो प्रकार के रोगों को अवश्य ठीक किया जा सकता है, क्योंकि आधुनिक युग में हृदय रोग, रक्तचाप एवं कुष्ठ रोग का शिकंजा हमारे जीवन पर निरन्तर कसता जा रहा है।

शास्त्रों ने कहा है, "शरीर व्याधि मंदिर" अर्थात् हमारा यह शरीर रोगों का घर है। यह शास्त्रोक्ति ही न समझें, इसे हम और आप नित्य अनुभव करते हैं।

साधना में सब प्रकार के रोगों का नाश करने की अपूर्व शक्ति है। प्रकृति के विकास एवं संहार में देश-विदेश के सभी वैज्ञानिकों ने महत्वपूर्ण माना है। अगर शरीर रोगों का घर है तो यज्ञ रोगों का विनाश करने वाला है। अतः हमें यज्ञ अवश्य करना चाहिये। यज्ञ से आत्मिक विकास भी होता है। हमारी इच्छाशक्ति, आत्मविश्वास साधना पर निर्भर है। जिसके शरीर में बहता रक्त शुद्ध एवं शक्तिशाली होता है वह सब प्रकार से सुखी रहता है।

अध्याय-८

भैरव यन्त्र साधना

अपने प्रबुद्ध पाठकों की जानकारी और प्रयोग के लिये कुछ चमत्कारी 'भैरव यन्त्र प्रस्तुत कर रहा हूं। आप इन्हें अभिमंत्रित कर प्रयोग में ला सकते हैं।
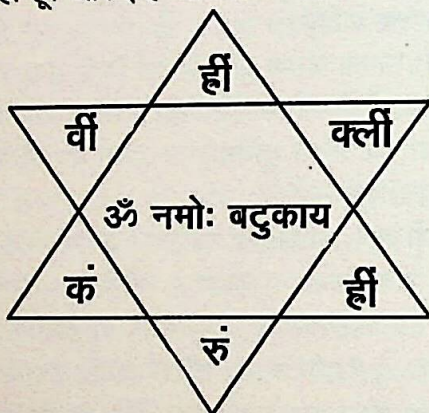
ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं

क्रोध भैरव यन्त्र
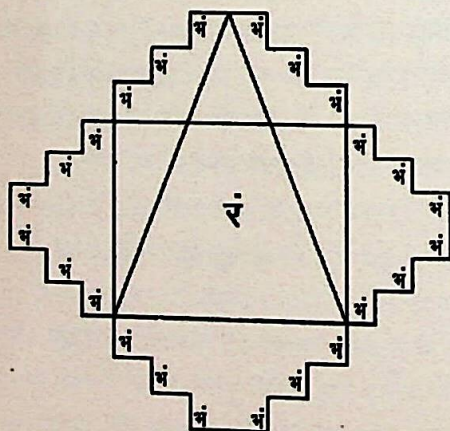
क्रोधभैरव-संयोगाद् यक्षिण्यः सिद्धिदा यथा।
तथा विद्याः प्रसद्धिध्यन्ति पुंयोगादेव पार्वति।।
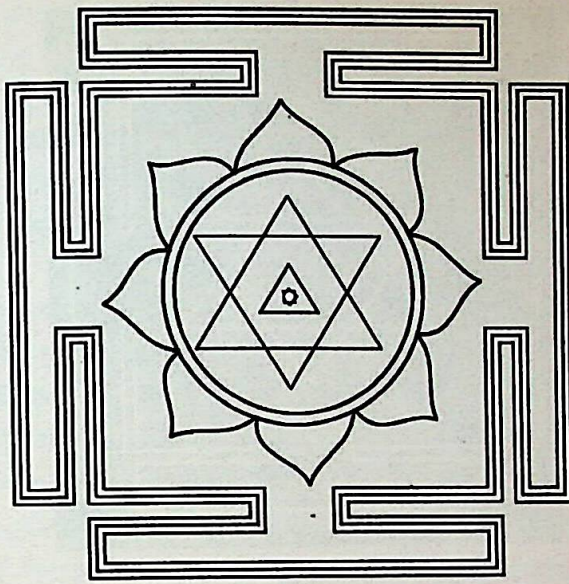
भक्त्या नमामि बटुकं तरुण त्रिनेत्रं,
कामप्रदान् वरकपालत्रिशूलदण्डान्।
भक्तार्तिनाशकरणे दधतं करेषु,
तं कौस्तुभाभरणभूषितदिव्यदेहम्।।
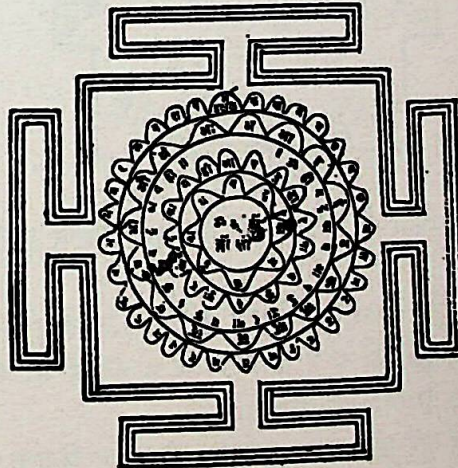
ॐ ऐं क्लीं क्लूं ह्रां ह्रीं हूं सः वं आपदुद्धारणाय अजामलबद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णाकर्षणभैरवाय मम दारिद्र यविद्वेषणाय ॐ ह्रीं महाभैरवाय नमः।

श्री भैरव पूजन यन्त्र
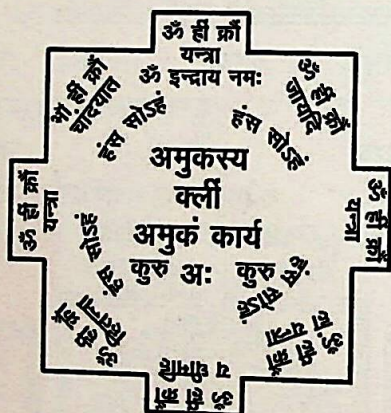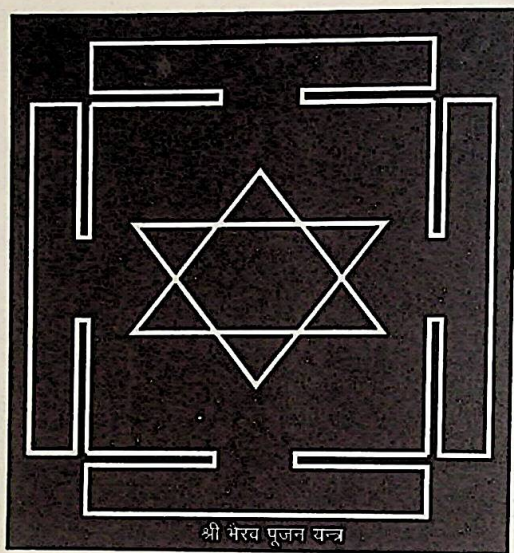
अब मैं सभी प्रकार के भैरव यन्त्रों के लिये संक्षिप्त प्राण-प्रतिष्ठा विधि प्रस्तुत कर रहा हूं।

कुशा अथवा दूर्वा लेकर उससे यन्त्र का स्पर्श करते हुये—

ॐ ऐं ह्रीं आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं हं ॐ हं सः सोहं सोहं हंसः शिवः अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणाः।

ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य जीव इह स्थितः। सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्। ज्योक् पश्ये म सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडया नः स्वस्ति।।

इन मन्त्रों को बोलकर यन्त्र में प्राण, जीव, वाणी, मन, त्वचा, नेत्र, कर्ण जिह्वा, नासिका आदि सभी इन्द्रियां निवास कर रही हैं और यह यन्त्र साक्षात् भगवत्स्वरूप हो गया है ऐसा मानकर यन्त्र की पूजा करें।

जो साधक यन्त्र को धारण करना चाहता है, तो वह शुभ मुहूर्त वाले दिन प्रातः शुद्ध स्नान करके, शुद्ध धुले हुये वस्त्र धारण कर मस्तक पर तिलक लगाये तथा 'यन्त्र लिखने के लिये दिखाये गये द्रव्यों से' किसी शुद्ध स्थान पर बैठकर यन्त्र लिखे।

सोलह संस्कार जिस प्रचार बालक के गर्भ से लेकर जीवन के अन्त तक चलते हैं वैसे ही यहां भी होते हैं।

सभी प्रकार के यन्त्रों को धारण करने के लिये तन्त्र शास्त्रों में जो विधि कही गई है, वह इस प्रकार है—

सुस्नातः सुवस्त्र-चन्दनादिभिर्भूषितो यथोक्तद्रव्यैः शुद्धदेशे यन्त्रं लिखेत्। तत्रादौ षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्ये बीजं तद्धो द्वितीयान्तं साध्यनाम तत्पार्श्वयोः 'कुरु-कुरु' तद्धो वियद्युक्तं सर्गबीजं लिखेत्। तत ईशानादि-चतुष्कोणेषु 'हंसः सोऽहं' प्राणबीजं चतुर्दिक्षु दिग्बीजानि प्रतिदिशं यन्त्रगायत्रीवर्णान् लिखेत्। ततः प्राणप्रतिष्ठामन्त्रवर्णैश्च यन्त्रं वेष्टयेत्।

अध्याय-९

श्री गुरु-स्मरणम्

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि।।
प्रातः प्रभृतिसायान्तं सायादि-प्रातरन्ततः।
यत्करोमि जगन्नाथ! तदस्तु तव पूजनम्।।

श्रीशङ्कराचार्य श्रीबटुक-प्रातः स्मरणम्

प्रातः स्मरामि बटुकं सुकुमारमूर्ति, श्रीस्फाटिकाभ-सदृशं कुटिलालकाढ्यम्।
वक्त्रं दधानमणिमादिगुणैर्हि युक्तं, हस्तद्वयं मणिमयैः पदभूषणैश्च।। १।।
प्रातर्नमामि बटुकं तरुणं त्रिनेत्रं, कामास्पदं वरकपाल-त्रिशूल-दण्डान्।
भक्तार्तिनाशकरणे दधतं करेषु, तं कौस्तुभाभरण-भूषितदिव्यदेहम्।। २।।

प्रातः काले सदाऽहं भगणपतिधरं भालदेशे महेशं,
नागं पाशं कपालं डमरुमथ सृणिं खड्गघण्टाभयानि।
दिग्वस्त्रं पिङ्गकेशं त्रिनयनसहितं मुण्डमालं करेषु,
यो धत्ते भीमदंष्ट्रं मम विजयकरं भैरवं तं नमामि।।३।।

देवदेव कृपासिन्धो ! सर्वनाशिन् महाऽव्यय।
संसारासक्त-चित्तं मां मोक्षमार्गे निवेशय।।४।।

अष्टभैरव-मङ्गलम्

आद्यो भैरवभीषणो निगदितः श्रीकालराजः क्रमाद्,
श्रीसंहारकभैरवोऽप्यथ रुरुश्चोन्मत्तको भैरवः।
क्रोधश्चण्ड-कपाल-भैरववरः श्रीभूतनाथस्ततो,
ह्यष्टौ भैरवमूर्तयः प्रतिदिनं दद्युः सदा मङ्गलम्।।

रुद्रयामल के अनुसार चौंसठ भैरव

असिताङ्गो विशालाक्षो मार्तण्डो मोदकप्रियः।
स्वच्छन्दो विघ्नसन्तुष्टः खेचरः सचराचरः।।
रुरुश्च क्रोडदंष्ट्रश्च तथैव च जटाधरः।
विश्वरूपो विरूपाक्षो नानारूपधरः परः।।
वज्रहस्तो महाकायश्चण्डश्च प्रलयान्तकः।
भूमिकम्पो नीलकण्ठो विष्णुश्च कुलपालकः।।
मुण्डपालः कामपालः क्रोधो वै पिङ्गलेक्षणः।
अभ्ररूपो धरापालः कुटिलो मन्त्रनायकः।।
रुद्रः पितामहाख्यश्च व्युन्मन्तो बटुकनायकः।
शङ्करो भूतवेतालस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरान्तकः।।
वरदः पर्वतावासः कपालः शशिभूषणः।
हस्तिचर्माम्बरधरो योगीशो ब्रह्मराक्षसः।।
सर्वज्ञः सर्वदेवेशः सर्वभूतहृदि स्थितः।
भीषणाख्यो भयहरः सर्वज्ञाख्यस्तथैव च।।
कालाग्निश्च महारौद्रो दक्षिणो मुखरोऽस्थिरः।
संहारश्चातिरिक्ताङ्गः कालाग्निश्च प्रियङ्करः।।
घोरनादो विशालाङ्गो योगीशो दक्षसंस्थितः।

अध्याय-१०

द्वाविंशति नामावली व दसनाम स्तोत्र

अगर किसी दिन कार्यवश समय का अभाव हो, तब बाइस नामों वाले इस नमस्कार का जप करके भी काम चला सकते हैं—

नमस्कार सहित द्वाविंशति नामावली

(१) बटुकनाथाय नमः
(२) सारभूताय नमः
(३) त्रैलोक्यनाथनाथाय नमः
(४) नाथनाथाय नमः
(५) बटुकाय नमः
(६) कालिकानाथाय नमः
(७) कामदाय नमः
(८) लोकरक्षाकाय नमः
(९) भूतनाथाय नमः
(१०) गणश्रेष्ठाय नमः
(११) वीरवन्द्याय नमः
(१२) दयानिधये नमः
(१३) कपालिने नमः
(१४) कुण्डलिने नमः
(१५) भीमाय नमः
(१६) भैरवाय नमः
(१७) भीमविक्रमाय नमः
(१८) व्यालयज्ञोपवीतिने नमः
(१९) कवचिने नमः
(२०) शूलिने नमः
(२१) शूराय नमः
(२२) शिवप्रियाय नमः

भयनाशक दसनाम स्तोत्र

कपाली कुण्डली भीमो भैरवो , भीमविक्रमः।
व्यालोपवीती कवची शूली शूरः शिवप्रियः।।
एतानि दशनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्।।
भैरवी-यातना न स्याद् भयं क्वापि न जायते।।

तन्त्र साधना में तो सैकड़ों और हजारों की संख्या में की जाती है, चार लाइन के इस स्तोत्र की नियमित साधना।

भैरव के चालीसे

श्री भैरव चालीसा

दोहा—

श्री भैरव संकट हरन, मंगल करन कृपाल।
करहु दया निज दास पे, निशिदिन दीनदयालु।।

।। चौपाइयां।।

जय डमरूधर नयन विशाला।
श्यामवर्ण, वपु महा कराला।।
जय त्रिशूलधर जय डमरूधर।
काशी कोतवाल, संकट हर।।
जय गिरिजासुत परम कृपाला।
संकटहरण, हरहु भ्रमजाला।।
जयति बटुक भैरव भयहारी।
जयति काल भैरव बलधारी।।
अष्ट रूप तुम्हरे सब गायें।
सकल एक ते एक सवाये।।
शिवस्वरूप शिव के अनुगामी।
गणाशीध तुम सब के स्वामी।।
जटाजूट पर मुकुट सुहावै।
भालचन्द्र अति शोभा पावै।।
कटि करधनी घूंघरू बाजैं।
दर्शन करत सकल भय भाजैं।।
कर त्रिशूल डमरू अति सुन्दर।
मोरपंख को चंवर मनोहर।।

खप्पर खड्ग लिये बलवाना।
रूप चतुर्भुज नाथ बखाना।।
वाहन श्वान सदा सुखरासी।
तुम अनन्त प्रभु तुम अविनासी।।
जय जय जय भैरव भय भंजन।
जय कृपालु भक्तन मनरंजन।।
नयन विशाल लाल अति भारी।
रक्तवर्ण तुम अहहु पुरारी।।
बं बं बं बोलत दिनराती।
शिव कहं भजहु असुर आराती।।
एक रूप तुम शम्भु कहाये।
दूजे भैरव रूप बनाये।।
सेवक तुमहिं तुमहिं प्रभु स्वामी।
सब जग के तुम अन्तर्यामी।।
रक्तवर्ण वपु अहहि तुम्हारा।
श्यामवर्ण कहुं होई प्रचारा।।
श्वेतवर्ण पुनि कहा बखानी।
तीनि वर्ण तुम्हारे गुणखानी।।
तीन नयन प्रभु परम सुहावहि।
सुरनरमुनि सब ध्यान लगावहिं।।
व्याघ्रचर्म धर तुम जग स्वामी।
प्रेतनाथ तुम पूर्ण अकामी।।
चक्रनाथ नकुलेश प्रचण्डा।
निमिष दिगम्बर कीरति चण्डा।।
क्रोधवन्त भूतेश कालधर।
चक्रतुण्ड दशबाहु व्यालधर।।
अहहिं कोटि प्रभु नाम तुम्हारे।
जयत सदा मेटत दुःख भारे।।

चौसठ योगिनी नाचहिं संगा।
क्रोधवान तुम अति रणरंगा।।
भूतनाथ तुम परम पुनीता।
तुम भविष्य तुम अहहु अतीता।।
वर्तमान तुम्हारो शुचि रूपा।
कालजयी तुम परम अनूपा।।
ऐलादी को संकट टारयो।
साद भक्त को कारज सारयो।।
कालीपुत्र कहावहु नाथा।
तब चरणहु नावहुं नित माथा।।
श्री क्रोधेश कृपा विस्तारहु।
दीन जानि मोहि पार उतारहु।।
भवसागर बूढ़त दिन-राती।
होहु कृपालु दुष्ट आराती।।
सेवक जानि कृपा प्रभु कीजै।
मोहिं भगति अपनी अब दीजै।।
करहुं सदा भैरव की सेवा।
तुम समान दूजो को देवा।।
अश्वनाथ तुम परम मनोहर।
दुष्टन कहं प्रभु अहहु भयंकर।।
तुम्हरो दास जहां जो होई।
ता कहं संकट परै न कोई।
हरहु नाथ तुम जन की पीरा।
तु समान प्रभु को बलबीरा।।
सब अपराध क्षमा कर दीजै।
दीन जानि आपुन मोहिं कीजै।।
जो यह पाठ करे चालीसा।
तापै कृपा करहु जगदीशा।।

दोहा—

जय भैरव जय भूतपति, जय जय जय सुखकन्द।
करहु कृपा नित दास पै, देहु सदा आनन्द।।

श्री बटुक भैरव चालीसा

दोहे—

विश्वनाथ को सुमरि मन, धर गणेश का ध्यान।
भैरव चालीसा पढूं, कृपा करहु भगवान।।
बटुकनाथ भैरव भजूं, श्री काली के लाल।
मुझ दास पर कृपा कर, काशी के कुतवाल।।

।। चौपाइयां।।

जय जय श्री काली के लाला।
रहो दास पर सदा दयाला।।
भैरव भीषण भीम कपाली।
क्रोध वन्त लोचन में लाली।।
कर त्रिशूल है कठिन कराला।
गल में प्रभु मुंडन की माला।।
कृष्ण रूप तन वर्ण विशाला।
पीकर मद रहता मतवाला।।
रुद्र बटुक भक्तन के संगी।
प्रेतनाथ भूतेश भुजंगी।।
त्रैल तेश है नाम तुम्हारा।
चक्रदण्ड अमरेश पियारा।।
शेखर चन्द्र कपाल विराजै।
स्वान सवारी पे प्रभ गाजै।।
शिव नकुलेश चण्ड हो स्वामी।
बैजनाथ प्रभु नमो नमामी।।
अश्वनाथ क्रोधेश बखाने।
भैरों काल जगत ने ज़ाने।।
गायत्री कहैं निमिष दिगम्बर।
जगन्नाथ उन्नत आडम्बर।।

क्षेत्रपाल दशपाणि कहाये।
मंजुल उमानन्द कहलाये।।
चक्रनाथ भक्तन हितकारी।
कहैं त्रयम्बक सब नर नारी।।
संहारक सुनन्द तब नामा।
करहु भक्त के पूरण कामा।।
नाथ पिशाचन के हो प्यारे।
संकट मेटहु सकल हमारे।।
कत्यायू सुन्दर आनन्दा।
भक्त जनन के काटहु फन्दा।।
कारण लम्ब आप भयभंजन।
नमोनाथ जय जनमन रंजन।।
हो तुम मेष त्रिलोचन नाथा।
भक्त चरण में नावत माथा।।
तुम असितांग रुद्र के लाला।
महाकाल कालों के काला।।
ताप मोचन अरिदल नासा।
भाल चन्द्रमा करहिं प्रकाशा।।
श्वेत काल अरु लाल शरीरा।
मस्तक मुकुट शीश पर चीरा।।
काली के लाला बलधारी।
कहां तक शोभा कहहुं तुम्हारी।।
शंकर के अवतार कृपाला।
रहो चकाचक पी मद प्याला।।
काशी के कुतवाल कहाओ।
बटुकनाथ चेटक दिखलाओ।।
रवि के दिन जन भोग लगावें।
धूप दीप नैवेद्य चढ़ावें।।
दरशन करके भक्त सिहावें।
दारूड़ा की धार पियावें।।
मठ में सुन्दर लटकत झावा।
सिद्ध कार्य कर भैरों बाबा।।

नाथ आपका यश नहीं थोड़ा।
कर में सुभग सुशोभित कोड़ा।।
कटि घूंघरा सुरीले बाजत।
कंचन के सिंहासन राजत।।
नरनारी सब तुमको ध्यावें।
मनवांछित इच्छा फल पावें।।
भोपा हैं आपके पुजारी।
करें आरती सेवा भारी।।
भैरव भात आपका गाऊं।
बार-बार पद शीश नवाऊं।।
आपहि वारे छीजन धाये।
ऐलादी ने रुदन मचाये।।
बहिन त्यागि भाई कहं जावे।
तो बिना को मोहि भात पिन्हावे।।
रोये बटुकनाथ करुणाकर।
गिरे हिवारे में तुम जाकर।।
दुखित भई ऐलादी वाला।
तब हर का सिंहासन हाला।।
समय ब्याह का जिस दिन आया।
प्रभु ने तुमको तुरत पठाया।।
विष्णु कँही मत बिलम लगाओ।
तीन दिवस को भैरव जाओ।।
दल पठान संग लेकर धाया।
ऐलादी को भात पिन्हाया।।
पूरन आस बहिन की कीन्हीं।
सुख चूंदरी सिर धरि दीन्हीं।।
भात भरा लौटे गुणग्रामी।
नमो नमामी अन्तर्यामी।।
मैं हूं प्रभ बस तुम्हारा चेरा।
करूं आपकी शरण बसेरा।।

दोहे—

जय जय जय भैरव बटुक, स्वामी संकट टार।
कृपा दास पर कीजिये, शंकर के अवतार।।
जो यह चालीसा पढ़ै, प्रेम सहित सतवार।
उस घर सर्वानन्द हो, वैभव बड़े अपार।।

अध्याय-१२

भैरव के एक सौ आठ नाम

भैरवनाथ भगवान शंकर के पांचवें अवतार हैं। यही कारण है कि इनके हजारों नाम हैं। महर्षि वृहदाण्ण्यक द्वारा अनुष्टप छन्द में रचित संस्कृत भाषा के इस 'आपदा-उद्धारक बटुक भैरव अष्टोत्तरशतनाम स्तोत्र' को यहां दिया जा रहा है।

अष्टोत्तरशतनाम स्तोत्र

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।।१।।

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।।२।।

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।।३।।

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।।४।।

धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्।।५।।

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनी ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः।।६।।

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः।।७।।

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।।८।।

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।।९।।

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भुधरात्मजः।।१०।।

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।।११।।

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।।१२।।

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी।।१३।।

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रोषधीमयः।
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ह्रीं ॐ।।१४।।

बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्र के समान ही इस स्तोत्र के भी देवता भगवान बटुक भैरव हैं, बं बीज है, ह्रीं शक्ति है और उसी प्रकार सभी विपत्तियों से रक्षा करने वाला है इस एक सौ आठ नामों का नियमित जप। वास्तव में गत अध्याय में संकलित बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्र और एक सौ आठ नामों का यह स्तोत्र एक-दूसरे के पूरक हैं। चौदह श्लोकों के इस स्तोत्र को मूल रूप में तो ऊपर दिया गया है, संस्कृत न पढ़ पाने वाले भक्तों की विशेष सुविधा के लिये इन १०८ नामों को नीचे सूचीबद्ध भी किया जा रहा है—

(१) ॐ भैरवाय नमः
(२) ॐ भूतनाथाय नमः
(३) ॐ भृतात्मने नमः
(४) ॐ भुतभावनाय नमः
(५) ॐ क्षेत्रज्ञाय नम
(६) ॐ क्षेत्रपालाय नमः
(७) ॐ क्षेत्रदाय नमः
(८) ॐ क्षत्रियाय नमः
(९) ॐ विराजे नमः
(१०) ॐ श्मशानवासिने नमः
(११) ॐ मांसाशिने नमः
(१२) ॐ खर्वराशिने नमः
(१३) ॐ स्मरांतकाय नमः
(१४) ॐ रक्तपाय नमः
(१५) ॐ पानपाय नमः
(१६) ॐ सिद्धाय नमः
(१७) ॐ सिद्धिदाय नमः
(१८) ॐ सिद्धिसेविताय नमः
(१९) ॐ कंकालाय नमः
(२०) ॐ कलाशमनाय नमः
(२१) ॐ कलाकाष्ठाय नमः
(२२) ॐ तनये नमः
(२३) ॐ कवये नमः
(२४) ॐ त्रिनेत्रात्र नमः
(२५) ॐ बहुनेत्राय नमः
(२६) ॐ पिंगल-लोचनाय नमः
(२७) ॐ शूलपाणये नमः
(२८) ॐ खड्गपाणये नमः

(२९) ॐ कपालिने नमः
(३०) ॐ धूम्र लोचनाय नमः
(३१) ॐ अभरवे नमः
(३२) ॐ भैरवीनाथाय नमः
(३३) ॐ भूतपाय नमः
(३४) ॐ योगिनीपतये नमः
(३५) ॐ धनदाय नमः
(३६) ॐ धनहारिणे नमः
(३७) ॐ धनवते नमः
(३८) ॐ प्रीतिवर्धनाय नमः
(३९) ॐ नागहाराय नमः
(४०) ॐ नागपाशाय नमः
(४१) ॐ व्योमकेशाय नमः
(४२) ॐ कपालभृते नमः
(४३) ॐ कालाय नमः
(४४) ॐ कपालमालिने नमः
(४५) ॐ कमनीयाय नमः
(४६) ॐ कलानिधये नमः
(४७) ॐ त्रिलोचनाय नमः
(४८) ॐ ज्वलन्नेत्राय नमः
(४९) ॐ त्रिशिखिने नमः
(५०) ॐ त्रिलोकषाय नमः
(५१) ॐ त्रिनेत्रतापाय नमः
(५२) ॐ डिंभाय नमः
(५३) ॐ शान्ताय नमः
(५४) ॐ शान्तजनप्रियाय नमः
(५५) ॐ बटुकाय नमः
(५६) ॐ बटुवेशाय नमः
(५७) ॐ खट्वांगधारकाय नमः
(५८) ॐ यनाध्यक्षाय नमः
(५९) ॐ पशुपतये नमः
(६०) ॐ भिक्षुकाय नमः
(६१) ॐ परिचारकाय नमः
(६२) ॐ धूर्ताय नमः
(६३) ॐ दिगम्बराय नमः
(६४) ॐ शूराय नमः
(६५) ॐ हरिणे नमः
(६६) ॐ पांडुलोचंनाय नमः
(६७) ॐ प्रशांताय नमः
(६८) ॐ शांतिदाय नमः
(६९) ॐ सिद्धाय नमः
(७०) ॐ शंकरप्रियबांधवाय नमः
(७१) ॐ अष्टमूर्तये नमः
(७२) ॐ निधीशाय नमः
(७३) ॐ ज्ञानचक्षुषे नमः
(७४) ॐ तपोमदाय नमः
(७५) ॐ अष्टाधाराय नमः
(७६) ॐ षडाधाराय नमः
(७७) ॐ सर्पयुक्ताय नमः
(७८) ॐ शिखिसखाय नमः
(७९) ॐ भूधराय नमः
(८०) ॐ भूधराधीशाय नमः
(८१) ॐ भूपतये नमः
(८२) ॐ भूधरात्मज्ञाय नमः
(८३) ॐ कंकालधारिणे नमः
(८४) ॐ मुंडिने नमः
(८५) ॐ नागयज्ञोपवीतवते नमः
(८६) ॐ जृम्भणाय नमः
(८७) ॐ मोहनाय नमः
(८८) ॐ स्तंभिने नमः
(८९) ॐ मरणाय नमः
(९०) ॐ क्षोभणाय नमः
(९१) ॐ शुद्धनीलांजनप्रख्याय नमः
(९२) ॐ दैत्यघ्ने नमः

(९३) ॐ मुंडभूषिताय नमः
(९४) ॐ बलिभुजे नमः
(९५) ॐ बलिभुङ्नाथाय नमः
(९६) ॐ बालाय नमः
(९७) ॐ बालपराक्रमाय नमः
(९८) ॐ सर्वापत्तारणाय नमः
(९९) ॐ दुर्गाय नमः
(१००) ॐ दुष्ट भूतनिषेविताय नमः
(१०१) ॐ कामिने नमः
(१०२) ॐ कलानिधये नमः
(१०३) ॐ कांताय नमः
(१०४) ॐ कामिनीवशकृद्वशिने नमः
(१०५) ॐ सर्वसिद्धिप्रदाय नमः
(१०६) ॐ वैद्याय नमः
(१०७) ॐ प्रभवे नमः
(१०८) ॐ विष्णवे नमः

'रुद्रयामाल तन्त्र' नामक ग्रन्थ में भगवान बटुक भैरवदेव के इन एक सौ आठ नामों को 'आपदुद्धारण बटुक भैरव अ्ष्टोत्तरशतनाम स्तोत्र' शीर्षक के अन्तर्गत चौदह श्लोकों में दिया गया है। मातेश्वरी पार्वती ने शिवजी से प्रार्थना की—'हे स्वामो ! कलियुग में आदमियों की आयु और उनके पास धर्म-कर्म के लिये समय दोनों ही काफी कम हैं। अतः आप भैरवदेव के एक सौ आठ नामों का वर्णन कीजिए, जिनका जप करके मृत्युलोक के प्राणी सभी प्रकार के दुःखों से छूटकर अपनी कामनाओं की आसानी से पूर्ति कर सकें और मुक्ति की प्राप्ति हो। तब भगवान शिव ने पार्वती जी को भैरवदेव के ये एक सौ आठ प्रधान नाम बतलाये।

श्री भैरव सहस्त्रनाम

श्री भैरव शिव के आवेगावतार हैं और यही कारण है कि वे परब्रह्म परमेश्वर का एक रूप ही हैं। भैरवदेव के किसी भी रूप की यन्त्र-मन्त्र की साधना, उनके इस सहस्त्रनाम का नियमित जप साधना-उपासना को सफल बनाने में आपको एक महत्वपूर्ण भूमिका अनुभव होगी।

ॐ नमोः भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो भद्रस्वरूपाय जगदाद्य नमो नमः,।।१।।
नमः कल्पस्वरूपाय विकल्पाय नमो नमः।
नमः शुद्धस्वरूपाय सुप्रकाशाय ते नमः।।२।।
नमः कंकालरूपाय कालरूपी नमोस्तु ते।
नमस्त्र्यंबकरूपाय महाकालाय ते नमः।।३।।
नमः संसारसाराय शारदाय नमो नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।४।।
नमः क्षेत्र निवासाय क्षेत्रपालाय ते नमः।
क्षेत्राक्षेत्र स्वरूपाय क्षेत्रकर्त्रे नमोः नमः।।५।।
नमो नाग विनाशाय भैरवाय नमो नमः।
नमो मातंगरूपाय भाररूपी नमोस्तुते।।६।।
नमः सिद्धि स्वरूपाय सिद्धिदाय नमो नमः।
नमो बिंदुस्वरूपाय बिंदुसिंधुप्रकाशिने।।७।।
नमो मंगलरूपाय धर्मदाय नमो नमः।
नमः संकष्टनाशाय शंकराय नमो नमः।।८।।
नमो धर्मस्वरूपाय धर्मदाय नमो नमः।
वमोनंतस्वरूपाय एकरूप नमोस्तुते।।९।।
नमोवृद्धिस्वरूपाय वृद्धिकार नमोस्तुते।
नमोमोहनरूपाय मोक्षरूपाय ते नमः।।१०।।

नमो जलदरूपाय शामरूप नमोस्तुते।
नमः स्थूल स्वरूपाय शुद्धरूपाय ते नमः।।११।।

नमो नीलस्वरूपाय रंग रूपाय ते नमः।
नमो मंडलरूपाय मंडलाय नमो नमः।।१२।।

नमो रुद्र स्वरूपाय रुद्रगाथाय ते नमः।
नमो ब्रह्मस्वरूपाय ब्रह्मवक्त्रे नमो नमः।।१३।।

नमस्त्रिशूलधराय धराधारिन्नमोस्तुते।
नमः संसारबीजाय विरुपाय नमो नमः।।१४।।

नमोः विमलरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो जंगमरूपाय जलजाय नमो नमः।।१५।।

नमः कालस्वरूपाय कालरुद्राय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१६।।

नमः शत्रु विनाशाय भीषणाय नमो नमः।
नमः शांताय दांताय भ्रमरूप नमोस्तु ते।।१७।।

न्यायगम्याय शुद्धाय योगिध्येयाय ते नमः।
नमः कमलकांताय कालवृद्धाय ते नमः।।१८।।

नमो ज्योतिस्वरूपाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमो कल्पस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१९।।

नमो जयस्वरूपाय जगज्जाड्य निवारणे।
महाभूताय भूताय भूतानां पतये नमः।।२०।।

नमो नंदाय वंदाय वादिने ब्रह्मवादिने।
नमो वादस्वरूपाय न्यायगम्याय ते नमः।।२१।।

नमो भवस्वरूपाय माया निर्माणरूपिणे।
विश्ववांद्याय वंद्याय नमो विश्वंभराय ते।।२२।।

नमो नेत्रस्वरूपाय नेत्र रूपिन्नमोस्तुते।
नमो वरुणरूपाय भैरवाय नमो नमः।।२३।।

नमो यमस्वरूपाय वृद्धरूपाय ते नमः।
नमः कुबेररूपाय कालनाथाय ते नमः।।२४।।

नमः ईशानरूपाय अग्नि रूपाय ते नमः।
नमो वायु स्वरूपाय विश्वरूपाय ते नमः।।२५।।

नमः प्राणस्वरूपाय प्राणाधिपतये नमः।
नमः संहाररूपाय पालनाय नमो नमः।।२६।।

नमश्चन्द्रस्वरूपाय चंडरूपाय ते नमः।
नमो मंदर वासाय वासिने सर्वयोगिनाम्।।२७।।

योगिगम्याय योग्याय योगिनां पतये नमः।
नमो जंगमवासाय वामदेवाय ते नमः।।२८।।

नमः शत्रु विनाशाय नीलकंठाय ते नमः।
नमो भक्तिविनोदाय दुर्भगाय नमो नमः।।२९।।

नमो मान्यस्वरूपाय मानदाय नमो नमः।
नमो भतिविभषाय भषिताय नमो नमः।।३०।।

नमो रजस्वरूपाय सात्विकाय नमो नमः।
नमस्तापसरूपाय तारणाय नमो नमः।।३१।।

नमो गंगा विनोदाय जटासंधारिणे नमः।
नमो भैरव रूपाय भीषणाय नमो नमः।।३२।।

नमः संग्रामरूपाय संग्रामजय दायिने।
संग्राम साररूपाय यवनाय नमो नमः।।३३।।

नमोवृद्धिस्वरूपाय वृद्धिदाय नमो नमः।
नमस्त्रिशूल हस्ताय शूलसंहारिणे नमः।।३४।।

नमो द्वन्द्वस्वरूपाय रूपदाय नमो नमः।
नमः शत्रुविनाशाय शत्रुबुद्धिविनाशिने।।३५।।

महाकालाय कालाय कालनाथाय ते नमः।
नमो भैरव रूपाय भैरवाय नमो नमः।।३६।।

नमः शंभुस्वरूपाय शंभुरूपिन्नमोऽस्तुते।
नमः कमलहस्ताय डमरुहस्ताय ते नमः।।३७।।

नमः कुक्कुर वाहाय वहनाय नमो नमः।
नमो विमलनेत्राय त्रिनेत्राय नमो नमः।।३८।।

नमः संसाररूपाय सारथेयाय वाहिने।
संसार ज्ञान रूपाय ज्ञानाथाय ते नमः।।३९।।

नमो मंगलरूपाय मंगलाय नमो नमः।
नमो न्याय विशालाय मन्त्ररूपाय ते नमः।।४०।।

नमो यन्त्रस्वरूपाय यन्त्रधारिन्नमोऽस्तुते।
नमो भैरव रूपाय भैरवाय नमो नमः।।४१।।

नमः कलंकरूपाय कलंकाय नमो नमः।
नमः संसारपाराय भैरवाय नमो नमः।।४२।।

रुण्डमाला विभूषाय भीषणाय नमो नमः।
नमो दुःख निवाराय विपाराय नमो नमः।।४३।।

नमो दण्डस्वरूपाय क्षणरूपाय ते नमः।
नमो मुहूर्तरूपाय विहाराय नमो नमः।।४४।।

नमो मोदस्वरूपाय श्रोणरूपाय ते नमः।
नमो नक्षत्ररूपाय क्षेत्ररूपाय ते नमः।।४५।।

नमो विष्णुस्वरूपाय बिंदुरूपाय ते नमः।
नमो ब्रह्मस्वरूपाय ब्रह्मचारिन्नमोऽस्तुते।।४६।।

नमः कन्थानिवासाय पटवासाय ते नमः।
नमो ज्वलनरूपाय ज्वलनाथ नमो नमः।।४७।।

नमो बटुकरूपाय धूर्तरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।४८।।

नमो वैद्यस्वरूपाय वैद्यरूपिन्नमोऽस्तुते।
नमो औषधरूपाय औषधाय नमो नमः।।४९।।

नमो व्याधिनिवाराय व्याधिरूपिन्नमो नमः।
नमो द्वारनिवाराय ज्वररूपाय ते नमः।।५०।।

नमो रुद्रस्वरूपाय रुद्राणां पतये नमः।
विरुपाक्षाय देवाय भैरव नमो नमः।।५१।।

मनो ग्रहस्वरूपाय ग्रहाणां पतये नमः।।
नमः पवित्रधाराय परशुधाराय ते नमः।।५२।।

यज्ञोपवीतादेवाय देवदेव नमोऽस्तु ते।
नमो यास्वरूपाय यज्ञानां फलदायिने।।५३।।

नमो रण प्रतापाय तापनाय नमो नमः।
नमो गणेशरूपाय गणरूपाय ते नमः।।५४।।

नमो रश्मिस्वरूपाय रश्मिरूपाय ते नमः।
नमो मलयरूपाय मलयस्वरूपाय ते नमः।।५५।।

नमो विभक्तिरूपाय विमलाय नमो नमः।
नमो मधुररूपाय माधिपूर्णकलापिने।।५६।।

कालेश्वराय कालाय कालनाथाय ते नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।५७।।

नमो योनिस्वरूपाय भ्रातृरूपाय ते नमः।
नमो भागिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।५८।।

नमो वृषस्वरूपाय कर्मरूपाय ते नमः।
नमो वेदांत वेद्याय वेद सिद्धांत सारिणै।।५९।।

नमः शाखा प्रकाशाय पुरुषाय नमो नमः।
नमः प्रकृतिरूपाय भैरवाय नमो नमः।।६०।।

नमो विश्वस्वरूपाय शिवरूपाय ते नमः।
नमो ज्योतिस्वरूपाय निर्गुणाय नमो नमः।।६१।।

निरंजनाय शांताय निर्विकाराय ते नमः।
निर्ममाय विमोहाय विश्वनाथाय ते नमः।।६२।।

नमः कंठप्रकाशाय शत्रुनाशाय ते नमः।
नमो आशा प्रकाशाय आशापूर कृते नमः।।६३।।

नमो मत्स्यस्वरूपाय योगरूपाय ते नमः।
नमो वाराहरूपाय वामनाय नमो नमः।।६४।।

नमो आनन्दरूपाय आनन्दाय नमो नमः।
नमः अनर्घकेशाय ज्वलत्केशाय ते नमः।।६५।।

नमः पाप विमोक्षाय मोक्षाय नमो नमः।
नमः कैलाशनाथाय कालनाथाय ते नमः।।६६।।

नमो बिंदुदबिंदाय बिंदुभाय नमो नमः।
नमः प्रणवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।६७।।
नमो मेरु निवासाय यक्तवासाय ते नमः।
नमो मेरु स्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।६८।।
नमो भद्रस्वरूपाय भद्ररूपाय ते नमः।
नमो योगिस्वरूपाय योगिनां रूपाय ते नमः।।६९।।
नमो मैत्र स्वरूपाय मित्ररूपाय ते नमः।
नमो ब्रह्मनिवासाय काशीनाथाय ते नमः।।७०।।
नमो ब्रह्माण्डवासाय ब्रह्मवासाय ते नमः।
नमो मातंगवासाय सूक्ष्मवासाय ते नमः।।७१।।
नमो मातृनिवासाय भ्रातृवासाय ते नमः।
नमो जगन्निवासाय जलावासाय ते नमः।।७२।।
नमः कौल निवासाय नेत्रवासाय नमः।
नमो भैरववासाय भैरवाय नमो नमः।।७३।।
नमो समुद्रवासाय वह्नि वासाय ते नमः।
नमश्चन्द्र निवासाय चंद्रवासाय ते नमः।।७४।।
नमः कलिंगवासाय कलिंगाय नमो नमः।
नमः उत्कलवासाय महेन्द्रवासाय ते नमः।।७५।।
नमः कर्पूरवासाय सिद्धिवासाय ते नमः।
नमः सुन्दरवासाय भैरवाय नमो नमः।।७६।।
नमः आकाशवासाय वासिने सर्व योगिनाम्।
नमो ब्राह्मणवासाय शूद्रवासाय ते नमः।।७७।।
नमः क्षत्रियवासाय वैश्यवासाय ते नमः।
नमः पक्षिनिवासाय भैरवाय नमो नमः।।७८।।
नमः पाताल मूलाय मूलवासाय ते नमः।
नमो रसातल वासाय सर्वपाताल वासिने।।७९।।
नमः कंकाल वासाय कंकवासाय ते नमः।
नमो मन्त्रनिवासाय भैरवाय नमो नमः।।८०।।

नमोऽहंकार रूपाय रजोरूपाय ते नमः।
नमः सत्व निवासाय भैरवाय नमो नमः।।८१।।

नमो नलिनरूपाय नलिनांग प्रकाशिने।
नमः सूर्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।८२।।

नमो दुष्ट निवासाय साधुपायन रूपिणे।
नमो नम्रस्वरूपाय स्तंभनाय नमो नमः।।८३।।

पंचयोनिप्रकाशाय चतुर्योनिप्रकाशिने।
नवयोनि प्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।८४।।

नमः षोडशरूपाय नमः षोडशधारिणे।
चतुःषष्टि प्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।८५।।

नमोबिंदु प्रकाशाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमो गणस्वरूपाय सुखरूप नमोऽस्तुते।।८६।।

नमो अंबररूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो नाना स्वरूपाय मुखरूप नमोऽस्तुते।।८७।।

नमो दुर्ग स्वरूपाय दुःख हंत्रे नमोऽतुते।
नमो विशुद्धदेहाय दिव्यदेहाय ते नमः।।८८।।

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः प्रेत निवासाय पिशाचाय नमो नमः।।८९।।

नमो निशा प्रकाशाय निशारूप नमोऽस्तुते।
नमः सोमार्ध रामाय धराधीशाय ते नमः।।९०।।

नमः संसार भाराय भारकाय नमो नमः।
नमो देहस्वरूपाय अदेहाय नमो नमः।।९१।।

देवदेहाय देवाय भैरवाय नमो नमः।
विश्वेश्वराय विश्वाय विश्वधारिन्नमोऽस्तुते।।९२।।

स्वप्रकाश प्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।
स्थितिरूपाय स्थित्याय स्थित्तीनां पतये नमः।।९३।।

सुस्थिराय सुकेशाय केशवाय नमो नमः।
स्थविष्टाय गरिष्टाय प्रेष्ठाय परमात्मने।।९४।।

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः पारदरूपाय पवित्राय नमो नमः।।९५।।

नमो वेधकरूपाय अनिंदाय नमो नमः।
नमः शब्दरचरूपाय शब्दातीताय ते नमः।।९६।।

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो निंदास्वरूपाय अनिंदाय नमो नमः।।९७।।

नमो विश्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः शरण्यशरण शरण्यानां सुखाय ते।।९८।।

नमः शरण्यरक्षाय भैरवाय नमो नमः।
नमः स्वाहास्वरूपाय स्वधारूपाय ते नमः।।९९।।

नमो वौषट्स्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
अक्षराय नमस्तुभ्यं त्रिधामात्रास्वरूपपिणे।।१००।।

नमोऽक्षराय शुद्धाय भैरवाय नमो नमः।
अर्ध मात्राय पूर्णाय पूर्णाय ते नमो नमः।।१०१।।

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमोऽष्टचक्ररूपाय ब्रह्मरूपाय ते नमः।।१०२।।

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः सृष्टिस्वरूपाय सृष्टिकर्त्रेमहात्मने।।१०३।।

नमः पाल्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
सनातनाय नित्याय निर्गुणाय गुणाय ते।।१०४।।

नमः सिद्धाय शांताय भैरवाय नमो नमः।
नमो धारास्यरूपाय खड्गस्तहाय ते नमः।।१०५।।

नमस्त्रिशूलहस्ताय भैरवाय नमो नमः।
नमः कुंडलवर्णाय शव मुंड विभूषिणे।।१०६।।

महाक्रुद्धाय चंडाय भैरवाय नमो नमः।
नमो वासुकिभूषाय सर्वभूषाय ते नमः।।१०७।।

नमः कपालहस्ताय भैरवाय नमो नमः।
पानपात्र प्रमत्ताय मत्तरूपाय ते नमः।।१०८।।

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
मध्यमकारसुपर्णाय माधवाय नमो नमः।।१०९।।

नमो मांगल्यरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः कुमाररूपाय स्त्रीशूर्पाय नमो नमः।।११०।।

नमोगंधस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमोदुर्गन्धरूपाय सुगंधाय नमो नमः।।१११।।

नमः पुरुषस्वरूपाय पुष्पभूषण ते नमः।
नमः पुष्प प्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।११२।।

नमः पुष्प विनोदाय पुष्पपूजाय ते नमः।
नमो भक्तिनिवासाय भक्तदुःख निवारिणे।।११३।।

भक्त प्रियाय शांताय भैरवाय नमो नमः।
नमो भक्तस्वरूपाय रूपदाय नमो नमः।।११४।।

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो वासाय भद्राय वीरभद्राय ते नमः।।११५।।

नमः संग्राम साराय भैरवाय नमो नमः।
नमः खट्वांगहस्ताय कालहस्ताय ते नमः।।११६।।

नमोघोराय घोराय घोरा घोरस्वरूपिणे।
घोराघर्माण्य घोराय भैरवाय नमो नमः।।११७।।

घोरत्रिशूल हस्ताय घोरपानाय ते नमः।
घोराय नीलरूपाय भैरवाय नमो नमः।।११८।।

घेर वाहनपम्याय अगम्याय नमो नमः।
घोर ब्रह्मस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।११९।।

घोर शब्दाय घोराय घोरदेहाय ते नमः।
घोर द्रव्याय घोराय भैरवाय नमो नमः।।१२०।।

घोर संगाय सिंहाय सिसिंहाय ते नमः।
नमः प्रचंडसिंहाय सिंहरूपाय ते नमः।।१२१।।

नमः सिंह प्रकाशाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमो विजयरूपाय जगदाद्य नमो नमः।।१२२।।

नमो भार्गवरूपाय गर्भरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१२३।।

नमो मेध्याय शुद्धाय मायाधीशाय ते नमः।
नमो मेघप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।१२४।।

दुर्ज्ञेयाय दुस्तराय दुर्लभाय दुरात्मने।
भक्तिलभ्याय भव्याय भाविताय नमो नमः।।१२५।।

नमो गौरवरूपाय गौरवाय नमो नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१२६।।

नमो विघ्न निवाराय विघ्नराशिन्नमोऽस्तुते।
नमो विघ्न विद्रावणाय भैरवाय नमो नमः।।१२७।।

नमो किंशुकरूपाय रजोरूपाय ते नमः।
नमो नीलस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१२८।।

नमो गणस्वरूपाय गणनाथाम ते नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।१२९।।

नमो योगिप्रकाशाम योगिगम्याय ते नमः।
नमो हेरंवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१३०।।

नमस्त्रिधारस्वरूपाय रूपदाय नमो नमः।
नमः स्वरस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१३१।।

नमः सरस्वतीरूप बुद्धिरूपाय ते नमः।
नमो वंद्य स्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१३२।।

नमस्त्रिविक्रमरूपाय त्रिस्वरूपाय ते नमः।
नमः शशांजरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१३३।।

नमो व्यापकरूपाय व्याध्यरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१३४।।

नमो विशदरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः सत्वस्वरूपाय भैरवाय नमो नमं।।१३५।।

नमः सुक्तस्वरूपाय शिवदाय नमो नमः।
नमो गंगास्वरूपाय यमुनारूपिणे नमः।।१३६।।

नमो गौरीस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो दुःख विनाशायं दुःखमोक्षणरूपिणे।।१३७।।

महाचलाय वैधाय भैरवाय नमो नमः।
नमो नन्दिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१३८।।

नमो नन्दिस्वरूपाय स्थिररूपाय ते नमः।
नमः केलिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१३९।।

नमः क्षेत्रनिवासाय वासिने ब्रह्मवादिने।
नमः शांताय शुद्धाय भैरवाय नमो नमः।।१४०।।

नमो नर्मदरूपाय जलरूपाय ते नमः।
नमो विश्विनोदाय जयदाय नमो नमः।।१४१।।

नमो महेन्द्ररूपाय महनोयाय ते नमः।
नमः संसृतिरूपाय शरणीयाय ते नमः।।१४२।।

नमस्त्रिन्धुवासाय बालकाय नमो नमः।
नमः संसारसारा सरसां पतये नमः।।१४३।।

नमस्ते जरस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः कारुव्यरूपाल भैरवाय नमो नमः।।१४४।।

नमो गोकर्जरूपाय ब्रह्मवर्क्षाय ते नमः।
नमः शङ्खवर्णाय हस्तिकर्णाय ते नमः।।१४५।।

नमो विष्टरकर्णाय यज्ञकर्णाय ते नमः।
नमः शंबुककर्णाय भैरवाय नमो नमः।।१४६।।

नमो दिव्यसुकर्णाय कालकर्णाय ते नमः।
नमो भयदकर्णाय भैरवाय नमो नमः।।१४७।।

नमः आकाशवर्णाय कालकर्णाय ते नमः।
नमो दिग्रूपकर्णाय भैरवाय नमो नमः।।१४८।।

नमो विशुद्धकर्णाय विमलाय नमो नमः।
नमः ससस्त्रकर्णाय भैरवाय नमो नमः।।१४९।।

नमो नेत्रप्रकाशाय सुनेत्राय नमो नमः।
नमो वरदनेत्राय जयनेत्राय ते नमः।।१५०।।

नमो विमलनेत्राय योगीनेत्रायं ते नमः।
नमः सहस्त्रनेत्राय भैरवाय नमो नमः।।१५१।।

नमः कलिदरूपाय कलिंदाय नमो नमः।
नमो ज्योतिः स्वरूपाय ज्योतिषाय नमो नमः।।१५२।।

नमस्तारप्रकाशाय ताररूपिन् नमोऽस्तुते ते।
नमो नक्षत्रनेत्राय भैरवाय नमो नमः।।१५३।।

नमश्चन्द्रप्रकाशाय चन्द्ररूप नमोऽस्तुते।
नमो रश्मिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१५४।।

नमः आनन्दरूपाय जमानन्दरूपिणे।
नमो द्रविडरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१५५।।

नमः शंख निवासाय शंकराय नमो नमः।
नो मुद्राप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।१५६।।

नमो न्यासस्वरूपाय न्यासरूप नमोऽस्तुते।
नमो बिंदुस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१५७।।

नमो विसर्गरूपाय प्रणवरूपाय ते नमः।
नमो मन्त्रप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।१५८।।

नमो जंबुकरूपाय जंगमाय नमो नमः।
नमो गरुड़स्रूपाय भैरवाय नमो नमः।।१५९।।

नमो लंबुकरूपाय लंबिकाय नमो नमः।
नमो लक्ष्मीस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१६०।।

नमो वीरस्वरूपाय वीरणाय नमो नमः।
नमः प्रचंडस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१६१।।

नमो डंमस्वरूपाय डमरूधारिन्नमोऽस्तुते।
नमः कलंकनाशाय कालनाथाय ते नमः।।१६२।।

नमः स्मृद्धिप्रकाशाय सिद्धिदाय नमो नमः।
नमः सिद्धस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१६३।।

नमो धर्म प्रकाशाय धर्मनाथाय ते नमः।
धर्माय धर्मराजाय भैरवाय नमो नमः।।१६४।।

नमो धर्माधिपतये धर्मध्येयाय ते नमः।
नमो धर्मार्थसिद्धाय भैरवाय नमो नमः।।१६५।।

नमो विरजररूपाय रूपारूप प्रकाशिने।
नमो राजप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।१६६।।

नमः प्रतापसिंहाय प्रतापाय नमो नमः।
नमः कोटिप्रतापाय भैरवाय नमो नमः।।१६७।।

नमः सहस्त्ररूपाय कोटिरूपाय ते नमः।
नमः आनन्दरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१६८।।

नमः संहारबंधाय बन्धकाय नमो नमः।
नमो विमोक्षरूपाय मोक्षदाय नमो नमः।।१६९।।

नमो विष्णुरूपाय व्यायकाय नमो नमः।
नमो मांगल्यनाथाय शिवनाथाय ते नमः।।१७०।।

नमो कालाय व्याघ्राय व्याघ्ररूप नमोऽस्तुते।
नमो व्यालविभूषाय भैरवाय नमो नमः।।१७१।।

नमो विद्याप्रकाशाय विद्यानां पतये नमः।
नमो योगिस्वरूपाय क्रूररूपाय ते नमः।।१७२।।

नमः संहाररूपाय शत्रुनाशाय ते नमः।
नमो पालकरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१७३।।

नमो कारुण्य देवाय देवदेवाय ते नमः।
नमो विश्न विलासाय भैरवाय नमो नमः।।१७४।।

नमो नमः प्रकाशाय काशीवासिन्नमोऽस्तुते।
नमो भैरवक्षेत्राय क्षेत्रपालाय ते नमः।।१७५।।

नमो भद्रस्वरूपाय भद्रकाय नमो नमः।
नमो भद्राधिपतये भयहंत्रे नमोस्तुते।।१७६।।

नमो माया विनोदाय मायिने मदरूपिणे।
नमो मत्ताय शांताप भैरवाय नमो नमः।।१७७।।

नमो मलय वासाय कैलासाय नमो नमः।
नमो कैलासवासाय कालिकातनयाय ते।।१७८।।

नमः संसारसाराय भैरवाय नमो नमः।
नमो मातृविनोदाय विमलाय नमो नमः।।१७९।।

नमो यम प्रकाशायं नियमाप नमो नमः।
नमः प्राणप्रकाशाय ध्यानाधिपतये नमः।।१८०।।
नमः समाधिरूपाय निर्गुणाय नमो नमः।
नमो मन्त्रप्रकाशाय मन्त्ररूपाय ते नमः।।१८१।।
नमो वृंदविनोदाय वृंदकाय नमो नमः।
नमो वृहंतिरूपाय भैरवाय नमो नमः।।१८२।।
नमो मान्यस्वरूपाय मानदाय नमो नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।।१८३।।
नमो नैस्थिरपीठाय सिद्धपीठाय ते नमः।
नमो मंडलपीठाय त्रक्तपीठाय ते नमः।।१८४।।
नमो यशोदानाथाय कामनाय ते नमः।
नमो विनोदनाथाय सिद्धिनाथाय ते नमः।।१८५।।
नमो नाथाय नाथाय ज्ञाननाथाय ते नमः।
नमः शंकर नाथाय जयनाथाय ते नमः।।१८६।।
नमो मृद्गलनाथाय नीलनाथाय ते नमः।
नमो बालकनाथाय धर्मनाथाय ते नमः।।१८७।।
विश्वनाथाय नाथाय कार्यनाथाय ते नमः।
नमो भैरवनाथाय महानाथाय ते नमः।।१८८।।
नमो ब्रह्मसनाथाय महानाथाय ते नमः।
नमो विश्वविहाराय विश्वभाराय ते नमः।।१८९।।
नमो रंगरसनाथाय रंगनाथाय ते नमः।
नमो मोक्षसनाथाय भैरवाय नमो नमः।।१९०।।
नमो गोरक्षनाथाय गोरक्षाय नमो नमः।
नमो मंदारनाथाय नंदनाथाय ते नमः।।१९१।।
नमो मंगलनाथाय चंपानाथाय ते नमः।
नमो संतोषनाथाय भैरवाय नमो नमः।।१९२।।
नमोनिर्धननाथाय सुखनाथाय ते नमः।
नमः कारुण्यनाथाय भैरवाय नमो नमः।।१९३।।

नमो द्रविडनाथाय दरिद्रनाथाय ते नमः।
नमः संसारनाथाय जगन्नाथाय ते नमः।।१९४।।

नमो माध्वीकनाथाय मन्त्रनाथाय ते नमः।
नमो न्याससनाथाय ध्याननाथाय ते नमः।।१९५।।

नमो गोकर्णनाथाय महानाथाय ते नमः।
नमः शुभ्रसनाथाय भैरवाय नमो नमः।।१९६।।

नमो विमल नाथाय मंडलनाथाय ते नमः।
नमो सरोजनाथाय सत्यनाथाय ते नमः।।१९७।।

नमो भक्त सनाथाय भक्तिनाथाय ते नमः।
नमो मोहन नाथाय वत्सनाथाय ते नमः।।१९८।।

नमो मातृसनाथाय विश्वनाथाय ते नमः।
नमो बिंदुसनाथाय जयनाथाय ते नमः।।१९९।।

नमो मंगलनाथाय धर्मनाथाय ते नमः।
नमो गंगासनाथाय भूमिनाथाय ते नमः।।२००।।

नमो धीरसनाथाय बिंदुनाथाय ते नमः।
नमः कंचुकिनाथाय शृंगिनाथाय ते नमः।।२०१।।

नमः समुद्रनाथाय पर्वतनाथाय ते नमः।
नमो गांगल्यनाथाय कद्रूनाथाय नमो नमः।।२०२।।

नमो वेदान्तनाथाय श्रीनाथाय नमो नमः।
नमो ब्रह्मांडनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२०३।।

नमो गिरीशनाथाय वामनाथाय ते नमः।
नमो बीजसनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२०४।।

नमो मंदिरनाथाय मदनोनाथाय ते नमः।
नमो भैरवीनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२०५।।

अंबनाथाय नाथाय जंतुनाथाय ते नमः।
नमः कालिसनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२०६।।

नमो मुकुन्दनाथाय कुंदनाथाय ते नमः।
नमो कुंडलनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२०७।।

नमोऽष्टचक्रनाथाय चक्रनाथाय ते नमः।
नमो विभूतिनाथाय शूलनाथाय ते नमः।।२०८।।
नमो न्यायसनाथाय न्यायनाथाय ते नमः।
नमो दयासनाथाय जंगमनाथाय ते नमः।।२०९।।
नमो विशदनाथाय जगन्नाथाय ते नमः।
नमः कामिकनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२१०।।
नमः क्षेत्रसनाथाय जीवनाथाय ते नमः।
नमश्चेलंनाथाय चैलनाथाय ते नमः।।२११।।
नमो मात्रासनाथाय अमात्राय नमो नमः।
नमो द्वंद्वसनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२१२।।
नमः शूरसनाथाय शूरनाथ ते नमः।
नमो सौजन्यनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२१३।।
नमो दुष्टसनाथाय भैरवाय नमो नमः।
नमो भयसनाथाय बिंबनाथाय ते नमः।।२१४।।
नमो मायसनाथाय भैरवाय नमो नमः।
नमो विटंकनाथाय टंकनाथाय ते नमः।।२१५।।
नमश्चर्म सनाथाय खड्गनाथाय ते नमः।
नमः शक्तिसनाथाय धनुर्नाथाय ते नमः।।२१६।।
नमो वानसनाथाय शापनाथाय ते नमः।
नमो यंत्र सनाथाय भैरवाय नमो नमः।।२१७।।
नमो गंडूषनाथाय गंडूषाय नमो नमः।
नमो डाकिनी नाथाय भैरवाय नमो नमः।।२१८।।
नमो डामरनाथाय डारकाय नमो नमः।
नमो डंकसनाथाय डंकनाथाय ते नमः।।२१९।।
नमो मांडव्यनाथाय यज्ञनाथाय ते नमः।
नमो यजुःसनाथाय क्रीडानाथाय ते नमः।।२२०।।
नमः सामसनाथाय सर्वनाथाय ते नमः।
नमः शून्यासनाथाय स्वर्गनाथाय ते नमः।।२२१।।

◆◆◆

अध्याय-१४

श्री बटुक भैरव सहस्त्रनाम स्तोत्र

बिना किसी कायाकष्ट और बाह्य उपादानों के ही भक्तों की सभी मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाले इस 'बटुक भैरव सहस्त्रनाम' के मन्त्रबद्धकर्त्ता ब्रह्मानन्द भैरव ऋषि हैं। त्रिष्टुप छन्द में रचित हैं इसके श्लोक। बटुक भैरवदेव इसके देवता हैं, बं बीज है और ह्रीं शक्ति। हर प्रकार की इच्छाओं की आपूर्त्ति और सिद्धि को प्राप्त करने हेतु आप इस बटुक भैरव सहस्त्रनाम का जप कर सकते हैं।

सहस्त्रनामानि

ॐ ह्रीं बटुकः कामदोनाथोऽनाथ प्रिय प्रभाकरः।
भैरवो भीतिहा दर्पः कंदर्पो मीन केतनः।।१।।

हडो बटुक भूतेशो भूतनाथः प्रजापतिः।
दयाल क्रूर ईशानो जनीशो लोक बल्लभः।।२।।

देवो दैत्येश्वरो वीरो वीर वंधो दिवाकर।
बलिप्रियः सुरश्रेष्ठः कनिष्ठो नैष्ठिकः शिशुः।।३।।

महाबली महातेजा वित्तजो द्युति वर्द्धनः।
तेजस्वी वीर्यवान्वृद्धो विवृद्धो भूतनायकः।।४।।

बालकः पालकः कामो विकामः काममर्द्दनः।
कालिकारमणः कालीनायकः कालिकाप्रिय।।५।।

कालीशः कालिशकान्तः कालिकानन्दवर्धनः।
कालिका हृदयज्ञानी कालिकानतनमो नमः।।६।।

खगेशः खेचरः खेटो विशिष्टो खेटक प्रियः।
कुमारः क्रोधिनः कालिप्रियः पर्वतरक्षकः।।७।।

गणेज्यो गणयो गूढोगूढप्रायो गणेश्वरः।
गणनाथो गणश्रेष्ठो गणमुख्या गणाप्रियः।।८।।

घोरनादो घनश्यामो घनस्वामी घनान्तकः।
चंपकाभिश्चिरंजीवो चारुवेषश्चराचरः।।९।।

चिंत्योऽचिंत्य गुणो धीमान्सु चित्तस्थश्चित्तीश्वरः।
छत्री छत्रपतिश्छत्ता छिन्ननासा मनः प्रियः।।१०।।

छिन्नभश्छिन्न संतायश्छद्दीशच्छर्दिनांतकः।
जेता सिस्णुर्जहीशानो जनांनदो जनेश्वरः।।११।।

जनको जनसंतोषो जयजाप विनाशनः।
सासंधरो जनाराध्यो जनाध्यक्षो जनप्रियः।।१२।।

जीवहा जीवदो जन्तुर्जीवनाथो जलेश्वरः।
जयदो पित्वरो जिह्मो जयश्रीर्जयवर्धनः।।१३।।

जपभूमिर्जयकारी जय हेतुर्जयेश्वरः।
अंकारकृत नंतातात्मा झंकार हे तुरात्मभूः।।१४।।

झज्योश्चरी हरीभर्त्ता बिभर्त्ता भृत्यकेश्वरः।
सीत्कार हृदयेयात्मा टंकेशोठंकनायकः।।१५।।

ठकार भूठरध्रीशो गिरिपृष्ठकरः पतिः।
ढुंढिर्ढक्वकाप्रियः पांथो ढुंढिराजो निरंतकः।।१६।।

ताम्रस्तीमरश्वस्तोता तीर्थराजस्तडित्प्रभः।
त्रिअक्षस्त्र्यकक्षकस्तंभ स्ताक्षकस्तंभटेश्वरः।।१७।।

स्थालस्थः स्थावर स्थाता स्थिरबुद्धिः स्थिरेन्द्रियः।
स्थिरज्ञानी स्थिरप्रीतिः स्थिर स्थिति स्थिराशपः।।१८।।

दामो दामोदरी दंभो दडिमी कुसुम प्रियः।
दारिद्र्यहा दमी दिव्यो दिव्यदेहो दिनप्रभः।।१९।।

दिनकरो दिवानाथो दिवसेशो दिवाकरः।
दीर्घश्रवरोदलज्योतिर्दलेशीदलसुन्दरः।।२०।।

दलप्रियो दलाभासो दलपूज्यो दलप्रभुः।
दलकांतिर्दलाकारो दलसेको दलार्चितः।।२१।।

दीर्घबाहुदल श्रेष्ठो दललुब्धो दलाकृतिः।
दान वश्यो दयासिन्धुर्दयालुदर्षि वल्लभः।।२२।।

धनेशो धनदोधर्मो धनराजो धनप्रभुः।
धनप्रदो धनाध्यक्षो धनमान्यो धनंजय।।२३।।

धीदरो धातुको धाता ध्रुवो धूमलवर्धनः।
धनिष्ठा धवलच्छभी धनकाम्यो धनेश्वरः।।२४।।

धीरो धीरतरो धेनुधीरशो धरणी प्रभुः।
धराधीशो धरानाथो धरनीनायकोधरः।।२५।।

धराकांतो धरापालो धरनीजन वल्लभः।
धराधरो धरो धृष्टो धृतराष्ट्रो धनीश्वरः।।२६।।

नारदो नीरदो नेता नीतिपूज्यो नीतिप्रियः।
नीतिलभ्योन्नतीशमनी नीतिलब्धो व्रतीश्वरः।।२७।।

पार्थिवः पार्थ संपूव्यः पार्थदः प्रणतः प्रथुः।
पृथिवीशः पृथासूनः पृथिवीभत्य ईश्वरः।।२८।।

पुराणः पारदः पांथः पांचली पावकः प्रभुः।
पूर्वः सुरपति श्रेयान्प्रीतिदः प्रीति वर्द्धनः।।२९।।

पार्वतीशः परेशानः पार्वतींहृदय प्रियः।
पार्वतीरमणः पूतः पवित्रः पापनाशनः।।३०।।

पात्री पत्रालि सन्तुष्टः परितुष्टः पुमान्प्रियः।
पर्वेशः पर्वताधीशः पर्वतोनायकात्मजः।।३१।।

फाल्गुनस्तु भणनाथः फणीशः फणरक्षकः।
फणीयतिः फणीशानः फणराजः फणाकृतिः।।३२।।

बलभद्रोबली बालो बलधीर्बलवर्द्धनः।
बलप्राणो बलाधीशो बलिदान प्रियंकरः।।३३।।

बलिराणे बलिप्राणो बलिनाथो बलप्रियः।
बलौवरश्च बालेशो बालकः प्रियदर्शनः।।३४।।

भद्रोभद्रपदोभीमो भीमसेनो भयंकरः।
भवानीशो भवेशानो भवानी नायकोभकः।।३५।।

नकारो माधवो मीनो मीनकेतुर्महेश्वरः।
महेशु मर्दनो मनथो मिथुनेशोऽमराधिपः।।३६।।

मरीचिर्मंचुलो मोहो मोहहा मोहमर्दनः।
मोहको मोहनो मेधाप्रियो मोहविनायकः।।३७।।

महीपतिर्मही शानो महीराजो मनोहरः।
महीश्वरो महीपालो महीनाथो महीप्रियः।।३८।।

महीधरो महादेवो मनुराजो मनुप्रियः।
मौनीमोनधरो मेघो मन्दारो मतिवर्द्धनः।।३९।।

मति दो मन्थरो मन्त्रो मन्त्रीशो मन्त्रनायकः।
मेधावी मानदो मानो मानहा मान मर्दनः।।४०।।

मीनगो मकराधीशो मधूरो मणिरंजितः।
मणिरभ्यो मणिभ्राता मणिमंडन मंडितः।।४१।।

मन्त्रयो मन्त्रदो मुग्धो मोक्षदो मोक्षवल्लभः।
मल्लो मल्लप्रियो मंचो मल्लकोमेलनप्रभुः।।४२।।

मल्लिको मल्लिकागन्धी मल्लिका कुसुमप्रियः।
मालतीशो मघानाथो ऽमोघमूर्तिधेश्वरः।।४३।।

मुलाभो मूलहामूलो मूलदो मूलमत्सरः।
माणिक्यरोचिः संमुग्धो मणिकूटो मणिप्रियः।।४४।।

मुकुन्दो मदनो मंदो मंदवंद्यो मनुप्रभुः।
मनस्थो मेनकाधीशो मेनका प्रियदर्शनः।।४५।।

यामो यामो यमी देवो यादवो यदुनायकः।
याचकी याज्ञिको यज्ञो यज्ञेशो यज्ञवर्द्धनः।।४६।।

रमापती रमाधीशो रमेशो रमा वल्लभः।
रमापति रमानाथो रमाकान्तो रमेश्वरः।।४७।।

रेवतीरमणो रामो रमेशा रामनन्दनः।
रमामूर्ति रतीशानो राकायानायको रविः।।४८।।

लक्ष्मीधरो ललज्जिह्वो लक्ष्मीबीज जपेरतः।
लंपटो लंवराजेशो लंबोदरो लकारभूः।।४९।।

वामनो वल्लभोवंद्यो वनमाली वनेश्वरः।
वनस्थो वनगो विंध्यो विंध्यराजो वनाह्वयः।।५०।।
वनेचरो वनाधीशो वनमाला विभूषणः।
वेणुप्रियो वनाकारो वनाराध्यो वनप्रभुः।।५१।।
शंभु शंकर संतुष्टः शंवरारिः शरासनः।
शवरीप्रणतः शालः शिलीमुखध्वानिप्रियः।।५२।।
शकुलः शल्कः शीतः शीतरश्मिः सितांशुकः।
शीलदः शीकरः शीलः शीलशीली शनैश्चरः।।५३।।
सिद्ध सिद्धिकरः साध्यः सिद्धिभूः सिद्धिभावनः।
सिद्धान्त वल्लभः सिन्धुः सिन्धुतीर निषेवितः।।५४।।
सिंधुपति सरोधीरः सरसीरुह लोचनः।
सरित्पतिः सरित्संस्थः सरः सिन्धुः सरोवरः।।५५।।
सखाः वीरपतिः सूतः सचेताः सत्पतिः सितः।
सिन्धुराजः सदाभूतः सदाशिव सतांपतिः।।५६।।
सदीशः सदनः सूरिः सेव्यमानः सतीपतिः।
सूर्यः सूर्यपतिः सेव्यः सेवाप्रिय सनातनः।।५७।।
सतीशः सरशीनाथः सतीराजः सतीश्वरः।
सिद्धिराजः सतीदुष्टः सचिवः सव्यवाहनः।।५८।।
सतीनायकः सन्तुष्टः सव्यसाची सुमन्तकः।
सच्चितः सर्वसन्तोषी सर्वारामः सुसिद्धदः।।५९।।
सर्वाराध्यः सचिवाख्यः सतीपति सुसेवितः।
सागरः सगरः सार्थः समुद्रः समुद्रप्रियः।।६०।।
समुद्रतीरः सन्तुष्टः समुद्रप्रियदर्शनः।
समुद्रीशः सरोनाथः सरसिज विलोचनः।।६१।।
सरसीजलदाकारः सरसीजलदार्चितः।
समुद्रिकः समुद्रात्मा साध्यमानः सुरेश्वरः।।६२।।
सुरसेव्यः सुरेशानः सुरनाथ सुरार्चितः।
सुराध्यक्षः सुराराध्यः सुरवन्द्य विशारदः।।६३।।

सुरमुख्यः सुरप्रायः सुरसिंधु निवासवान्।
सुधाप्रियः सुधाधीशः सुधाराध्यः सुधापतिः।।६४।।

सुधानाथः सुधाभूतः सुधासागरसेवितः।
हारको हीरकोहंता हकिस्य रुचिः प्रभुः।।६५।।

हव्यवाही हरिद्राभो हरिद्वार समर्दनः।
हेतुर्हरित्राता हरिनाथो हतुर्हरिप्रियः।।६६।।

हरिपूज्यो हरिप्राणो हरिहृष्टो हरीन्द्रकः।
हरीशो संतको हीरो हरीनाम परायणः।।६७।।

हरिमुग्धो हरिभ्यो च हरदासो हरीश्वरा।
हरो हरिपतिर्हारो रोहिणी चित्तहारकः।।६८।।

हरहितो हरप्राणो हरवाहन शोभनः।
हासो हासप्रियो हूहूर्हुतभग् हुतवाहनः।।६९।।

हुताशनोहली हक्को हलाहल हलायुधः।
हलाकारो हलीनाशो हलिज्यो च हलिप्रियः।।७०।।

हरपुत्रो हरोत्साहो हरसूनुर्हरात्मजः।
हरवंद्यो हराधीशो हरांतको हराकृतिः।।७१।।

हरमान्यो हरांकस्थो हरवैरि विनाशनः।
हरशत्रुर्हरा वार्षो ऽहंकारो हरिणी प्रियः।।७२।।

हाटकेशो हरेशानो हाटक प्रिय दर्शनः।
हाटको हाटक प्राणो हाटकभूषण भूषितः।।७३।।

हेतिको हंतको हंसो हंसगतिर्हराह्वयः।
हंसीपतिर्हरोन्मत्तो हंसीशोहरवल्लभः।।७४।।

हरयुष्य प्रभो हंसीप्रियो हंस विलासकः।
हरवीजरतोहारी हुरितो हरितांपति।।७५।।

हरित्प्रर्भुर्हरित्पालो हरिरंतरनायकः।
हरिद्दिशो हरित्प्राणो हरिप्रिय प्रियोहरिः।।७६।।

हरेबो हुंकृति क्रुद्धो हेरंबानन्दनो हठी।
हेरंबप्राण संहर्ता हेरंब हृदय प्रियः।।७७।।

क्षमापतिक्षण क्षांतः क्षुरधार क्षितीश्वरः।
क्षितीशः क्षितितः क्षीणः क्षितिपालः क्षितीप्रभुः।।७८।।

क्षितिशानः क्षितिप्राण क्षितिनायक सत्प्रियः।
क्षितिराजः क्षणाधीशः क्षणपतिः क्षणेश्वरः।।७९।।

क्षणप्रियः क्षमानाथः क्षणदानायकः प्रियः।
क्षणिकः क्षणदाधीशः क्षणदाप्राणदः क्षत्री।।८०।।

क्षमः क्षोणिपतिः क्षोभः क्षोभकारी क्षमाप्रियः।
क्षमाशीलः क्षमारूपः क्षमामंडन मंडितः।।८१।।

क्षमानाथः क्षमाधारः क्षमाकारी क्षमाकरः।
क्षेमः क्षीणरजाः क्षुद्रः क्षुद्रपान विशारदः।।८२।।

क्षुद्रेशानः क्षमाकारः क्षीरपानकतत्परः।
क्षीरशायी क्षणेशानः क्षोणिभृत्क्षणदोत्सवः।।८३।।

क्षेमंकरः क्षमालुब्धः क्षमाशास्त्र विशारदः।
क्षमीश्वरः क्षमाकामः क्षमा हृदय मंडन।।८४।।

नीलाद्रि सचराशीशो नीलपर्वत सन्निभः।
नीलमणिप्रभारम्य शशिभूषण भूषितः।।८५।।

शशधरः शरीभूतो मुण्डमाला विभूषितः।
मुण्डस्थो मुण्ड सन्तुष्टो मुण्डमाला धरोऽनघः।।८६।।

दिग्वासा विदिगाकरो दिगंबर वरप्रदः।
दिगंबरीश आनन्दो दिगम्बर तनुद्भवः।।८७।।

पिंगलैक जटो घृष्टो डमरूवादन प्रियः।
सृणीकरः सृणीशानः खड्गधृक् सङ्ग पालकः।।८८।।

शूलहस्तो मतंगाभो मातंगोत्सव सुन्दरः।
अभयंकर ऊर्ध्वगो लंकापति विनाशनः।।८९।।

नगाशायो नगेशोनो नाग मंडन मण्डितः।
नगाकोश नगाधीशो नागशायी नगप्रियः।।९०।।

घटोत्सवो घटाकारो घंटावाद्य विशारदः।
कपालपाणि रंबेशः कपालासनसादनः।।९१।।

पद्मपाणिकपालश्च त्रिनेत्रो नाग वल्लभः।
किंकनी जालं संतुष्टो जलप्रायो जलाकरः।।९२।।

अपमृत्युहरो मायामोहमूल विनाशनः।
आयुर्धः कमलानाथः कमलाकांत वल्लभः।।९३।।
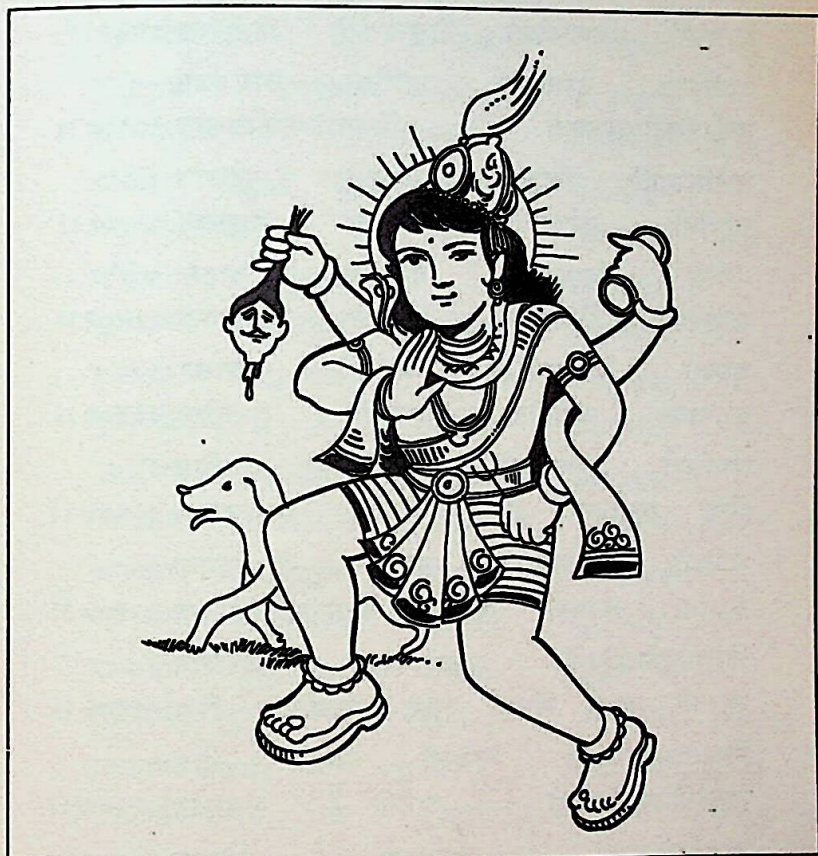
राज्यदो राजराजेशी राजीवपट्ट शोभनः।
डाकिनी नायको नित्यो नित्यधर्मपरायणः।।९४।।

डाकिनी हृदयज्ञानी डाकिनी देहनाशकः।
डाकिनी प्राणदः शुद्धः शुद्धयेचरितो विभुः।।९५।।

हेमप्रभो हिमेशानो हिमानी प्रिय दर्शनः।
हेमदो मर्मदो नामी नामधेयो नमात्मजः।।९६।।

बैकुण्ठो वासुकीप्राणो वासुकीकण्ठभूषणः।
कुण्डलीशो मखध्वंसी मखराजो मरदेश्वरः।।९७।।

मखाकारो मखाधीशो मखमाला विभूषणः।
अंबिका वल्लभो वाणीपर्तिवर्णी विशारदः।।९८।।

वाणीगोः वाच प्राणश्च वचस्थोवचनप्रियः।
वेसाधरो दिशामीशो दिङ्नागोहि दिगीश्वरः।।९९।।

दूर्वाप्रियो दुराराध्यो दारिद्रय भयगंजनः।
तर्कस्तर्कप्रियस्तर्क्यो वितवर्कस्तर्कवल्लभः।।१००।।

तर्कसिद्धोति सिद्धात्मा सिद्धदेहो गुहाशयः।
ग्रहगर्भो ग्रहेशानो गंधगंधी विशारदः।।१०१।।

मंगलो मंगलाकारो मंगलवाद्य वादकः।
मंगलीशो विमानस्थो विमानो नैकनायकः।।१०२।।

बुधेशो बिबुधाधीशो बुधवरो बुधाकरः।
बुधनाथो बुधप्रीतो बुधपंद्यो बुधाधियः।।१०३।।

बुधसिंहो बुधप्राणो बुधबुद्धो बुधप्रियः।
सोम प्रभोमनः सिद्धो मनोज प्राणनाशनः।।१०४।।

सोमेशो मशकाकारो सोमपाः सोमनायकः।
कामगः कामहा बौद्धः कामनाफलदोणियः।।१०५।।

त्रिदशोदशरात्रेशो दशानन विनाशनः।
लक्षंणो लक्ष्य संभर्ता लक्ष्य संख्योमनः प्रियः।।१०६।।

विभावसुर्नलेशानो नायको नगजा प्रियः।
नलकांतिर्मलोत्साहो नरदेवो नराकृतिः।।१०७।।

नरपतिर्नरेशानो नारायण नरेश्वरः।
अमिलो मारुतोमांसो मांसैक कर सेवितः।।१०८।।

मरीचिरमरेशानो मागधो मगधप्रभु।
सुन्दरीसेवकोद्धारी द्वारदेश निवासनः।।१०९।।

देवकी गर्भ संजातो देवकी सेवकः कुहूः।
वृहस्पतिः कविः शुक्रः शारदा साधकप्रियः।।११०।।

शारदासाधकः प्राणः शारदासेवकोत्सुकः।
शारदा साधक श्रेष्ठो वीतरागोगजप्रभुः।।१११।।

मांसप्रियो मधुप्राणो मधुमांस महोत्सवः।
मधुपो मधुप श्रेष्ठो मधुपान सदारतिः।।११२।।

मोदकादान संप्रीतो मोदकामोद मोदितः।
आमादोमोदिते नंदी नंदकेशो नंदेश्वरः।।११३।।

नदीप्रियो नीदनाथो नदीतीररु हस्तपाः।
तपनस्तापन ताम्रतापहा तापकारकः।।११४।।

पतंगो गौमुखो गौरो गोपालो गोपवर्द्धनः।
गोपतिर्गोपसंहर्ता गोवृन्दैक प्रियोतिगः।।११५।।

गर्विष्ठो गुणरम्यश्च गुणसिंधुर्गुणप्रियः।
गुणपूज्यो गुणायेतो गुणवाद्यो गुणोत्सुकः।।११६।।

गुणीशः केवलोगर्भः सुगर्भो गर्भरक्षकः।
गांभीर्यधारको धर्ता विधर्ता धर्मपालकः।।११७।।

जगदीशो जगन्मित्रो जगत्राता जगत्प्रभः।
जगद्धाता जगद्भोक्ता जगज्जाप्य विनाशनः।।११८।।

जगत्कर्ता जगद्धर्ता जगज्जीवनः जीवनः।
मालतीपुष्प सप्रीतो मालती कुसुमप्रभुः।।११९।।

मालती कुसुमाकारो मालती कुसुत्मोसवः।
रसालमंजरीलुब्धो रसाल निषेवितः।।१२०।।

रसालमंजरीरम्यो रसगंध तरुवल्लभः।
रसालतरुवासी वै रसालफल सुन्दरः।।१२१।।

रसालरस सन्तुष्टो रसालरस लालसः।
केतकी दुष्ट सन्तुष्टो केतकीगर्भ संभवः।।१२२।।

केतकीपत्रसंकाशः केतकी प्राणनाशनः।
गर्त्तस्थो गर्त्तगंभीरो गर्त्तेशो गर्त्तनातकः।।१२३।।

गर्त्तगेशोति गर्त्तस्थो गर्त्तक्षीर निवासकः।
गणसेव्वो गणाध्यक्षो गणराजो गणाह्वयः।।१२४।।

आनन्दभैरवो भीरूभैरिवेशो सरुर्भगः।
सुबह्मभैरवो वामभैरवो भूतभावनः।।१२५।।
भैरवीतनयो देवीपुत्रः पर्वतसंभवः।
नाम्नायेत सहस्रेण स्तुत्वा बटुकभैरवम्।।१२६।।

अष्टक, कवच एवं स्तोत्र

श्री काल भैरव अष्टक

देवराज सेव्यमान पावनांघ्रिपंकजं,
कालयज्ञ सूत्र मिंदु शेखरं कृपाकरम्।
नारदादि योगी वृन्दवन्दितं दिगबरं,
काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।१।।

भानुकोटिभास्वरं भवाब्धितारकंपरं,
नीलकंठमीप्सिनार्थदायकं त्रिलोचनम्।।
कालकालमंनुजाक्ष मक्षशूलमक्षरं,
काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।२।।

शूलटंकपाश दंडपाणिमादिकारणं,
श्यामकायमादिदेवमक्षर निरामयम्।
भीम विक्रमं प्रभुं विचित्र ताण्डव प्रिय,
काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।३।।

भुक्तिमुक्मिदायकं प्रशस्त चारुविग्रहं,
भक्तवत्सलं स्थितं समस्त लोक विग्रहम्।
विनिक्वणन्मनोज्ञ हेमकिंकिणीलसत्कटिं,
काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।४।।

धर्मसेतुपालके त्वधर्ममार्गनाशकं,
कर्मपाश मोचकं सुशमदायकं विभुम्।
स्वर्णवर्ण शेषपाश शोभिताङ्ग मण्डलं,
काशिका पुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।५।।

रत्नपादुका प्रभाभिराम् पादयुग्मकं,
नित्यमद्वितीयमिष्टदैवतं निरंजनम्।

मृत्युदर्पनाशनं करालदंश मोक्षणं,
काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।६।।

अट्टहास भिन्न पद्म जांडकोश संतति,
दृष्टिपात नष्टयायजालमुग्र शासनम्।
अष्टसिद्धिदायकं कपालमालि कन्धरं,
काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।७।।

भूसंघ नायकं विशाल कीर्तिदायकं,
काशिवास लोकपुण्यपाप शोधकं विभुम्।
नीतिमार्ग कोविदं परातनं जगत्पति,
काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे।।८।।

कालभैरवाष्टकं पठंतिये मनोहरं,
ज्ञानमुक्ति साधनं विचित्र पुण्यवर्द्धनम्।
शोकमोह दैन्यलोभ कोपताय नाशनं,
ते प्रयांति कालभैरवांघ्रिसंनिधंध्रवम्।।९।।

भैरव कवच

ॐ सहस्त्रारे महाचक्रे कर्पूरधवले गुरुः।
पातु मां बटुको देवी भैरवः सर्वकर्मसु।।
पूर्वस्यामसितांगो मां दिशि रक्षतु सर्वदा।
आग्नेय्यां च रुरुः पातु दक्षिणे चण्डभैरवः।।
नैर्ऋत्यां क्रोधनः पातु उन्मत्तः पातुपश्चिमे।
वायव्यां मां कपाली च नित्यं पायात्सुरेश्वरः।।
भीषणो भैरवः पातु उत्तरस्यां तु सर्वदा।
संहारभैरवः पायादीशान्यां च महेश्वरः।।
ऊर्ध्व पातु विधाता च पाताले नदको विभुः।
सद्योजातस्तु मां पायात्सर्वतो देवसेवितः।।
वामदेवो वनांते च बने घोरस्तथाऽस्तु।
जले तत्पुरुषः पातु स्थले ईशान एव च।।
डाकिनी पुत्रकः पातु पुत्रान् मे सर्वतः प्रभुः।
हाकिनी पुत्रकः पातु दारांस्तु लाकिनीसुतः।।

पातु शाकिनिका पुत्रः सैन्यं वै कालभैरवः।
मालिनी पुत्रकः पातु पशूनश्वान् गजांस्तथा।।
महाकालोऽवतु क्षेत्रं श्रिपं मे सर्वतो गिरा।
वाद्यं वाद्यप्रियः पातु भैरवो नित्य सम्पदा।।
एतत्कवचमीशान तव स्नेहात्प्रकाशितम्।
नारव्येयं नरलोकेषु सारभूतं मुरप्रियम्।।
यस्मै कस्मै न दातव्यं कवचं सुरदुर्लभम्।
न देयं परशिष्येभ्यः कृपणेभ्यश्च शंकर।।
यो ददाति निषिद्धेभ्यः सर्वभ्रष्टो भवेत्किल।
अनेन कवचेनैव रक्षां कत्वा विचक्षणः।।
विचरन्यत्र कुत्रापि न विघ्नैः परिभूयते।
मन्त्रेण रक्षते योगी कवचं रक्षक यतः।।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन दुर्लभं पाप चेतसाम्।
भूजें रभांत्वचि वापि लिखित्वा विधिवत्प्रभो।।
कुंकुमेनाष्टगंधेन गोरोचनैश्च केसरैः।
धारयेत्पाठयेद्वापि संपठेद्वापि नित्यशः।।
संप्राप्नोप्ति फल सर्व नात्र कार्या विचारणा।
सततं पठयते यत्र तत्र भैरव संस्थितिः।।
न शक्नोमि प्रभावं वै कवचस्यास्य वर्णितुम्।
नमोभैरव देवाय सर्वभूताय वै नमः।।
नमस्त्रैलोक्यनाथाय नाथनाथाय वै नमः।।

अथ क्षेत्रपाल भैरवाष्टकस्तोत्रम्

ॐ यं यं यं यक्षरूपं दशदिशि वदनं भूमिकम्पायमानं,
सं सं सं संहारमूर्तिं शिरमुकुटजटा शेखरं चन्द्रबिम्बम्।
दं दं दं दीर्घकायं विकृतनखमुखं ऊर्ध्वरोमं करालं,
पं पं पं पापनाशं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।१।।

रं रं रं रक्तवर्णं कटकटिततनुं तीक्ष्णदंष्ट्रा विशालं,
घं घं ङ्घं घोरघोषं घघ घघ घटितं घर्घराघोरनादम्।
कं कं कं कालरूपं धगधगधगितं ज्वालितं कामदेहं,
दं दं दं दिव्यदेहं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।२।।

लं लं लं लंबदन्तं ललललललुलितम दीर्घजिह्वं करालम्,
धूं धूं धूं धूर्मवर्णं स्फुट विकृतमुखं भासुरं भीमरूपम्।
रुं रुं रुं रुण्डमालं रुधिरमयमुखम् ताम्रनेत्रम् विशालम्,
नं नं नं नग्नरूपं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।३।।

वं वं वं वायुवेगं प्रलयपरिमितं ब्रह्मरूपंस्वरूपम्,
खं खं खं खड्गहस्तं त्रिभुवननिलयं भास्करं भीमरूपम्।
चं चं चं चालयंतं चलचलचलितं चालितं भूतचक्रम्,
मं मं मं माय कायं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।४।।

शं शं शं शंखहस्तं शशिकरधवलं पूर्ण तेजःस्वरूपं,
भं भं भं भावरूपं कुलमकुलकुलं मन्त्रमूर्ति स्वतत्त्वम्।
भं भं भं भूतनाथं किलकिलितवचश्चारु जिह्वालुलन्त,
अं अं अं अंतरिक्षं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।५।।

खं खं खं खड्गभेदं विषममृतमयं काल-कालांधकारम्,
क्षीं क्षीं क्षीं क्षिप्रवेगं दह दह दहनं नेत्र सन्दीप्यमानम्।
हूं हूं हूं हुङ्कारशब्दं प्रकटितगहनं गर्जितं भूमिकम्पं,
वं वं वं बाललीलं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।६।।

सं सं सं सिद्धियोगं सकलगुणमयं देवदेव प्रसन्नम्,
पं पं पं पद्मनाभं हरिहरवदनं चन्द्रसूर्याग्निनेत्रम्।
यं यं यं यक्षनाथं सततभयहरं सर्वदेवस्वरूपम्,
रौं रौं रौं रौद्ररूपं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।७।।

हं हं हं हंसघोषं हसित कहकहाराव रौद्राट्टहासम्,
यं यं यं यक्षरूपम् शिरसि कनकजं मौकुटं सन्दधानम्।
रं रं रं रंगरंग—प्रहसितवदनं पिङ्गलश्यामवर्ण,
सं सं सं सिद्धिनाथं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम्।।८।।

एवं वै भावयुक्तः प्रपठति मनुजो भैरवस्याष्टकं यो,
निर्विघ्नं दुःखनाशं भवति भयहरं शाकिनीनां विनाशम्।
दस्यूनां व्याघ्र सर्पोद्भवजनितभियां जायते सर्वनाशः,
सर्वे नश्यंति दुष्टाग्रहगणविषमा लभ्यते चेष्ट सिद्धिः।।९।।

श्री बटुक भैरव ब्रह्मकवचम्

ॐ पातु शिरसि नित्यं पातु ह्रीं कण्ठदेशके।

बटुकं पातु हृदये आपदुद्धारणाय च॥१॥
कुरु द्वयं मे लिङ्गस्य आधारे बटुकाय च।
सर्वदा पातु ह्रीं बीजं बाह्वोर्युगलमेव च॥२॥
षडंगसहितो देवो नित्यं रक्षतु भैरवः।
ॐ ह्रीं बटुकाय सततं सर्वांगे मम सर्वदाः॥३॥
ॐ ह्रीं कालाय पादयोः पातु पातु वीरासनं हृदि।
ॐ ह्रीं महाकालः शिरः पातु कंठदेशे तु भैरवः॥४॥
दण्डपाणिर्गुह्यमूले भैरवी-सहितस्ततः।
ललिताभैरवः पातु अष्टाभिः शक्तिभिः सह॥५॥
विश्वनाथः सदा पातु सर्वांगे मम सर्वदा।
अन्नपूर्णा सदा पातु अंसं रक्षतु चण्डिका॥६॥
असितांगः शिरः पातु ललाटं पातु भैरवः।
चण्डभैरवः पातु वक्त्रे कण्ठे श्री क्रोधभैरवः॥७॥
मूलाधारं भीषणश्च बाहु युग्मं च भैरवः।
हंस बीजं पातु हृदि सोऽहं रक्षतु प्राणयोः॥८॥
प्राणापानसमानं च उदानं व्यानमेव च।
रक्षन्तुः द्वारम्ले तु दशदिक्षु समन्ततः॥९॥
प्रणवः पातु सर्वांगं लज्जा बीजं महाभये।
इति श्रीब्रह्मकवचं भैरवस्य प्रकीर्तितम्॥१०॥

श्री बटुक-हृदयम्

कैलाशशिखरासीनं, देवदेवं जगद्गुरुम्।
देवी पप्रच्छ सर्वेशं, शङ्करं वरदं शिवम्॥१॥

पार्वती उवाच

देव देव परेशान भक्ताभीष्टप्रदायक।
प्रब्रूहि मे महाभाग गोप्यं यद्यति न प्रभो॥२॥

शङ्कर उवाच

बटुकस्यैव हृदयं, साधकानां हिताय च।
शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि हृदयं बटुकस्य च॥३॥

गुह्याद्गुह्यतरं गुह्यं तच्छृणुष्व तु मध्यमे।
हृदयस्यास्य देवेशि ! बृहदारण्यको ऋषिः।।४।।

छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातो देवता बटुकः स्मृतः।
प्रयोगाभीष्टसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः।।५।।

ॐ प्रणवेशः शिरः पातु ललाटे प्रमथाधिपः।
कपोलौ कामवपुषो भ्रूभागे भैरवेश्वरः।।६।।

नेत्रयोर्वह्निनयनो नासिकायामघापहः।
ऊर्ध्वोष्ठे दीर्घनयनो ह्यधरोष्ठे भयाशनः।।७।।

चिबुके भालनयनो गण्डयोश्चन्द्रशेखरः।
मुखान्तरे महाकालो भीमाक्षो मुखमण्डले।।८।।

ग्रीवायां वीरभद्रोऽव्याद् घण्टिकायां महोदरः।
नीलकण्ठो गण्डदेशे जिह्वायां फणिभूषणः।।९।।

दशने वज्रदशनो तालुके ह्यमृतेश्वरः।
दोर्दण्डे वज्रदण्डो मे स्कन्धयोः स्कन्धवल्लभः।।१०।।

कूर्परे कञ्जनयनो फणौ फेत्कारिणीपतिः।
अङ्गुलीषु महाभीमो नखेषु अघहाऽवतु।।११।।

कक्षे व्याघ्रासनः पातु कट्यां मातङ्गचर्मणी।
कुक्षौ कामेश्वरः पातु वस्तिदेशे स्मरान्तकः।।१२।।

शूलपाणिर्लिङ्गदेशे गुह्ये गुह्येश्वरोऽवतु।
जङ्घायां वज्रदमनो जघने जृम्भकेश्वरः।।१३।।

पादौ ज्ञानप्रदः पातु धनदश्चाङ्गुलीषु च।
दिग्वासी रोमकूपेषु सन्धिदेशे सदाशिवः।।१४।।

पूर्वाशां कामपीठस्थ उड्डीशस्थोऽग्निकोणके।
याम्यां जालंधरस्थो मे नैऋत्यां कोटिपीठगः।।१५।।

वारुण्यां वज्रपीठस्थो वायव्यां कुलपीठगः।
उदीच्यां बाणपीठस्थ ऐशान्यामिन्दुपीठगः।।१६।।

ऊर्ध्वं वीजेन्द्रपीठस्थः खेटस्थो भूतलोऽवतु।
रुरुः श्यानेऽवतु मां चण्डो वादे सदाऽवतु।।१७।।

गमने तीव्रनयन आसीने भूतवल्लभः।
युद्धकाले महाभीमो भयकाले भयान्तकः।।१८।।
रक्ष रक्ष परेशान भीमदंष्ट्र भयापह।
महाकाल महाकाल! रक्ष मां कालसङ्कटात्।।१९।।
इतीदं हृदयं दिव्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
सर्वसम्पत्प्रदं भद्रे सर्वसिद्धिफलप्रदम्।।२०।।

अध्याय-१६

स्तुतियां और आरतियां

भैरवदेव की स्तुति

नमो भैरव भीम, भीषण कृपालम्।
नमो चन्द्र तुण्डं, बटुकनाथ दयालम्।।
नमो त्रैलतेराम, नमो प्रेत नाथम्।
नमो चन्द्रशेखर दिपै चन्द्र भालम्।।
नमो रुद्र अमरेश, नकलेश स्वामी।
नमो विश्व भूतेश, जौमेष ब्यालम्।।
दिगम्बर अडम्बर, नमो ताप मोचन।
त्रिलोचन विमोचन गले मुण्डमालम्।।
नमो क्षेत्र पालम् महाकाल कालम्।
नमो भीम लोचन भुजंगी विशालम्।।
नमो चक्रपाणि, करण लम्ब उन्नत।
नमोशिवकपिलं ब्यालविक्राल चालम्।।
नमो सुन्दरानन्द, आनन्द कन्दम्।
उमानन्द काशी, नमो कोतवालम्।।
नमो अम्बनाथम् नमो प्रेत नाथम्।
नमो जगन्नाथम् नमो चक्रनाथम्।।
नमो भूत नाथम् नमो बैजनाथम्।
सुवन विश्वनाथम् कृपा नाथ नाथम्।।
नमो नाथ अशतांग, क्रोधेश मंजुल।
नमो क्रोध वत्स, त्रमम्बक भुजालम्।।
नमो नाथ दशपांण, कृत्यायु बामन।
नमो नाथ अस्तुति, करत नत्थूलालम्।।

बटुक भैरवजी की स्तुति

अभयदान दीजै दयालु प्रभु, सकल सृष्टि हितकारी।
बटुकनाथ भक्त-दुखभंजन, भवभंजन शुभ सुखकारी।।

दीनदयालु कृपालु कालरिपु, अलखनिरंजन महान् योगी।
मंगलरूप अनूप छबीले अलिख भुवन के तुम भोगी।।
कर डमरू अति रंगरस भीने वाहन स्वान की छांव न्यारी। बटुकनाथ०

असुरनिकन्दन सब दुखभंजन, वेद बखाने जग जाने।
रुंडमाल गल-ब्याल खप्पर कर भश्म बदन शोभा जाने।।
डमरूधर त्रिशलधर विषधर बाघम्बरधर गिरिचारी। बटुकनाथ०

यह भवसागर अति अगाध है, पार उतर कैसे जूझे।
ग्राह मगर बहु कच्छप छाये, मार्ग कहो कैसे सूझै।।
नाम तुम्हारा नौका निर्मल, प्रभु शंकर के अवतारी। बटुकनाथ०

काम-क्रोध-लोभ अति दारुण, इनपे मेरो वश नाहीं।
द्रोह-मोह-मद संग न छौड़ै, आन देत नहिं तुम ताईं।।

क्षुधा-तृषा नित लगी रहत है, बढ़ी विषय तृष्णा भारी। बटुकनाथ०
में जानू तुम सद्गुणसागर, अवगुण मेरे सब हरियो।
किंकरकी विनती सुन स्वामी, सब अपराध क्षमा करियो।।
तुम तो सकल विश्व के स्वामी मैं हूं प्राणी संसारी। बटुकनाथ०
तुम ही भैरव कर्त्ता-हर्त्ता, तुम ही जग के रखवारे।
तुम हो गगन मगन पुनि पृथिवी हे शिवजी के अवतारे।।
तुमही पवन हुताशन भैरव तुमही रवि शशि तमहारी। बटुकनाथ०
अशुपति अजर अमर अमरेश्वर, योगेश्वर बटुक स्वामी।
स्वानारूढ़ गूढ़ गुरु जगपति, भक्तवत्सल प्रभु निष्कामी।।
सुषमासागर रूप उजागर गावत है सब नरनारी। बटुकनाथ०
बटुकदेव देवों के अधिपति कर में डमरू अति साजै।
दीप्त ललाट लाल दोउ लोचन उर आनत ही दुःख भाजै।।
परम प्रसिद्ध पुनीत पुरातन, महिमा त्रिभुवन विस्तारी। बटुकनाथ०
ब्रह्मा-विष्णु-महेश-शेष-मुनि, नारद आदि करत सेवा।
सबकी इच्छा पूरन करते, नाथ सनातन तुम देवा।।
भक्ति-मुक्ति के दाता भैरव नित्य निरन्तर सुखकारी। बटुकनाथ०
महिमा इष्ट बटुक भैरव की, पढ़े सुने जो नित्य गावे।
अष्ट सिद्धि, नवनिध सुख-सम्पत्ति सदा सर्वदा वह पावें।।
मुझ अनाथ पर प्रसन्न होकर, कृपा कीजिए त्रिपुरारी। बटुकनाथ०

श्रीबटुक भैरव की आरती

आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।
विपदा विदारण भक्त हृदय की।।
हाथ त्रिशूल गले मुण्डमाला।
डमरू खड्ग त्रिनेत्र विशाला।।
राजत चन्द्रकला शिवनीकी।
आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।
क्षेत्रपाल श्मशान के वासी।
व्यालपवीत हाथ यम फांसी।।
शोभित रूप दिगम्बर नीकी।

आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।
जयशङ्कर प्रियबन्धन हारी।
बलिमुकनाथ शत्रुलयकारी।।
वाहन स्वान जगत के फीकी।
आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।
व्याघ्र चर्म पहिरत योगिनपति।
काशी द्वारपाल भैरव पति।।
पशुपति भिक्षुक भेष बटुक की।
आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।
मूसल दक्षिण अङ्ग बहन्ता।
खप्परधारी योगिन कन्ता।।
अष्टमूर्ति भूधर योगी की।
आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।
दिगम्बर बटुकेश कृपाला।
काल शमन कङ्काल कपाला।।
नाश करत तुम दुष्टन की।
आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।
बटुक भैरव की जो आरती गावै।
व्याघ्र चर्म रुद्राक्ष चढ़ावै।।
रक्षा करत प्रभु ताके घर की।
आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।
सभी भक्त यह आरती गावत।
बिल्व पत्र फल लै नित आवत।।
आरती करत काल भैरव की।
आरती कीजै श्री बटुक भैरव की।।

श्री भैरव देव की मधुर आरती

ॐ जय जय जय भैरव बाबा।
स्वामी जय जय भैरव बाबा।।
नमो विश्व भुतेश भूजंगी, मंजुल कहलावा।
उमानन्द अमरेश विमोचन जनपद सिरनावा।।
ॐ जय जय भैरव बाबा।।

काशी के कूतवाल आपको सकल जगत ध्यावा।
स्वान सवारी बटुकनाथ प्रभु मद पी हरषावा।।
ॐ जय जय भैरव बाबा।।

रवि के दिन जग भोग लगावै मोदक मन भावा।
भीषण भीम कृपालु त्रिलोचन खप्पर भर खावा।
ॐ जय जय भैरव बाबा।।

शेखर चन्द्र कृपालु शशी प्रभु मस्तक चमकावा।
गलमुण्डन की माल सुशोभित सुन्दर दरसावा।।
ॐ जय जय भैरव बाबा।।

नमो नमो आनन्द कन्द प्रभु लटकत मठ झावा।
कर्ष तुण्ड शिव कपिल त्रयम्बक वश जग में छावा।
ॐ जय जय भैरव बाबा।।

जो जन तुम्हरो ध्यान लगावत संकट नहिं पावा।
छीतर मल जन शरण तुम्हारी आरति प्रभु गावा।।
ॐ जय जय भैरव बाबा।।

दोहा—

मेरी भी सुन प्रार्थना, मेटो सारे क्लेश।
इच्छा पूरी सब करो, जय जय जय भूतेश।।
मुझे भरोसा आपका, तुम देवी के लाल।
इस धरणी पर भक्त को, करदो मालामाल।।

श्री भैरव जी की आरती

जय भैरव देवा, प्रभु, जय भैरव देवा।
सुरनर मुनि सब करते, प्रभु तुम्हारी सेवा।। जय०।।

तुम्हीं पाप उद्धारक, दुःख सिन्धु तारक।
भक्तों के सुख कारक, भीषण वपु धारक।। जय०।।

वाहन श्वान विराजत, कर त्रिशूलधारी।
महिमा अमित तुम्हारी जय जय भयहारी।। जय०।।

तुम बिन शिव की सेवा, सफल नहीं होवे।
चतुर्वर्तिका दीपक, दर्शन दुःख खोवे।। जय०।।

तेल चटक दधिमिश्रित भाषावली तेरी।
कृपा कीजिए, भैरव, करो नहीं देरी।।जय०।।
पांव घूंघरू बाजत, डमरू डमकावत।
बटुकनाथ बन बालक, जन मन हरषावत।।जय०।।
श्री भैरव की आरती, जो कोई गावे।
सो नर जग में निश्चय, मनवांछित पावे।।जय०।।

भोपा हैं आपके पुजारी। करें आरती सेवा भारी।।
भैरव भात आपका गाऊं। बार-बार पद शीश नवाऊं।।
आपहि वारे छीजन धाये। ऐलादी ने रुदन मचाये।।
बहन त्याग भाई कहं जावे। तो दिन को माई भात पिन्हावे।।
रोए बटुक नाथ करुणाकर। गरे हिवारे में तुम जाकर।।
दुःखित भई ऐलादी बाला। तब हर का सिंहासन हाला।।
समय ब्याह का जिस दिन आया। प्रभु ने तुमको तुरत पठाया।।
विष्णु कही मत बिलम लगाओ। तीन दिवस को भैरव जाओ।।
दल पठान संग लेकर धाया। ऐलादी को भात पिन्हाया।।
पूरण आस बहन की कीनी। सुर्ख चुन्दरी सिर धर दीनी।।
भात भरा लौटे गुण ग्रामी। नमो नमामी अन्तर्यामी।।
छीतर मल प्रभु तुम्हरा चेरा। नगर हाथरस करहिं बसेरा।।

दोहा—

जय जय जय भैरव बटुक, स्वामी संकट टार।
कृपा दास पर कीजिए। शंकर के अवतार।।
जो यह चालीसा पढ़े, प्रेम सहित सत बार।
उस घर सर्वानन्द हों, वैभव बढ़े अपार।।

प्रेतराज चालीसा

दोहा—

गणपति की कर वन्दना, गुरु चरणन चितलाय।
प्रेतराज जी का लिखूं, चालीसा हरषाय।
जय जय भूताधिप प्रबल, हरण सकल दुःख भार।
वीर शिरोमणि जयति जय, प्रेतराज सरकार।

आरती श्री भैरवनाथ की

सुनो जी भैरव लाड़िले कर जोड़ कर विनती करूं।
कृपा तुम्हारी चाहिये मैं ध्यान तुम्हारा ही धरूं।
में चरण छूता आपके अर्जी मेरी सुन लीजिये।
मैं हूं मती का मन्द मेरी कुछ मदद तो कीजिये।
महिमा तुम्हारी बहुत कुछ थोड़ी-सी मैं वर्णन करूं।
सुनो जी भैरव....।

करते सवारी स्वान की चारों दिशा में राज है।
जितने भूत और प्रेत सबके आप ही सरताज हैं।
हथियार हैं जो आपके उनका मैं क्या वर्णन करूं।
सुनो जी भैरव....।

माता जी के सामने तुम नृत्य भी करते सदा।
गा गा के गुण अनुवाद से उनको रिझाते हो सदा।
एक सांकली है आपकी तारीफ उसकी क्या करूं।
सुनो जी भैरव....।

बहुत सी महिमा तुम्हारी मेंहदीपुर सरनाम है।
आते-जगत के यात्री बजरंग का स्थान है।
श्री प्रेतराज सरकार के मैं शीश चरणों में धरूं।
सुनो जी भैरव....।

निशिदिन तुम्हारे खेल से माता जी खुश होती रहें।
सिर पर तुम्हारे हाथ रखकर आशीर्वाद देती रहें।
कर जोड़कर विनती करूं अरु शीश चरणों में धरूं।
सुनो जी भैरव....।

आरती बटुक भैरव की

जैकार सदा बोलो श्री भैरव कोतवाल कप्तान की।
जग संकट नाशन दुष्ट विनाशन बटुक वीर बलवान की।
हे भैरव सुखदायक तुम, श्री हनुमत के पायक तुम।
सेना और दलनायक तुम, पदवी है फौज प्रधान की।
तुम महातेज बलारी हो रणधीर भक्त दुःखहारी हो।
विख्यात विश्व में भारी हो, नित करो सवारी स्वान की।

त्रिभुवन राज तुम्हारा है, दुःखियों का काज सुधारा है।
डूबत जहाज उबारा है, बलिहारी कृपा निधान की।
श्री मेंहदीपुर दरबार भला, दिन दिन बढ़ती महावीर कला।
घाटे में पुण्य प्रताप फला, महिमा विशेष हनुमान की।
पीछे प्रेत विराज रहे, सन्मुख भैरव तुम गाज रहे।
भय से भूतादिक भाग रहे, जब मार पड़े बलधार की।
महावीर शरण जो आते हैं, श्री प्रेतराज गुण गाते हैं।
भैरव सब रोग नशाते हैं, हरते हैं पीर जहान की।
जग के सब संकट दूर करो, हे भैरव सुख भरपूर करो।
यह करुणा कान हजूर धरो, है टेर निपट नादान की।
हमरी तुम ही तक पेश चली, हे नाथ! करोगे आप भली।
तुम्हरे सिर ऐसे वीर बली, जिनमें रघुवर और जानकी।
यह दीन दास दुःख गर्जी है, दुःख हरो आपकी मर्जी है।
जन शिवप्रसाद की अर्जी है, अब शरणागत श्रीमान की।

आरती प्रेंतराज सरकार की

आरती संकट हारी की प्रेत प्रभू जन हितकारी की।
रत्नमय सिंहासन राजै, स्वर्णमय मुकुट शीश भ्राजै।
गले मणि माल दिव्य साजै, तेज लखि सूर्य चन्द्र लाजै।
वस्त्र जगमग तनधारी की, आरती संकट हारी की।
हाथ में धनु कृपाण शरढाल, संग में सेना बड़ी विशाल।
देखकर भागे भूत कराल, भक्त संकट हर अमित कृपाल।
भूत पति जग अवतारी की, आरती संकट हारी की।
आन प्रकटे बालाजी धाम, छा रहा भारत भर में नाम।
किये भक्तों के पूरण काम, जयति जय प्रेतराज बलधाम।
भक्त उरधाम बिहारी की, आरती संकट हारी की।
आरती जो करते मन से, क्लेश सब छूटत हैं तन से।
रहे परि पूरण तन जन से, प्रेम हो प्रभु के चरणन से।
सुखद लीला विस्तारी की, आरती संकट हारी की।

श्री बटुकभैरव-रहस्यम्

श्रीदेव्युवाच

भगवन् देवदेवेश ! रहस्यं बटुकाय मे।
ब्रूहि येन वशीकुर्यात्, साधको भैरवं शिवम्।।१।।

श्रीबटुक उवाच

शृणु देवि ! परं गोप्यं, कथयामि सुशोभने।
रहस्यं सिद्धिदं साक्षाद्, बटुकस्य महात्मनः।।२।।

सर्वे बटुकदेवस्य, साधने ये निरूपिताः।
उपाया निष्फला एव, विधानं वीरसाधनम्।।३।।

यो वीरसाधनं हित्वा, उपायं चान्यमाश्रयेत्।
न स सिद्धिमवाप्नोति, नरो वर्षशतैरपि।।४।।

दक्षिणे भूचरः पातु, वामे पातु सदाशिवः।
केशान् पातु विशालक्षो, मूर्धानं मे मरुत्प्रियः।।५।।

मस्तकं पातु भृग्वीशो, नेत्रं पातु महामनाः।
कपोलौ पातु वीरेशो, मण्डौ गण्डारिमर्दनः।।६।।

उत्तरोष्ठं विरूपाक्षो, ह्यधरे योगिनीप्रियः।
दन्ते वक्षसि विध्वंसी, चिबुके पातु कालधृक्।।७।।

कण्ठे रक्षतु मे देवो, नीलकण्ठो जगद्गुरुः।
दक्षस्कंधे गिरीन्द्रेशो, वामस्कन्धे च सुन्दरः।।८।।

भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदाऽवतु।
वामे भुजे सर्वभीमो, हृदयं पातु पाण्डुरः।।९।।

दक्षस्तने पशुपतिर्वामे पांतु महेश्वरः।
उदरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा।।१०।।

नाभौ कामप्रविध्वंसी, जङ्घे पातु महामनाः।
जानुनी पातु यामित्रो, गुल्फौ गौरपतिः सदा।।११।।

पादपृष्ठौ ज्ञाननिधिस्तथा पादाङ्गुलीर्हरः।
पादाधः पातु सततं, व्योमकेशो जगत्प्रियः।।१२।।

इति रक्षां समाधाय, मन्त्ररक्षां ततश्चरेत्।

अथ मन्त्ररक्षा—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः पूर्वे भैरवाय नमः।
ॐ ह्रिं ह्रुं ह्रौं ओग्नेये रुरुभैरवाय नमः।
ॐ ह्रीं श्रीं दक्षिणे चण्डभैरवाय नमः।
ॐ ल्हां ग्ल्हूं ग्ल्हं नग नग नैर्ऋत्ये क्रोधभैरवाय नमः।
ॐ पूं श्रूं पूं सः सः पश्चिमे उन्मत्तभैरवाय नमः।
ॐ ब्रां ब्रां ब्रां वायव्ये कपालभैरवाय नमः।
ॐ भ्रां भ्रां उत्तरे भीषणभैरवाय नमः।
ॐ प्रूं प्रूं स्त्रूं फट् ईशाने संहारभैरवाय नमः।

।। इति श्रीश्वरदेवीसंवादे रुद्रयामले तन्त्रे बटुकभैरव-रहस्यं सम्पूर्णम्।।

श्री बटुकभैरव-सहस्त्रनामस्तोत्रम्

।। अथ स्तोत्रम्।।

ईश्वर उवाच

देवेशि भक्तिसुलभे देवनायकवन्दिते।
भक्तानां कार्यसिद्ध्यर्थं निदानं ब्रूहितवत्तः।।
विनैव न्यासजालेन पूजनेन विना भवेत्।
विना कायादिक्लेशेन वित्तव्ययं विनेश्वरि।।

देव्युवाच

ॐ अस्य श्रीबटुकभैरवसहस्त्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मानन्दभैरव ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। बटुकभैरवो देवता। वं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

भैरव-तन्त्रोक्तं श्रीबटुकभैरव-कवचम्

ॐ सहस्त्रारे महाचक्रे कर्पूरधवले गुरुः।
पातु मां बटुको देवो भैरवः सर्वकर्मसु।।१।।

पूर्वस्यामसिताङ्गो मां दिशि रक्षतु सर्वदा।
आग्नेय्यां च रुरुः पातु दक्षिणे चण्डभैरवः।।२।।

नैर्ऋत्यां क्रोधनः पातु उन्मत्तः पातु पश्चिमे।
वायव्यां मां कपाली च नित्यं पायात् सुरेश्वरः।।३।।

भीषणो भैरवः पातु उत्तरस्यां तु सर्वदा।
संहारभैरवः पायादीशान्यां च महेश्वरः।।४।।

ऊर्ध्वं पातु विधाता च पातले नन्दको विभु।
सद्योजातस्तु मां पायात् सर्वतो देवसेवितः।।५।।

रामदेवो वनान्ते च वनेऽघोरस्तथाऽवतु।
जले तत्पुरुषः पातु स्थले ईशान एव च।।६।।

डाकिनीपुत्रकः पातु पुत्रान् मे सर्वतः प्रभुः।
हाकिनीपुत्रकः पातु दारांस्तु लाकिनी सुतः।।७।।

पातु शाकिनिकापुत्रः सैन्यं वै कालभैरवः।
मालिनीपुत्रकः पातु पशूनश्वान् गजांस्तथा।।८।।

महाकालोऽवतु क्षेत्रं श्रियं मे सर्वतो गिरा।
वाद्यं वाद्यप्रियः पातु भैरवो नित्यसम्पदा।।९।।[1]

श्रीबटुकभैरव-ब्रह्म कवचराजः

अथ विनियोग—

(अस्य श्रीबटुकभैरवकवचराजस्य भैरवऋषिरनुष्टुप्छन्दो बटुकभैरवो देवता मम सर्वार्थसाधने विनियोगः।)

ॐ पातु शिरसि नित्यं पातु ह्रीं कण्ठदेशके।
बटुकं पातु हृदये आपदुद्धारणाय च।।१।।

कुरुद्वयं मे लिङ्गस्य आधारे बटुकाय च।
सर्वदा पातु ह्रीं बीजं बाह्वोर्युगलमेव च।।२।।

षडङ्गसहितो देवो नित्यं रक्षतु भैरवः।
ॐ ह्रीं बटुकाय सततं सर्वाङ्गे मम सर्वदा।।३।।

ॐ ह्रीं कालाय पादयोः पातु पातु वीरासनं हृदि।
ॐ ह्रीं महाकालः शिरः पातु कण्ठदेशे तु भैरवः।।४।।

दण्डपाणिर्गुह्यमूले भैरवी-सहितस्ततः।
ललिताभैरवः पातु अष्टाभिः शक्तिभिः सह।।५।।

---

१. तन्त्रों में अनेक कवच-स्तोत्रों के पाठ प्राप्त होते हैं, उनमें से यहां दो कवच-पाठ दिये गये हैं। इनमें से किसी एक का पाठ करें। इनकी भाषा सरल है अतः यहां इनका हिन्दी अर्थ भी नहीं दिया गया है।

विश्वनाथः सदा पातु सर्वाङ्गे मम सर्वदा।
अन्नपूर्णा सदा पातु अंसं रक्षतु चण्डिका।।६।।
असिताङ्गः शिरः पातु ललाटं पातु भैरवः।
चण्डभैरवः पातु वक्त्रे कण्ठे श्रीक्रोधभैरवः।।७।।
मूलाधारं भीषणश्च बाहुयुग्मं च भैरवः।
हंसबीजं पातु हृदि सोऽहं रक्षतु प्राणयोः।।८।।
प्राणापानसमानं च उदानं व्यानमेव च।
रक्षन्तु द्वारमूले तु दशदिक्षु समन्ततः।।९।।
प्रणवः पातु सर्वाङ्गं लज्जाबीजं महाभये।
इति श्रीब्रह्मकवचं भैरवस्य प्रकीर्तितम्।।१०।।

अपराध क्षमापन स्तोत्रम्

गुरोः सेवां त्यक्त्वा गुरुवचनशक्तोऽपि न भवे,
भवत्पूजा—ध्यानाज्जप-हवन-यागाद्विरहितः।
त्वदर्च्चानिर्माणे क्वचिदपि न यत्नं च कृतवान्,
जगज्जालग्रस्तो झटिति कुरु हार्द मयि विभो।।१।।

प्रभो दुर्गासूनो तव शरणतां सोऽधिगतवान्-
कृपालो दुःखार्तः कमपि भवदन्यं प्रकथये।
सुहृत्सम्पत्तेऽहं सरलविरलः साधकजन-
स्त्वदन्यः कस्त्राता भवदहनदाहं शमयति।।२।।

वदान्यो मान्यस्त्व विविधजनपालो भवति च,
दयालुर्दीनार्तान् भवजलधिपारं गमयसि।
अतस्त्वत्तो याचे नतिनियमतोऽकिञ्चनधनः
सदा भूयाद् भावः पदनलिनयोस्ते तिमिरहा।।३।।

अजापूर्वो विप्रो मिलपदपरो योऽतिपतितो,
महामूर्खो दुष्टो वृजिननिरतः पामरनृपः।
असत्यानासक्तो यवनयुवतीव्रातरमणः,
प्रभावात्त्वन्नाम्नः परमपदवो सोप्यधियतः।।४।।

दयां दीर्घा दीने बटुक कुरु विश्वम्भरः मयि,
न चान्यस्सन्त्राता परमशिव मां पालय विभो।
महाश्चर्यं प्राप्तस्तव सरलदृष्ट्वा विरहितः,
कृपापूर्णैर्नेत्रैः कमलदलतुल्यैरवतु माम्।।५।।

सहस्ये किं हंसो नहि तपति दीनं जलमय,
घनान्ते किं चन्द्रोऽसमकरनिपातो भुवितले।
कृपादृष्टेस्तेऽहं भयहर विभो कि विरहितो,
जले वा हर्म्ये वा धनरससुपातो न विषमः।।६।।

त्रिमूर्त्तिस्त्वं गीतो हरिहर विधातात्मक-गुणो,
निराकारः शुद्धः परतरपरः सोऽप्यविषयः।
दयारूपं शान्तं मुनिगणनुतं भक्तदयितं,
कदा पश्यामि त्वां कुटिलकचशोभित्रिनयनयम्।।७।।

तपो योगं साङ्ख्यं यमनियमचेतः प्रयजनं,
न कौलार्च्चा-चक्रं हरिहरविधीनां प्रियतमम्।
न जाने ते भक्तिं परममुनिमार्गं मधुविधिं,
तथाप्येषा वाणी परिरटति नित्यं तव यशः।।८।।

न मे काङ्क्षा धर्मे न वसुनिचये राज्यनिवहे,
न मे स्त्रीणां भोगे सखिसुतकुटुम्बेषु न च मे।
यदा यद्यद्भाव्यं भवतु भगवन् पूर्वसुकृतान्,
ममैतत्त प्रार्थ्यं तव विमलभक्तिः प्रभवतात्।।९।।

कियांस्तेऽस्मद्भारः पतितपतितांस्तारयसि भौ,
मदन्यः कः पापी यजनविमुखः पाठरहितः।
दृढो मे विश्वासस्तव नियतिरुद्धारविषया,
सदा स्याद्विश्रम्भः क्वचिदपि मृषा मा च भवतात्।।१०।।

भवद्भावाभिन्नो व्यसन-निरतः को मदपरो,
मदान्धः पापात्मा बटुकशिव ते नामरहितः।
उदारात्मन् बन्धो नहि तवक-तुल्यः कलुषहा,
पुनः सञ्जिचन्त्यैवं कुरु हृदि यथा चेच्छसि तथा।।११।।

जपान्ते स्नानान्ते ह्युषसि च निशीथे पठति यो,
महत्सौख्यं देवो वितरति तु तस्मै प्रमुदितः।
अहोरात्रं पार्श्वे परिवसति भक्तानुगमनो,
वयोऽन्ते संहृष्टः परिनयति भक्तान् स्वभुवनम्।।१२।।

अध्याय-१८

इसे भी पढ़ें !

श्री भैरव-साधना एक उत्तम साधना है। आप स्वयं देखें, हर देवी के साथ भैरव अवश्य है। सत्य तो यह देवी साधना बिना भैरव के असंभव है। क्या आपने वह चित्र नहीं देखा, जिसमें शेर पर सवार देवी के पीछे भैरव चला आ रहा है।

तांत्रिक वर्ग प्रारम्भ से ही खोजी प्रकृति का रहा है। उसने नई-नई साधनाओं की खेज की और उन्हें जनसाधारण के समक्ष रखा।

तांत्रिक वर्ग ने भैरव के रूप में स्वयं को और भैरवी के रूप में साधिका को देखा और कहा, 'अहं भैरव, त्वं भैरवी'। तांत्रिकों ने भैरव-भैरवी के रूप में काम को देखा और उसमें से सिद्धि का साधना का मार्ग खोजा।

उपर्युक्त सिद्धान्त के अनुसार तन्त्र-साधना में काम को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। वे कहते हैं कि योगीगण शरीर और मस्तिष्क को कष्ट देकर योग-साधना के द्वारा जिस परमानन्द की अवस्था में पहुंचकर परमात्मा से अपनी आत्मचेतना को जोड़ना चाहते हैं, वह तो सामान्य मनुष्य कामोद्वेग एवं सम्भोग की अवस्थाओं में स्वमेव प्राप्त कर लेता है। भले ही वह कुछ ही क्षणों, का हो। तांत्रिक अपनी साधना के एक मार्ग में अभ्यास करते हैं कि इस आत्म-विस्मति से भरी परमानन्द की अवस्था को कैसे, कब और कहां प्राप्त किया जाये? दो भिन्न रूप आत्मशक्ति जो अधूरी होती है एकाकार होकर परमात्मा के चैतन्य रूप तत्व जैसी हो जाती है। इस अवस्था को प्राप्त करने के पश्चात् साधक की आत्मिक शक्ति इतनी विकसित हो जाती है कि उसके लिये असंभव कुछ नहीं रह जाता, क्योंकि इस अवस्था में वह ब्रह्माण्ड की मूल तत्व की चेतन इकाई का अभिन्न अंग बन जाता है। तांत्रिक साधनाओं में काम साधना सबसे सरल साधना समझी जाती है। यह शीघ्र फलदायी भी होती है किन्तु इसके लिये साधक (भैरव)-(भैरवी) साधिका को दृढ़ संकल्प का होना आवश्यक होता है अन्यथा उसके कामाग्नि में नष्ट हो जाने का भय बराबर बना रहता है।

काम साधना में साधक-साधिका स्नान करके पवित्र होकर अनुष्ठान के लिये एकांत में बैठते हैं वहां धरा पर तांत्रिक यंत्र बनाया जाता है फिर साधक-साधिका

की पूजा करके अभिमंत्रित सिंदूर कुछ विशेष द्रव्य में घोलकर नाभि तक और नाभि से दोनों जंघाओं की अग्रसंधि तक और नाभि से योनि तक, जंघाओं की अग्र संधि से दोनों ओर से त्रिकोण की तरह योनि तक एक तन्त्रमय शक्ति-पथ बनाता है। साधिका की जांघों की संधि से पैर के अंगूठों तक यह पथ चला जाता है इसके बाद सुखासन की मुद्रा में एक-दूसरे के नेत्रों में प्रेमपूर्वक देखते हुये मन्त्रोच्चार के साथ तारतम्य बनाया जाता है। फिर एक विशेष आसन में वह दोनों एक-दूसरे में समा जाती हैं। और फिर प्रारम्भ होता है शक्ति का संचार। इस संचार के साथ शरीर के भीतर रासायनिक क्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इस अवस्था में साधक-साधिका को संकल्प का सहारा लेकर शारीरिक प्रक्रिया को स्नायु द्वारा नियंत्रित करना होता है। प्रारम्भ में यह कार्य जटिल लगता है। फिर धीरे-धीरे समाधि अवस्था प्राप्त होती है। इस बीच शक्ति की तरंगों को आत्म केन्द्र तक पहुंचाकर आत्मशक्ति विकिसित की जाती है। एक समय ऐसा आता है कि साधक-साधिका अलौकिक शक्ति सम्पन्न होने लगते हैं और यह शक्ति लगातार बढ़ती ही चली जाती है। किन्तु इस तन्त्र साधना का मूल उद्देश्य शक्ति में बंधना नहीं वरन् मुक्त होना है। अर्थात् अपनी आत्मतत्व को परम तत्व की अवस्था तक पहुंचाकर जड़ीभूत अवस्था से मुक्त करना। इस साधना को आवश्यक नहीं कि सभी तांत्रिक करें। यह तांत्रिक परम्परा का एक साधना-मार्ग है। इसको केवल उच्च स्थिति को प्राप्त तांत्रिक ही कर सकता है।

उपर्युक्त मान्यता एकदम सत्य है। अपने प्रारम्भिक तांत्रिक जीवन में स्वयं इन बातों का उपहास उड़ाया करता था, परन्तु आज जबकि मैं स्वयं तांत्रिक बनकर अनेक प्रयोगों को परख चुका हूं। इस साधना को एकदम सटीक और ऊर्जामयी मानता हूं। इसमें आवश्यकता शालीनता और ईमानदारी की है।

साधना के समय गुरु-ध्यान करने के पश्चात् साधक अपने इष्ट देवता का ध्यान कर इष्ट देवता से सफलता के लिये प्रार्थना करे।

कुल्लका ज्ञान—मन्त्र में प्रवृत्त होने वाले साधक को मन्त्र देवता की कुल्लिका का ज्ञान होना चाहिये। मन्त्र साधना में प्रवृत्त होने के पूर्व साधक को मन्त्र देवता की कुल्लिका का मूर्धान्यास कर लेना चाहिये। कुछ देवताओं की कुल्लिका इस प्रकार हैं—**श्री विष्णु**—ॐ नमो नारायण, **लक्ष्मी जी**—ॐ, **श्री सरस्वती जी**—ॐ ऐं, **शिवजी**—ॐ, **श्री हनुमान जी**—ॐ फ्रां। कुछ देवताओं की कुल्लिका उनके स्वयं के मन्त्र ही हैं।

मुख-शुद्धि—साधना क्रम में मुख-शुद्धि का अनिवार्य विधान है। अशुद्ध मुख से मन्त्र असफल हो सकता है।

अब कुछ देवताओं तथा देवियों के मुख शोधन प्रस्तुत हैं—

श्री दुर्गा जी—ऐ ऐ ऐ, लक्ष्मी जी—श्री, गणेश जी—ॐ मं, श्री विष्णु जी—ॐ हूं, बगुलामुखी····ऐ ही ऐ।

मन्त्र सेतु मन्त्र सेतु का कवच भी कहा जाता है। मूल मन्त्र का जप प्रारम्भ करने से पूर्व साधक को अपने हृदय में मन्त्र सेतु का जप करना चाहिये। मन्त्रों का कवच प्रणव ही है। ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों के लिये प्रणव मन्त्र सेतु है, वैश्यों के लिये····फट् तथा शूद्रों के लिये हि मन्त्र सेतु है।

सरस्वती यन्त्र
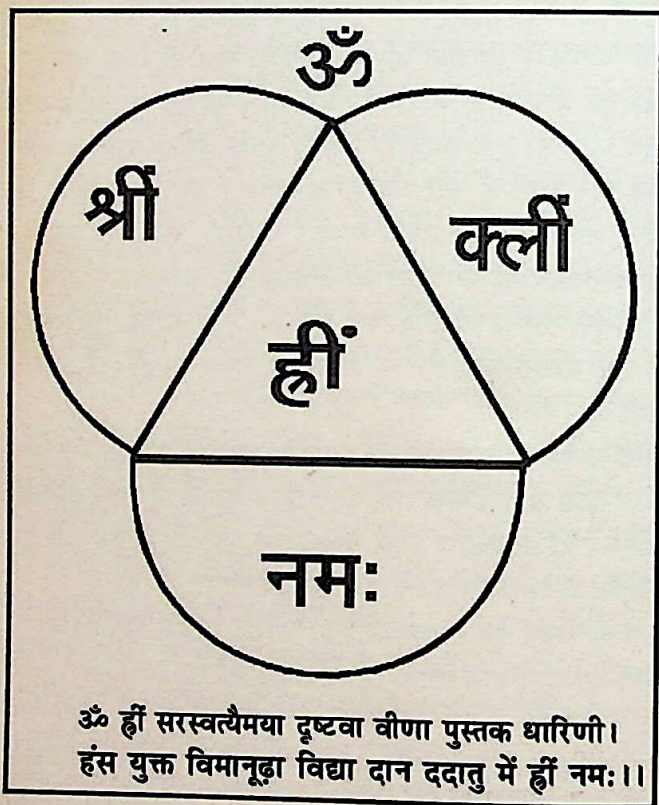
महा सेतु मूल मन्त्र जिसे सिद्ध करना है उसका साधना के प्रबल होने के पूर्व साधक को जप कर लेना चाहिये। यह जप साधक को अपने कंठ में करना चाहिये। कुछ महासेतु जप इस प्रकार है—लक्ष्मी जी "श्री—काली का महासेतु की सरस्वती का····ऐं तारा का हूं षोडसी····भुवनेश्वरी····ह्रीं शंकर का स्त्री विष्णु

स्त्री सभी देवताओं का महासेतु स्त्री है, अन्य देवियों का महासेतु साधक को ज्ञात कर लेना चाहिये।

मन्त्राक्षर सिद्धि मन्त्राक्षर का प्रत्येक अक्षर सिद्ध किया जाता है, इसकी विधि यह है कि प्रथम स्वर एवं व्यंजन का अ से लेकर "अ" से लेकर "ह" तक उच्चारण किया जाये फिर "ह" से लेकर "अ" तक उच्चारण किया जाये।

इस प्रकार यह क्रिया तीन बार पूरी की जाये। तब तन्त्र का प्रत्येक अक्षर सिद्ध हो जाता है।

मन्त्र दृष्टि मन्त्र साधक के लिये मन्त्र दृष्टि भी आवश्यक है। इसके लिये मन्त्र को "य" से सम्पुटित कर सात बार जपना चाहिये।

ये बीज मन्त्र प्रत्येक मन्त्राक्षर से ग्रन्थित कर जपना चाहिये।

करन्यास—सभी मन्त्रों की करन्यास विधि अलग-अलग है। इसका ज्ञान गुरु से प्राप्त किया जा सकता है।

जिस प्रकार प्रत्येक मन्त्र की करन्यास विधि अलग-अलग है उसी प्रकार हृदय न्यास विधि भी अनेक हैं, इसका ज्ञान भी गुरु से प्राप्त किया जा सकता है।
प्राणायमः मन्त्र साधना से साध्य मन्त्र का रेचक कुम्भक कर लेना चाहिये। इसमें मूल मन्त्र का चार बार रेचक तथा दो बार कुम्भक कर लेना चाहिये।

प्राण योग—प्राण योग किये बिना मन्त्र सिद्ध नहीं होता है। इसमें मन्त्र के प्रारम्भ तथा अन्त में "ह्रीं" से सम्पुटित कर सात बार मन्त्र जप कर लेना चाहिये।

मन्त्र दोष मोक्षण—मन्त्रों में पांच प्रकार का दोष होता है। इस दोष की निवृत्ति कर लेनी चाहिये। यह दोष के रूप में होता है यथा जन्यं सूतक, मृत्युसूतक, प्राप्त सूतक, साधय सूतक, नारी पत्नी सूतक, विचार सूतक, चिंतन सूतक, गृहस्थ सूतक, संन्यास सूतक।

इस सूतक द्रयं दोष की निवृत्ति के लिये अकारादि स्वर एवं व्यंजन से पहले ॐ का सम्पुट लगाने के बाद मन्त्र जप करना चाहिये।

बंधन मन्त्र साधना में किसी प्रकार की आसुरी शक्तियों का हस्तक्षेप न हो या व्यवधान उपस्थित न हो इसके लिये मन्त्र बंधन का विधान है। मन्त्र के चतुर्दिक बंधन देकर उसे विघ्न-बाधाओं से मुक्त कर दिया जाता है। इससे साधक सुरक्षित रहता है।

श्री दुर्गा मन्त्र बन्ध—क्री ॐ क्रीं। बगुलामुखी—ऐं ह्रीं ऐं। श्री लक्ष्मी जी मन्त्र बन्ध—ॐ श्री श्री श्री ॐ। धनदा भगवती—ॐ श्री घ्रं थीं ॐ। श्री विष्णु—ॐ श्री। श्री गणपति—ॐ गं गं गं ॐ। श्री शंकर जी—ॐ शं शं शं ॐ।

कुछ देवियों तथा देवताओं का मन्त्र बंधन उनके बीज मन्त्र से किया जाता है जो पहले ही दिया जा चुका है।

मन्त्र का पुरश्चरण—मन्त्र का पुरश्चरण भी किया जाता है। साधनाओं की सफलता के लिये तथा अभीष्ट फलदायी बनाने के लिये शास्त्रों में पुरश्चरण का विधान उल्लिखित है। वास्तव में पुरश्चरण को मन्त्र साधना का सफलतादायी स्तम्भ माना जाता है। पुरश्चरण सिद्धि का द्वार खोल देता है। पुरश्चरण के विधान का सर्वोत्तम फल पर्वत शिखर पर ही प्राप्त होता है। वही फल देवालय, नदी तट, वन-उपवन आम्र कुंज, कदली वन, तुलसी वृक्ष अथवा गुरु आश्रम इत्यादि में भी प्राप्त किया जाता है। किसी भी मन्त्र का पुरश्चरण करने में साधक का ध्यान मन्त्रमय होना चाहिये। इस स्थिति को प्राप्त करने के लिये साधक को मनसा, वाचा, कर्मणा, पूर्ण सतोगुणी स्थिति प्राप्त करना परम आवश्यक है।

साधना के लिये एकांत कक्ष की व्यवस्था करने के पीछे केवल यह उद्देश्य है कि यह स्थान अवांछित क्रिया-कलापों से मुक्त रहे। कुंठा-रहित, आवेश-रहित जीवन, सात्त्विकसीमेत चिंतन, हमें अपने दुराग्रहों से मुक्ति दिलाते हैं। अपनी इन्हीं दुरूहताओं के कारण मन्त्र साधना सभी साधकों को आकर्षित नहीं करती है।

आकर्षित होकर भी अनेकों साधक साधना की कठिन अंतर्यात्रा से भयभीत होकर इसमें प्रवृत्त नहीं होते हैं। जब सम्पूर्ण निर्देशों का पालन करके भी तन्त्रसिद्धि प्राप्त होती है तो बड़ा दुःख होता है, तो मनःस्ताप उत्पन्न होता है एक अवर्णनीय खिन्नता तथा मन्त्र के प्रति ही सन्देह-सा उत्पन्न होने लगता है। यह अवस्था क्षणिक होती है और साधक अपने समस्त साधना कृत्यों पर पुनर्विचार करने लगता है। इस क्रम में चिंतन, मनन करते हुये उसके द्वारा की गई त्रुटि भी उसके ध्यान में आ जाती है। साधक विचारने लगता है, अरे यह तो बहुत छोटी-सी भूल थी जहां इतनी कठिन स्थिति का पालन किया था वहीं इस छोटी-सी भूल से भी बचा जा सकता है।

इस प्रकार पूरी तरह स्पष्ट है कि मन्त्र साधना के लिये शास्त्रों में जो विधान बनाया गया है साधक उसे पूर्ण रुचि और उत्साह के साथ अपनाये ताकि साधना के कठिन श्रम और मनोयोग को त्रुटि का एक छोटा-सा बिन्दु खण्डित न कर सके। मन्त्र के पुरश्चरण काल में साधक को अक्षत (चावल) तिल, जौ, मूंग, गोदुग्ध, धूत दहि शंकरी इत्यादि का प्रयोग करना चाहिये।

मन्त्र पुरश्चरण काल—मांस, मदिरा, लवण, प्याज, लहसुन, तेज मिर्च, मसाले, दूषित भोजन वाली अपवित्र, अखाद्य, अरुचिकर भोजन, गाजर, कांसे, लोहे के बर्तन, मसूर, अरहर तथा चना इत्यादि त्याज्य तथा निषिद्ध हैं।

विषय वासना की प्रत्यक्ष प्रवृत्ति तो दूर की बात है, इसके स्मरण और कामना तथा ध्यान से भी मुक्त रहना चाहिये। साधक को विश्राम के समय में कुश अथवा कम्बल को बिस्तर रूप में प्रयोग करना चाहिये।

नींद आने से पूर्व तथा निद्रा त्याग के पश्चात् भी अपने इष्ट को स्मरण करके शैया-त्याग करना चाहिये।

स्नान—साधक को मन्त्र साधना अवधि में दोनों ही समय स्नान करना आवश्यक है। स्नान के पश्चात् शुद्ध हुये वस्त्र धारण करने चाहियें।

ब्रह्मचर्य—ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिये। इस प्रकार के समस्त वार्तालापों, चिंतन, मनन तथा अवलोकन से मुक्त रहना चाहिये, जिससे ब्रह्मचर्य व्रत खण्डित होता हो या वासना उत्पन्न होती हो।

नित्य पूजा—साधना काल में साधक को विधि-विधान सहित इष्ट देवता की भक्ति और पूजा तथा शयन करना चाहिये।

इसके द्वारा तुरन्त मन्त्रसिद्धि प्राप्त होती है।

गुरु-सेवा—साधना काल में यदि साधक को गुरु का सानिंध्य प्राप्त है तो उसे यथाशक्ति गुरु की सेवा कर उसे प्रसन्न करना चाहिये। गुरु-कृपा अमोघ शक्ति बनकर साधक की मन्त्र साधना को सफल करेगी।

त्याज्य स्थितियां—साधना काल साधक की एक प्रकार की परीक्षा की अवधि है। अतएव इसे तत्काल ही समझना चाहिये।

इस अवधि में उसे निंदा, क्रोध, अशौच अनर्गल वार्तालाप, नियमभंग, ब्रह्मचर्य, क्षय दिवस, शयन इत्यादि कर्मों से यथासम्भव बचना चाहिये। साधना में लीन रहना चाहिये।

मन्त्रोत्कीलन—मन्त्रों के जन्मदाता शंकर ने मन्त्रों की शक्ति के दुरुपयोग को रोकने के लिये उन्हें कीलित कर दिया था।

शापित मन्त्र अपनी शक्ति को प्रकट करने में असमर्थ होता है, क्योंकि वह बद्ध अवस्था में प्रभाव-रहित होता है। यदि किसी मन्त्र का मन्त्रोत्कीलन किये बिना ही कोई साधक वाँछित मन्त्र की साधना करता है तो उसका प्रयास निश्चय ही निःश्फल होता है। मन्त्र साधना मन्त्रोत्कीलन के बिना व्यर्थ ही है। समस्त मन्त्रों की मन्त्रोत्कीलन विधियां अलग-अलग हैं, किन्तु मन्त्रोत्कीलन की कुछ विधियां जो सब प्रकार के मन्त्रोत्कीलन में प्रयोग की जा सकती हैं। साधक को अपने गुरु से मन्त्रोत्कीलन की विधि का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये।

मन्त्रोत्कीलन हेतु—हाथ में जल लेकर कुशा की अंगूठी धारण कर अपने चारों ओर दस बार दसों दिशाओं में जल छिड़कते हुये इस संकल्प का उच्चारण

करें—'अहम् भूत शुद्धि संकल्पम् करिष्यामि' इस संकल्प वाक्य के पहले संकल्प दिवस की तिथि, वार, नक्षत्र, साधक का राशि नाम एवं गौत्र भी जोड़ दिया जाये और इस प्रकार संकल्प वाक्य का उच्चारण किया जाये—'अमुक दिवसे (जो दिन हो), अमुक तिथि (जो तिथि हो), अमुक नक्षत्रों (उस दिन जो नक्षत्र हो) अमुक गोत्रोत्पन्न (साधक का जो गोत्र हो उसका उच्चारण कर वह अपना संकल्प दोहराये)'। इसके बाद कहे—'अहम् मन्त्र सिद्धि प्रयोजने भूत सूतक निवृत्ति संकल्पम् करिष्यामि। भूत सूतक निवृत्ति कुरु-कुरु स्वाहा।।' इसके पश्चात् साधक कुण्डलिनी का ध्यान करे।

कुण्डलिनी में यह अनुभूति उत्पन्न करे कि वह जाग्रत होकर ऊर्ध्वगामी हो रही है। इसके बाद साधक इस मन्त्र का एक सहस्त्र जप करे—"ॐ शरीर स्थिते मलिन भूतो साधना विघ्न स्वरूपम् दह दह स्वाहा"। इस प्रकार इस मन्त्र जप का दशांश हवन तर्पण इत्यादि का विधान पूरा कर भूत-शुद्धि की जाये।

मृत सूतक निवारण—भूत-शुद्धि करने के पश्चात् मृत सूतक निवारण किया जाये। इसके लिये भूत लिपि का इष्ट मन्त्र सहित एक सहस्त्र जप करते हुये इक्कीस दिनों तक जप किया जाये।

जप का दशांश, हवन, तर्पण इत्यादि कर्म भी किये जायें। भूतलिपि विधान में वर्णमाला के अक्षरों को जहां वह समाप्त होती है, वहां से उल्टा पढ़ा जाता है। पाठ का एक चरण अर्थात् एक क्रम पूरा करने के पश्चात् साधक अपने इष्ट मन्त्र का उच्चारण सहित जप करता है। इसके पश्चात् पुनः पूर्व की तरह भूतलिपि का पांठ किया जाता है।

समस्त देवियों को चन्दन तथा कुमकुम उनके चरणों में अर्पित किया जाता है, पर महिला साधक देवी के मस्तक पर तिलक लगा सकती है। शिव-पूजा में चन्दन तथा कुमकुम दोनों का प्रयोग किया जा सकता है। शंकर उपासना में कुमकुम वर्जित है। तांत्रिक कार्यों में कामिया सिंदूर, केसर तथा रक्त प्रयोग किये जाते हैं। ध्यान देने की बात है कि पूजा उपासना में साधक देवता को तिलक लगाने के पश्चात् ही स्वयं इनका प्रयोग करें।

तिलक करने के साथ-साथ साधक को इस मन्त्र का उच्चारण भी करना चाहिये—

केशवानन्द गोविन्द वाराह पुरुषोत्तम।
पुण्यम् यशस्ममाष्यं तिलकं में प्रसीदतु।।

इस मन्त्र को चन्दन लगाते समय उच्चारण करना चाहिये—

कौती लक्ष्मी घृति सौख्यं सौभाग्यमतुलं ममः।
ददातु चन्दनं नित्यं सततं धारमाभ्यहम।।

संध्या विधान—समस्त वर्णों के साधकों को गुरु की आज्ञा और उचित मार्ग- निर्देशन प्राप्त कर तीनों समय संध्या वंदन करना चाहिये। प्रातः, दोपहर तथा सायंकाल। संध्योपासना द्वारा साधक ईश्वर की शक्ति, कृपा तथा स्वरूप को प्राप्त करता है। वेदों ने निर्देश दिया है कि यदि त्रिकाल संध्या सम्भव हो तो कम से कम प्रातः संध्योपासना अवश्य करनी चाहिये। तान्त्रिक क्रियाओं में साधक को निर्धारित समय में ही संध्योपासना करनी चाहिये जिससे प्रभु कृपा में उसकी साधना सिद्ध हो। संध्योपासना में भी साधक द्वारा पालनीय स्थिति में प्रयोग करने हैं। स्थान-शुद्धि, आसन-शुद्धि जप, आचमन, प्राणायाम, अर्घ्यदान, आल्पपरिमार्जन, ईश वंदना तथा सूर्योपासना।

तान्त्रिक साधना में निर्देशानुसार इष्ट गायत्री अर्थात् जो साधना इष्ट हो उस देवता अथवा देवी की गायत्री का जप किया जाता है। संध्योपासना में साधकों को इष्टवत् अनुभव करना चाहिये।

अन्य विशेष नियम

साधक जिसकी पूजा करे उसके पूजा-विधान को भली-भाँति पहले समझ लें। देवता के पूजन-विधि की जानकारी होनी आवश्यक है। पूजन-स्थल शांत, एकांत और पवित्र होना चाहिये। वहां कोलाहल, अशांत और किसी प्रकार की अशुद्धता नहीं होनी चाहिये। साधक को अपने इष्ट अथवा पूजित देवता के प्रति पूर्ण समर्पित भक्तिभाव होना अनिवार्य है।

पूजा-विधान कोई साधारण कार्य नहीं है जिसे जैसे निपटा देने से ही सिद्धि की प्राप्ति हो जाये, इनमें साधक की एकाग्रता, पवित्रता और भक्ति सहित समर्पण भाव सर्वोपरितत्व है। अतएव इन पर विशेष ध्यान देना चाहिये। उधर नहीं जाना चाहिये उसे अन्य बातें भी नहीं सोचनी चाहियें।

पूजा के आसन पर अंगड़ाई लेना, उंगलियां चटकाना, किसी पर बेकार क्रोध करना तथा अनर्गल वार्तालाप करना वर्जित है।

पूजा के प्रमुख तत्व—पूजा के कुछ प्रमुख तत्व ऐसे हैं जो मन्त्र साधना और पूजा-विधान दोनों में ही अनिवार्य रूप से अपनाये जाते हैं। इनका विवरण इस प्रकार है—आत्मशुद्धि साधक अपने मन से समस्त वासनाओं को दूर करे। कुतर्क और अहंकार का त्याग करे, शांतचित्त हो एकांत में ईश्वर का ध्यान करते हुये अपने मन में 'मैं ब्रह्म हूं' इस भावना को प्राप्त करे।

पिक्शुद्धि—हाथ में सरसों लेकर पिक्शुद्धि करें। गंगाजल छिड़ककर पिक्पात्र का आह्वान कर इस क्रिया को करें।

भूमि-शोधन—पंचगव्य गोमूत्र, गोदधि, गोदुग्ध तथा गोबर इत्यादि से लीपकर भूमि शोधन करें। स्थान की शुद्धता के पश्चात् ही पूजा में प्रवृत्त हों।

उपादान—भूमिशोधन के पश्चात् पूजा में प्रयोग की जाने वाली समस्त पूजन सामग्री का शुद्ध रूप से संग्रह कर एक स्थान पर एकत्रित करने की क्रिया उपादान कहलाती है।

इस प्रकार के संग्रह में धूप, दीप, गंध, पुष्प, नैवेध इत्यादि प्रमुख हैं।

स्वर-ज्ञान—किसी विशिष्ट पूजा-विधान मन्त्रानुष्ठान में प्रवृत्त होने के पूर्व स्वर-ज्ञान का होना आवश्यक है। दोनों ही नासिका रंध्रों से सभी समय एक स्थिति में श्वास प्रवाह एक-सा नहीं रहता है। श्वास ग्रहण और निष्कासन में जब दाहिना नासिका रंध्र प्रबल होता है तो इसे सूर्य स्वर कहते हैं। इसी प्रकार जब बायें रंध्र का प्रवाह तीव्र होता है तो इसे चन्द्र स्वर कहते हैं। साधक को सूर्य स्वर की प्रबलता के समय ही पूजा और मन्त्रानुष्ठान में प्रवृत्त होना चाहिये।

माला विधान—पूजा-विधान माला का महत्व है। इसके अभाव में मन्त्रानुष्ठान पूरे ही नहीं हो सकते हैं। साधक पूजा करने के क्रम में अपने इष्ट देव की प्रतिमा या चित्र प्रिय पुष्पों की माला बनाकर अर्पित करता है, इसे समर्पण कहा जाता है। माला सदैव गुरु से ही प्राप्त करें।

इष्ट नाम जप का प्रयोग पूजा-विधानों तथा मन्त्र-जप—इन दोनों में ही प्रयोग किया जाता है। इसके लिये तीन प्रकार की मालायें प्रयोग की जाती हैं—

करमाला—इसमें उंगलियों पर जप किया जाता है। इसे करमाला कहा जाता है।

मणिमाला—रुद्राक्ष शंख इत्यादि की ऐसी मालायें जो स्थूल रूप में एक ही संख्या में ठोस आकारयुक्त हों, वे समस्त हीरे, चांदी, मोती, मूंगे की मालायें मणिमालायें कहलाती हैं।

वर्णमाला—जब मन्त्रानुष्ठान में अक्षरों को जप-संख्या के रूप में प्रयोग किया जाता है तो इसे वर्णमाला कहा जाता है।

मन्त्रों का सस्वर जप भी अपना अलग महत्व रखता है। कुछ मन्त्रों में तो मन्त्र का सस्वर जप एक आवश्यकता बन जाता है। (श्वास) के सम्पुटयुक्त समस्त मन्त्रों का उच्चारण सहित जप करना परम आवश्यक है।

हवन करते समय हवनकुण्ड में आहुति देते समय मन्त्र का सस्वर जप आवश्यक है। ऐसे मन्त्र जिनका जप किसी व्यक्ति विशेष की कल्याण कामना अथवा अनिष्ट कामना के निमित्त किया जा रहा है उनका जप सस्वर किया जाना

चाहिये। महामृत्युंजय जप तथा शतचंडी जप एवं गायत्री मन्त्र-जप यदि किसी अन्य व्यक्ति के अनिवार्य मृत्यु-विधान निवारणार्थ किये जा रहे हैं तो इनका सस्वर और मानसिक जप दोनों ही करना चाहिये।

किसी भी प्रकार के संकटमोचन अथवा अभीष्ट लक्ष्य-प्राप्ति के लिये किया जाने वाला जप उस समय मन्त्र के सस्वर जप-विधान से जुड़ जाता है जब उस मन्त्र का हवन आहुति से अनिवार्य जुड़ा हो। जन्मकुण्डली में यदि मारकेस का योग हो तो भी मन्त्र का सस्वर जप और हवन आवश्यक हो जाता है। मन्त्र शास्त्र के समस्त ग्रंथों की अवस्थाओं को माना है चित्तयुक्त मन्त्र और व नियुक्त मन्त्र।

एक प्रकार से चित्तयुक्त मन्त्र का वर्ग अलग है और ध्वनियुक्त मन्त्रों का वर्ग भी अलग है। लेकिन स्थिति भेद के अनुसार कभी-कभी चित्तयुक्त मन्त्र के भी ध्वनियुक्त जप आवश्यक हो जाता है, लेकिन सामान्य तथा दोनों वर्गों के मन्त्र अलग-अलग ही हैं।

जहां मन्त्र के मानसिक जप के साथ दशांश हवन का विधान है वहां चित्त-युक्त मन्त्र जिसका कि मौन उच्चारण-रहित जप होता है उसे भी हवन करते समय सस्वर उच्चारण सहित जपना चाहिये। विज्ञान ने प्रयोगात्मक परीक्षण तथा सैद्धान्तिक समीक्षा के द्वारा इस तथ्य कों स्वीकार किया है कि मनुष्य के अथवा अन्य जीवधारियों के तीव्र उच्चारण से उत्पन्न शब्द नाद समस्त विश्व के वायुमण्डल में ध्वनि तरंगों के माध्यम से व्याप्त हो जाता है।

यह रेडियोधर्मी सक्रियता शब्द से सदा-सदा के लिये अमर बना देती है। इस स्थिति का रूप रेडियो स्टेशन द्वारा प्रसारित प्रक्रिया जैसा ही है। आज विज्ञान इसी सिद्धान्त के सहारे अति-प्राचीनकाल के मनुष्यों की बोलियों तथा कथन को पुनः यथावत् रूप में प्राप्त करने में लगा है। आज से हजारों साल पहले कही गयी बातों को जानने का प्रयास इसी विधि से किया जा रहा है। इस क्षेत्र में अभी विज्ञान को जो सफलता प्राप्त है यदि यह अपने पूर्ण रूप में आये तो ज्ञान हो।

वशीकरण मन्त्र—ऐं ओं आं हं हां ग्लो हूं क्षे सर्वजन वशीकरण त्रि जगनमोहिनी त्रेलोक्य में वशमानय एहि एहि ब्रह्माणि वर्णमये संकल शब्द मर्य सर्व में वशमानय स्वाहा।

पति वशीकरण मन्त्र—ॐ महा यक्षिगये मम पति में वशं कुरु-कुरु स्वाहा। (एक लाख बार जप करें)।

यन्त्र

५१	७६	६८	७
६	५	४३	५३
५०	१	५८	३
३६	३८	५२	५६

ॐ नमो महापंखेश अमुकस्य मम वशं
कुरु-कुरु स्वाहा।।

महा वशीकरण मन्त्र—ॐ नमो मोहिन्याम वशीकरण हूं में फट्-फट् कर स्वाहा। (दस हजार बार जप करें) इस मन्त्र से अभिमन्त्रित यन्त्र भी पहिनें।

स्त्री वशीकरण मन्त्र—ॐ नमो कामाक्षी देव्ये 'अमुक' में वशं कुरु-कुरु स्वाहा। (जप 99 हजार बार करें)।

आकर्षण मन्त्र—ॐ नमो आदि पुरुषाय अमुक आकर्षण कुरु-कुरु स्वाहा।

ॐ नमो कामाख्या देवी अमुकी में वशं गरी स्वाहा। (जप-संख्या 99 हजार)।

महाआकर्षण मन्त्र—ॐ नमः ही ठं ठंः स्वाहा।

ॐ नमो आदि पुरुषार्थ अमुकस्या कर्मष कुरु-कुरु स्वाहा।

ॐ नमो आदि देवाय अमुकस्याकर्षण कुरु-कुरु स्वाहा।

ॐ यें यें लं लं लं कं क्रीं क्रीं ठः ठः स्वाहा।

इन मन्त्रों की मंगलवार के दिन दस हजार की संख्या जपने पर ये मन्त्र सिद्ध होते हैं। किसी भी मंगलवार से मन्त्र का जाप आरम्भ करके दस मंगलवारों तक इनका नियमपूर्वक जप करना चाहिये। जप का दशांश हवन भी करना चाहिये। हवन तर्पण के बाद ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिये।

जल स्तंभन—ॐ नमो भगवते रुद्राय जल स्तम्भय-स्तम्भय।

सवा लाख जपने पर मन्त्र सिद्ध होता है। सिद्ध करने के बाद 108 बार

मन्त्र पढ़कर गोखरू का पानी में जल स्तम्भन होता है। मन्त्र का दशांश हवन तर्पण करना चाहिये। स्तम्भन की देवी लक्ष्मी है, इनकी चांदी की अथवा लाल मिट्टी की प्रतिमा निर्मित कर षोडशोपचार पूजन हवन, तर्पण तथा पुरुश्चरण पहले कर लेना चाहिये।

शास्त्र शत्रु—ॐ अहो कुंभ कमर्ण महाराक्ष ने कंपा गर्भ सम्भूत पर सैन्य शस्त्र स्तम्भय-स्तम्भय स्वाहा।

ॐ नमो भगवते राम पणं बुधि स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा।

यह मन्त्र सवा लाख जपने पर सिद्ध होता है। जपने के बाद अभीष्ट व्यक्ति के नाम के साथ 108 बार जोड़कर जपना चाहिये। मन्त्र के दशांश हवन तर्पण की विधि यथाक्रम है।

विद्वेषण कर्म—इस कर्म की देवी ज्येष्ठा हैं। मंगलवार के दिन श्मशान भूमि में किसी शव की भस्म को लाकर उसे करंज के तेल तथा जल में मिलाकर देवी की दो हाथों वाली प्रक्रिया बना ली जाती है।

नीम की जड़ पर स्थापित कर नीम और आक की पत्ती से देवी की पूजा की जाये।

इसके बाद मन्त्र-जप पूरा करके दशांश हवन भी करें। हवन में—हवन सामग्री करंज का तेल, नीम और आक के पत्ते, कौए और उल्लू के पंख, सेंधा नमक और राई, धतूरे तथा करंज के बीज एवं इन सबके साथ कोण इत्यादि के पत्ते मिलाकर हवन किया जाये। यह प्रयोग मंगल, शनि अथवा रविवार को करना चाहिये।

इसमें कर्त्ता का मुख दक्षिण दिशा की ओर होना चाहिये।

मन्त्र—ॐ नमो नारदाय अमुकस्य अमुकेन सह (इस जगह विद्वेषण कराये जाने वाले दोनों व्यक्तियों के नाम इस प्रकार जोड़कर मंत्र का जाप करना चाहिये अर्थात् दोनों का नाम साथ जोड़कर) **विद्वेषण कुरु-कुरु स्वाहा।** मन्त्र सिद्ध करने के पश्चात् इसे अभिमन्त्रित वस्तु पर 108 बार मन्त्र पढ़कर प्रयोग करना चाहिये।

उच्चाटन—इस कर्म की अधिष्ठात्री देवी दुर्गा हैं। साधक को श्मशान की राख और श्मशान में गिरे हुये अन्न के कुम्हार के बर्तन बनाते समय गिरी हुई मिट्टी में मिलाकर दुर्गाजी की चार भुजाओं वाली प्रतिमा बनानी चाहिये।

मूर्ति की धूप, नैवेद्य से पूजा करनी चाहिये। देवी को शिरीष के पुष्प अर्पित करने चाहियें। पूजन के बाद राई और सेंधा नमक से हवन करके देवी के सामने बैठकर मन्त्र का जप करना चाहिये।

"ॐ गिली स्वाहा" इस मन्त्र का एक सहस्त्र जप करना चाहिये। जप का दशांश हवन भी करना चाहिये। भरणी नक्षत्र में इस मन्त्र द्वारा सात बार अभिमन्त्रित

करके जिस व्यक्ति के घर के दरवाजे पर इसे गाड़ दिया जायेगा उसका तुरन्त अपने घर से उच्चाटन हो जायेगा और वह घर छोड़कर चला जायेगा। "**ॐ लोहिम मुखाय स्वाहा**" यह मन्त्र भी एक हजार जपने पर सिद्ध होता है। मन्त्र का दशांश हवन करना चाहिये। एक हजार की जप-संख्या में जपने पर सिद्ध होने वाले कुछ उच्चाटन मन्त्र इस प्रकार हैं—"**ॐ विश्वाय नाम गंधर्व लोचनी नाम्नी लोसित करने तस्त्रे स्वाहा। ॐ हूं हूं वा हं हं ठः ठः।**

ॐ धु वू ठः स्वाहा (जप तथा हवन)।

ॐ दह दह बन स्वाहा (जप तथा हवन)।

ॐ विरिहिन उठ। ॐ नमो भगवते रुद्राय अमुक (नाम) गृहणं-गृहणं पंच-पंच तासय नाश्य सुरति रीक्षयति ठः ठः। इन मन्त्रों को निर्धारित संख्या में जप करें, हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये।

मारण—स्वयं पर विपत्ति पड़ने पर, प्राणभय उत्पन्न होने पर तथा किसी आततायी से देश और समाज की रक्षा करने के लिये मारण प्रयोग करना चाहिये। इसकी विधि कठिन और भयानक है अतएव इसका प्रयोग और सिद्धि खूब सोच-समझकर ही करनी चाहिये। वैसे भी साधारण स्थिति में षट्कर्मों का प्रयोग निषिद्ध माना गया है।

मारण में भी मन्त्र का दशांश हवन करना चाहिये। हवन सामग्री एवं समस्त निर्देश पीछे स्पष्ट किये जा चुके हैं। मारण मन्त्र—**ॐ नमः काल संहाराय अमुक हम हत की हुं फट् भस्मी कुरु-कुरु स्वाहा।** अमुक शब्द के स्थान पर शत्रु के नाम का उच्चारण करना चाहिये। सिद्ध हो जाने पर शत्रु के पैर के नीचे की मिट्टी, शव की भस्मी तथा अपनी मध्यमा उंगली का रक्त मिलाकर एक पुतली बना ली जाये, फिर इस पुतली को चमकीले काले कपड़े में लपेटकर काले रंग के धागे से बांधकर कुश के आसन पर लिटा दिया जाये।

इसके पश्चात् सरसों के तेल का दीपक जलाकर मन्त्र का 21 बार जप किया जाये, फिर पुतली के मुख में डाल दिया जाये। इस प्रयोग को अर्द्धरात्रि में करना चाहिये तथा प्रातःकाल इस पुतली को श्मशान में ले जाकर गाड़ देना चाहिये। इस प्रयोग को करने से शत्रु की मृत्यु हो जाती है।

ॐ नमो नरसिंहाय कपिलजटाय अमोघ बीचा सतवृताय।
महाद्रोग्र चण्ड रूपाया ओस्म् ही हीं छां छां छीं छी फटै स्वाहा।

इस मन्त्र को 21 हजार बार जपकर सिद्ध कर लेना चाहिये।

मन्त्रों के उच्चारण से ध्वनि कम्पन्न उत्पन्न होता है जो पुनरावृत्ति एक निश्चित

ऊर्जा उत्पन्न करता है। इस विश्व की स्थिति ग्राहक के दो मूल तत्वों में विभाजित है। सम्पूर्ण विश्व इसी ग्राहक और ग्राह्य की स्थिति में विभाजित है, दोनों का संतुलित और संयोजित मिलन ही स्थिति की पूर्णता को जन्म देता है।

मन्त्र का ध्वनियुक्त उच्चारण करने पर वह रंगों के द्वारा उस शक्ति के पास जाकर उसकी शक्ति ग्रहण कर लौट आता है। प्रेषण में जहां आपकी शक्ति थी वहीं मन्त्र के पुर्नागमन में अभीष्ट देवता की शक्ति समाहित हो जाती है।

इसी सिद्धान्त के द्वारा साधक को शक्ति प्राप्त होती है। यह प्रक्रिया अनादिकाल से शाश्वत रूप में व्याप्त है।

वायु मन्त्र

ॐ मपनोवेगाय निराकाराय प्राण शक्ति स्वरूपाय वायुदेवाय नमः स्वाहा।

वायु देवता का यह सिद्ध मन्त्र है। सवा लाख की संख्या में जपने पर यह सिद्ध हो जाता है। किसी एकान्त स्थान में बैठकर इसका जप करना चाहिये। जप का दशांश हवन भी करना चाहिये। इस मन्त्र से श्वास तथा फेफड़े के रोग दूर होते हैं।

साधक को वायु देवता की कृपा से सौभाग्य तथा सम्पन्नता की प्राप्ति होती है। उसके दुःख और अभाव दूर हो जाते हैं।

इन्द्र देवता—ॐ देवाधिमति देवाय सुरेन्द्राय शुचि प्रियाय प्रसीद स्वाहा।

इस मन्त्र का एक लाख जप करने पर यह सिद्ध होता है। इस मन्त्र का जप आकाश की ओर मुंह करके करना चाहिये। जप का दशांश हवन आवश्यक है। इससे इन्द्र साधक को दर्शन देते हैं और उसकी इच्छानुसार वर देते हैं।

यह सांसारिक जीवन को सुखी बनाने का एक मन्त्र है।

कुबेर मन्त्र—समस्त यक्षों तथा यक्षिणियों के अधिपति कुबेर हैं। यह देवलोक
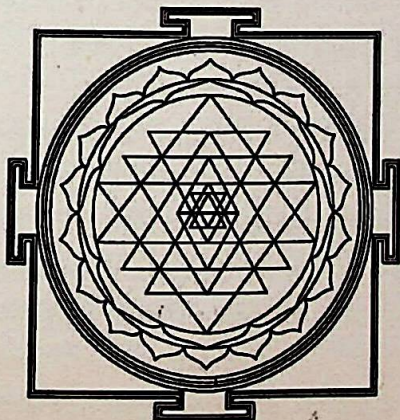
के कोषाध्यक्ष हैं। जिस प्रकार लक्ष्मीजी एकमात्र रूप से धन की देवी हैं उसी प्रकार कुबेर एकमात्र रूप से धन के देवता हैं।

मन्त्र—ॐ यक्षराजाय कुबेराय धनधान्यादिपतये धनधान्य समृद्धि में देहि दामप स्वाहा।

इसको किसी देवालय में एकाग्र होकर सवा लाख की संख्या में जपना चाहिये।

जप पूरा करके कुबेर की मिट्टी की प्रतिमा बनाकर उसका पूजन कर मन्त्र-जप का दशांश हवन भी करना चाहिये। हवन-शुद्ध घी तथा सफेद तिल से होना आवश्यक है।

मन्मथ बीज—मन्मथ बीज मन्त्र कामदेव का मन्त्र है। यह रतिकर्म स्वामी हैं। इनकी भार्या का नाम रति है। सैक्स क्रिया के संचालक हैं।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अनंग कामदेवाय नमः।

इनका एक मन्त्र काम गायत्री के रूप में भी है। लेकिन इनकी साधना तथा शीघ्र कृपा-प्राप्ति के लिये यहां दिया मन्त्र विशेष उपयोगी है। यह मन्त्र दो लाख की संख्या में जपने पर सिद्ध होता है। जप का दशांश हवन भी करना चाहिये। इसकी सिद्धि से सुन्दर स्त्री की प्राप्ति होती है। दीर्घायु, बल पोरुष तथा समस्त सांसारिक सुख प्राप्त होते हैं।

कामदेव की कृपा से व्यक्ति किसी भी सुन्दरी को आकर्षित कर सकता है।

चन्द्र मन्त्र—ॐ ऐं क्ली सोभाय नमः।

इस मन्त्र का जप किसी शुभ मुहूर्त का शोधन करके प्रारम्भ करना चाहिये। श्वेत वस्तुओं का दान करना चाहिये—चांदी, श्वेत वस्त्र, चावल, दही इत्यादि मन्त्र-सिद्ध व्यक्ति को कृपा प्राप्त होती है।

समस्त प्रकार के रोग तथा अशांति का निवारण होकर सौभाग्य की प्राप्ति होती है। राज्याश्रय तथा राज-सम्मान की प्राप्ति होती है।

मंगल मन्त्र—ॐ हूं श्री मंगलाय नमः।

यह मंगल मन्त्र सवा लाख की संख्या में जपना चाहिये। जप पूरा होने पर जप का दशांश हवन करना चाहिये।

साधकों! इस प्रकार आप अनेक सरल साधनायें कर सिद्धियों को प्राप्त कर सकते हैं। अनिवार्य यह है कि पहले आप सैक्स-भावना पर अपना पूर्ण नियन्त्रण कर लें। एक बार यह आपके वश में आ गया तो समझ लें अब सिद्धि आपसे अधिक दूर नहीं है।

भैरवी के नाना अर्थ हैं, पर तन्त्र में वह अपना अलग महत्व और अर्थ रखती

है। तन्त्र में वह साधक या तान्त्रिक की सहयोगी होती है। तन्त्र-रूपी रथ का वह दूसरा पहिया है। जिस पर तन्त्र की साधनायें और सिद्धियां भागती हैं। रथ के पहियों पर ही रथ की गति और दिशा निर्भर रहती है। एक भी पहिया निर्बल या उचित प्रकार से साथ देने वाला न हुआ तो रथ का वेग आहत होता है। बहुत कुछ साधनायें और सिद्धियां भैरवी पर ही निर्भर करती हैं। तन्त्र में नारी को भैरवी का ही स्थान दिया गया है। भैरवी के रूप में वह एक अत्यन्त सहायक माध्यम है। भैरवी के बिना तन्त्र साधना लगभग असम्भव ही है। भैरवी का पर्याप्त विवरण विभिन्न तन्त्र-ग्रन्थों में मिलता है। बंगाल में भैरवी को सबसे अधिक मान्यता दी गई है। बंग कन्यायें शायद तन्त्र साधना के लिये सबसे उपयोगी मानी गयी हैं। बंग बालायें न केवल अपने रूप-लावण्य के कारण इस कार्य में उत्तम मानी गयीं, वरन् उनका शिष्ट और मृदु व्यवहार भी काफी सहयोगी होता था। बंगाल का क्षेत्र तान्त्रिकों के लिये अत्यन्त ही उपयोगी और उर्वर रहा है। बंगाल कामरूप या कमच्छा का नाम आज भी एक विचित्र रूप संचरित किया जाता है। बंगाल का जादू आज भी मशहूर है। लोगों के बीच कामरूप या कमच्छा के बारे में यह प्रचलित है कि वहां की स्त्रियां पुरुषों को भेड़-बकरा बना दिया करती हैं। इस तरह की बहुत-सी बातें प्रचलित थीं। बंगाल या कामाख्या का मंदिर तन्त्र साधना का एक प्रमुख केन्द्र रहा है। अधिकांश बंग बालायें इसी कारण अपने समय की उत्तम भैरवी थीं। बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने अपने कई उपन्यासों में भैरवी को भी पात्र बनाया है। भैरवी का सबसे बड़ा गुण उसके सहयोग की भावना है। डॉक्टर मेस्मर ने जिस सम्मोहन विद्या या मेस्मेरीज्म का आविष्कार किया, उसकी यह अनिवार्य शर्त है कि सम्मोहित होने वाला सहमत हो तथा इसमें स्वेच्छा से योगदान करे। यह माना गया है कि बिना इस प्रकार के सहयोग के किसी को भी उसकी इच्छा के विपरीत सम्मोहित नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार की इच्छा एवं सहमति तन्त्र में भी आवश्यक है। अतएव भैरवी का पूरा सहयोग पाकर ही तान्त्रिक अपनी साधना में सफलता प्राप्त कर सकता है।

भैरवी का चुनाव तान्त्रिक की अपनी इच्छा पर है। वैसे तन्त्र के कई रूप प्रचलित थे और हैं, पर इन तमाम रूपों के बावजूद प्रत्येक तन्त्र में भैरवी को अनिवार्य माना गया है। वह इस विधा में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। भैरवी की ऊर्जा ही साधक या तान्त्रिक को विशिष्ट शक्तिवान बनाती है। भैरवी के नाना प्रकार के चित्र, मूर्तियां भारत के विभिन्न स्थानों से प्राप्त हुई हैं। खजुराहों के मन्दिरों में भी इनका विशेष रूप से चित्रण किया गया है। कहीं-कहीं इनको योगिनियां भी माना गया है। जबलपुर (मध्य प्रदेश) में भेड़ा घाट के पास चौसठ जोगनी का मन्दिर आज

भी है। यह एक प्रसिद्ध मन्दिर है। योगिनी का अर्थ ही होता है, योगदान करने वाली ···योग देने वाली···एक प्रकार से ये सब तन्त्र की भैरवियां ही हैं। सुप्रसिद्ध लेखिका शिवानी ने भी भैरवी नाम से एक उपन्यास की रचना की है। उपन्यास काल्पनिक होते हुये भी अपने आप में महत्वपूर्ण इसलिये है कि इसका चित्रण बहुत कुछ इस विधि से हुआ है कि वह परम्परागत रूप से चला आया उसका ही रूप है। भैरवी के सम्बन्ध में काफी विवरण तन्त्र शास्त्रों की पुस्तकों में है। उसका रौद्ररूप भी अनेक मन्दिरों में उत्तीर्ण है। भैरवी का चयन करना तान्त्रिक की इच्छा पर है।

भैरवी तान्त्रिक के लिये एक प्रकार से गृहिणी के रूप में है। जिस प्रकार गृहिणी अपने गृहस्वामी के लिये सब प्रकार की व्यवस्थायें पहले करके रखती है, इसी प्रकार भैरवी तान्त्रिक के लिये सारे प्रबन्ध करती है। उसके पूजा-पाठ, विधि-विधान का सरंजाम उसके ही हाथ में रहता है। सारा कुछ वही सुनियोजित करती है। भैरवी का ही योगदान पाकर तान्त्रिक सारी क्रियायें करता है। तान्त्रिक क्रियायें प्रायः एक व्यक्ति के द्वारा किया जाना सम्भव नहीं है। इसमें एक न एक सहयोगी की आवश्यकता अवश्य पड़ती है। भैरवी ऐसे ही एक सहयोगी का रूप होती है। तन्त्र में उसका स्थान इसी कारण महत्वपूर्ण माना गया है। तान्त्रिक उसका मनोयोग से सहयोग पाकर अपनी तमाम तन्त्र क्रियायें सम्पन्न करता है।

प्राचीनकाल में तान्त्रिक अपना अलग रूप-वेश बनाया करते थे, पर इस प्रकार के रूप-वेश तन्त्र में आवश्यक नहीं हैं। तान्त्रिक के लिये अपना रूप औघड़ जैसा बनाये रखना बिल्कुल आवश्यक नहीं है। जो लोग सिद्धि की चरम सीमा पर पहुंच जाते हैं उन सबके लिये यह बात अलग है कि उनको दुनिया से मतलब नहीं रह जाता है। वैसे भी आज के युग में कुछ लोगों ने इस प्रकार का वेश धारण कर रखा है। अपने तन्त्र को व्यवसाय का रूप देने के लिये इस प्रकार का प्रचलन-सा हो गया है। बढ़े, लम्बे सर के बाल और लम्बा चोगा जैसे आज का तान्त्रिक-वेश हो गया है। सत्य साईं बाबा, महेश योगी या रजनीश आजकल इसी वेश में हैं। अघोरी तान्त्रिक भी यही वेश रखता है। अपने को अलग-थलग रखने के लिये इस प्रकार के वेश बना लिये गये हैं। वैसे तान्त्रिक के लिये किसी प्रकार के वेश का विधान नहीं है। वह साधारण गृहस्थ के रूप में, सामान्य नागरिक के रूप में भी रह सकता है। वेश तो दिखावटी होता है।

सबसे आवश्यक और बड़ी बात यह है कि साधना में वह कितना पटु है। मूल्य साधनाओं का है, वेश का नहीं। तान्त्रिक होना या सिद्धि हेतु साधना करना इस बात के लिये नहीं है कि कोई चमत्कार दिखाया जाये या किसी का अहित कर दिया जाये। यह सब अपने लिये ही करना आवश्यक है। स्वउन्नति या जीवन

को सुखमय सफल बनाना ही तन्त्र का इष्ट है। तन्त्र का अर्थ ही है, अपना जीवन सफलीभूत करना। तन्त्र साधनायें यही सब इंगित करती हैं। अपने जीवन के कार्यों को सफल और सुगम बनाना, आने वाली बाधाओं से अपनी रक्षा करना तथा सफलता के लिये द्वार निरन्तर खोलते रहना ही तन्त्र का उद्देश्य है। अधिक-से-अधिक जनकल्याण के लिये इसका उपयोग किया जा सकता है। पीड़ित या दुःखियों की सहायता करना, उनको दैविक या प्रेत-बाधाओं से मुक्त रखना ही तन्त्र का विधान है। ये सब साधनायें और सिद्धियां इसी कारण हैं। इनका दुरुपयोग करना या किसी का अहित करना सर्वथा वर्जित है। ऐसा करने से तन्त्र की शक्ति का अपने आप ह्रास होना शुरू हो जाता है, क्योंकि इसके द्वारा जो पीड़ित होगा, उसकी पीड़ित तरंगें भी अपना करिश्मा दिखलाती हैं।

तन्त्र वास्तव में जनकल्याण के लिये है। वह भी एक ऐसी विधा है जो इसी उद्देश्य से अस्तित्व में आयी है। इसी विधा के लिये भैरवी की भी सृष्टि की गयी है। तन्त्र में भैरवी सबसे निराले स्थान पर है। शिव और काली का संयोग भी इसका प्रमाण है। शिव और काली का यह सम्बन्ध तान्त्रिक और भैरवी का है। शिव के साथ मां काली की क्रीड़ायें भैरवी के रूप में हैं। जो नाना प्रकार से हमारे सामने आज भी हैं। कुछ तन्त्र व्यवस्थाओं में मानवेतर सम्भोग भी वर्णित है। इसमें मानवेतर प्राणी को भैरवी का स्थान दिया गया है। माना पशुओं के साथ इस प्रकार की क्रीड़ायें भी इसी आधार पर हैं कि उनके द्वारा प्राप्त ऊर्जा को तान्त्रिक या साधक अपने इष्ट में सफलता प्राप्त कर सके। मानवेतर सम्भोग नयी बात नहीं है। वैसे भी अपने व्यक्तिगत जीवन में अनेक लोग मानवेतर प्राणियों के साथ सम्भोग करते हैं। समाज रचना और स्वास्थ्य विज्ञान की दृष्टि से इसे बड़ा अनुचित माना गया है। यह एक घृणित कार्य भी है। इस सबके बावजूद तन्त्र में इसका विधान जिस रूप में किया गया है, वह स्वयं में कुछ ठीक है। वैसे भी तन्त्र के सम्बन्ध में आम धारणायें हैं कि कुल मिलाकर तन्त्र घृणित क्रियाओं का ही नाम है।

तान्त्रिक शब्द मात्र से लोगों के मन में यह बात आ जाती है कि यह घृणित, अमानवीय कर्म करने वाला व्यक्ति है। तन्त्र के बारे में इस प्रकार की भावनाओं का कारणं स्वयं ऐसे ही तान्त्रिक हैं, जो इस प्रकार से अपना वेश बनाकर रहा करते हैं। वैसे तन्त्र करने वाला या तान्त्रिक ऐसा व्यक्ति होता है, जो प्रदर्शन नहीं करता है, वह किसी प्रकार की प्रसिद्धि की भी कामना नहीं करता है। अपने जीवन की साधनाओं को वह गोपनीय ही रखता है। उसका साथ देने वाली भैरवी भी अपने ढंग से रहती है और क्रियाओं को या साधना के तरीकों को खोलती नहीं है। भैरवी

का एक रूप महाभैरवी का भी होता है। यह भैरवी अत्यन्त सिद्ध होती है और तन्त्रदक्ष हो जाया करती है। बिना तान्त्रिक के सहयोग के वह बहुत सारी क्रियायें कर सकती है। महाभैरवी एक प्रकार से स्वतन्त्र रूप से तान्त्रिक या साधिका भी हो जाया करती है। स्त्रियों के लिये तन्त्र का क्षेत्र वर्जित नहीं है। वह उसमें भाग ले सकती हैं और पुरुष के ही समान साधनायें कर सकती हैं। इस तरह की अनेक महिलाओं के प्रमाण मिलते हैं। तन्त्र का देवी रूप ही नारी का है। इस कारण वह सब इसके लिये वर्जित नहीं है। यह साधना कर सकती हैं, सिद्धि कर सकती हैं। स्वयं देवी के रूप में जब आराध्या है तो तन्त्र में नारी का प्रवेश वर्जित कहां रह गया ? तन्त्र की सारी विधा अपने आप में केवल नारी के इर्द-गिर्द ही घूम रही है।

महाभैरवी की पूजा एक प्रकार से तन्त्र की पूजा है। तन्त्र की पूजा स्वयं ब्रह्मा-विष्णु करें, उससे बड़ी महत्ता और क्या हो सकती है। इसका आशय है कि महाशिव का यह रूप सृष्टि के निर्माता और चालक से भी महान् है। तन्त्र की रचना का अपना महत्व है। तन्त्र तो सर्वोपरि है और इस तन्त्र में महाभैरवी की भांति भैरवी का भी कुछ न कुछ महत्व और अस्तित्व है। इस कारण भी भैरवी की उपयोगिता का आभास किया जा सकता है। भैरवी तान्त्रिक के लिये सेतु का कार्य करती है। साधना का पुल पार कर सिद्धियों तक जाने के लिये भैरवी एक माध्यम है। तन्त्र की यह (भैरवी) नारी एक ऐसा महत्वपूर्ण रोल अदा करती है जो केवल अनुभव से जाना जा सकता है। साधना के लिये यह एक सम्बल है। हर कदम पर उसका सहयोग एक ऐसा बल है, जोकि तान्त्रिक में हतोत्साह या निराशा नहीं पैदा होने देता। ये तमाम तथ्य तन्त्र में नारी की अब तक की उपयोगिता देखते हुये सरलता से समझा जा सकता है। तन्त्र की नारी स्वयं में उपयोगी है। वह सिद्धि का मार्ग साधनाओं के द्वारा प्रशस्त करने का माध्यम है। कुछ तन्त्र शास्त्रों में नारी के स्थान पर अन्य जीवों का उपयोग करने का विधान है।

मादा जीवों का भी उपयोग तान्त्रिक प्रायः करते हैं, पर उनको उपयोग में लाने का तन्त्र शास्त्रों में कोई स्पष्ट विधान नहीं है। मानवेतर मैथुन कहां तक ऊर्जामय है, इस सम्बन्ध में प्रामाणिक तथ्य उपलब्ध नहीं है। केवल नारी का भैरवी के रूप में ही विशद् विवेचन है। तन्त्र सैक्स के साथ चलता है और सैक्स का आधार भैरवी है। प्रायः भैरवी का चुनाव तान्त्रिक अपने साधनों से करता है। इसमें भैरवी की स्वीकृति आवश्यक है। अनिच्छा से, दबाव या भयवश इस कार्य के लिये किसी नारी का उपयोग करना हानिकारक है। तन्त्र स्वेच्छा से किया गया कार्य है। जिस प्रकार प्राचीन काल में ऋषि-मुनि जंगलों या एकान्त निर्जन स्थानों पर तपस्या करते हुये अपनी साधनाओं में लीन रहा करते थे उसी प्रकार तान्त्रिक का भी स्थान श्मशान

या नदी तट, बावड़ी आदि हुआ करता है। वैसे सबसे उत्तम स्थान मरघट या श्मशान ही माना गया है। भैरवी श्मशान की सँगिनी के रूप में तान्त्रिक को सहयोग प्रदान करती है। श्मशान का तन्त्र में अपना महत्व है। तन्त्र में श्मशान और नारी का भी अपना वैज्ञानिक संयोजन है। श्मशान एक शव-स्थल है। शव के जलने की ऊर्जा अथवा हाड़-मांस की गंध या गैसें श्मशान का वातावरण कुछ अलग ही रखती हैं। इसे विज्ञान की भाषा में प्रदूषण माना जा सकता है। श्मशान का प्रदूषण कुछ अन्य ही प्रकार का होता है। दिन का वातावरण चाहे जो हो पर रात्रि का श्मशान का वातावरण कुछ और ही होता है। रात्रि के वातावरण में श्मशान की नीरवता अत्यन्त भयानक रहती है। इसके अलावा वहां का विधान अन्य स्थानों से कुछ अलग ही होता है। इस विधान में सांसारिक मायामोह की कोई बात नहीं होती है। श्मशान में सर्वत्र वैराग्य-भावना होती है। शव के साथ आने वाला हर व्यक्ति मायामोह के वातावरण से परे होता है। यह सारा संसार उसको मायाजाल के समान लगता है। श्मशान के इस वातावरण के कारण वहां पर संसार से परे क्रियायें करना उचित माना गया है। श्मशान का सारा वातावरण वीतरागी होता है। तन्त्र संसार से परे मायामोह से दूर की ही साधना क्रिया है। इस कारण श्मशान तो तन्त्र के लिये अत्यन्त उपयोगी स्थान है।

स्वयं तन्त्रेता भूतनाथ भगवान शंकर का स्थान मरघट ही माना गया है। उनको श्मशान का स्वामी बतलाया गया है। शिव और शव का जोड़ा इसी कारण बना है। मरघट की राख लपेटे भूतभावन भगवान शंकर स्वयं मरघट में विराजते हैं और तन्त्र को भी एक प्रकार से शव साधना माना गया है। अकर्मण्य जीवन जीने वाला व्यक्ति जीवित रहते हुये भी शव के समान ही रहता है। उसमें और शव में भला क्या अन्तर होता है। तन्त्र ऐसा ही "शव-जीवन" जीने वालों को शिव अर्थात् सक्रिय बनाने वाली विधा है। अतएव तन्त्र का और शव का साथ उचित माना गया है। वैसे भी तान्त्रिकों के साथ शव की अनेक बातें जुड़ी चली आयी हैं। अमुक व्यक्ति जो तान्त्रिक था, ने शव में प्राण डाल दिये। उसके आदेश पर मुर्दा उठकर बैठ गया। इस प्रकार की बातें प्रचलित हैं। शव का तन्त्र में अनेक प्रकार से उपयोग भी बतलाया गया है। अतएव प्रायः श्मशान में ही साधक जाकर साधना करता है और विशेष रूप से रात के वातावरण में इस साधना का विधान है। आधी रात के बाद प्रायः मरघट कौन जाता है कोई नहीं जाता। धारणा है कि मरघट में भूत-प्रेत रहते हैं, नाचते हैं तथा मुर्दे आपस में बात करते हैं। ऐसे भयावह वातावरण में जिसमें इस तरह की कल्पनायें, बातें की गयी हैं, यकायक अकेले जाने का साहस और कोई नहीं कर सकता है। ऐसे वातावरण में तो केवल भैरवी ही उसका साथ

दे सकती है। श्मशान का सम्बन्ध तन्त्र में काफी गहरा है। इस गहरे तन्त्र के कारण ही खोपड़ी प्रमुख है। मानव-खोपड़ी तान्त्रिक का प्रतीक है और लगभग हर तान्त्रिक इसको अपने पास रखता है। मानव-खोपड़ी का प्रतीक तन्त्र का प्रतीक-सा बन गयी है। मानव-खोपड़ी का यह रूप केवल श्मशान में ही मिलता है। खोपड़ी जगाना या नचाना, उड़ाना भी एक प्रकार से तान्त्रिक क्रिया है। इसको सिद्ध तान्त्रिक ही कर सकते हैं। यह कपोल कल्पना नहीं, एक सत्य है। श्मशान में प्राप्त मानव-खोपड़ी को तन्त्र साधना में नाना प्रकार से काम में लाया जाता है। मानव-खोपड़ी और हड्डियां तान्त्रिकगण अपने पास रखा करते हैं। जिस प्रकार गेरूआ वस्त्र साधु का प्रतीक होता है, उसी प्रकार मानव-खोपड़ी और मानव-हड्डियां तान्त्रिक का प्रतीक हुआ करती हैं।

इस प्रकार के प्रतीक के कारण श्मशान ही तान्त्रिक की साधना-स्थली बन गया है। रात्रि के नीरव अन्धकार में भैरवी के साथ तान्त्रिक साधना करता है और सिद्धियों का आह्वान करता है। तान्त्रिक के इसी रूप के कारण उसको एक और विशेषण दिया गया है, वह विशेषण है, कापालिक। कापालिक⋯अर्थात् कपाल (खोपड़ी) का प्रयोग करने वाला साधक। वैसे व्यवहार में कापालिक और तान्त्रिक

में पर्याप्त अन्तर है। तान्त्रिक और औघड़ में जो अन्तर है, वही कापालिक में भी है। कापालिक के हाथ में हमेशा खोपड़ी रहा करती है। यही उसका एक मात्र साधन सब प्रकार के प्रयोग में आता है। कुछ कापालिक इसको लोहे या चांदी की पतर से मढ़वा लिया करते हैं। श्मशान में तान्त्रिक को पूरी निस्तब्धता मिलती है। उस वातावरण में वह सरलता से ध्यान लगा सकता है। इसके साथ-साथ उसके ध्यान या साधना में किसी प्रकार का व्यवधान पढ़ने की भी शंका नहीं रहती है। भला कौन श्मशान में उसको व्यवधान उपस्थित करने जायेगा। इस कारण चारों ओर से निश्चिन्त होकर तान्त्रिक या साधक श्मशान के वातावरण में अपना कार्य कर सकता है।

इसमें सन्देह नहीं कि हमारे पूर्वजों ने काफी सोच-विचार के बाद तन्त्र साधना का स्थल श्मशान को बनाया है। वह एक ऐसे वातावरण का निर्माण करता है, जिसमें मनुष्य स्वयं को ही इस योग्य बना लेता है। वैसे भी तन्त्र साधना का उद्देश्य न भी रखा जाये तो भी यदि कोई मनुष्य रात्रि के अन्धकार में श्मशान में जाये तो उसके मन में एक अजीब-सा वैराग्य उत्पन्न हो जाता है। यह वैराग्य उसको ऐसी चिंतन की दिशा में ला देता है कि वह स्वयं इस संसार को नश्वर मानने-समझने लगता है और इस नश्वरता को ही ध्यान में रखकर उसका मन इस संसार की असारता या निस्सारता की ओर जाता है तथा उसका मन ब्रह्म में लगने लगता है। श्मशान जहां जीवन का अन्त होता है या जीवन को अग्नि देकर अन्तिम रूप से समाधि दी जाती है, वहीं से एक नया जीवन भी शुरू होता है। विज्ञान की मान्यता है कि जहां कहीं भी किसी एक वस्तु की समाप्ति होती है, वहीं पर एक नया जीवन या वस्तु भी अपने आप बन जाती है। उदाहरणस्वरूप, यदि कागज को जला दिया जाये, तो जलने के बाद वह एक नया रूप ले लेता है। कागज तो जल गया, उसका अस्तित्व गया और उसके स्थान पर एक नया पदार्थ आ गया। एक बार एक वस्तु समाप्त होती है, तो उसका स्थान दूसरी वस्तु ले लेती है। मानव-शरीर विशेषकर हिन्दू धर्म में जला दिया जाता है। यह एक प्रकार से उसको नष्ट करना है। इसी तरह नष्ट करने की क्रियायें अन्य धर्मावलम्बियों में भी हैं। शरीर का नष्ट होना मृत्यु का प्रमाण है। विज्ञान के सिद्धान्तानुसार शरीर नष्ट होकर अवश्य ही कोई न कोई नया रूप भी लेता है। यह नया रूप क्या है ? विज्ञान इस सम्बन्ध में मौन है। केवल इतना बतलाया है कि मनुष्य के शरीर में इतना नमक और इतना कैल्शियम और इतना लोहा है। बस, इससे आगे नहीं। इससे आगे तो तन्त्र ही इस बात को बतलाता है कि मनुष्य-शरीर सूक्ष्म रूप से बदल जाता है। शरीर-रूपी पिंजरे से आत्मा को मुक्ति मिल जाती है। अदृश्य आत्मा सब वातावरण में मुक्त

हो जाया करती है और सूक्ष्म रूप में वह विचरण करती रहती है। वह न हमको देख सकती हैं और न ही हम उसको देख सकते हैं। यदा-कदा सूक्ष्म शरीर नाना प्रकार का आकार धारण कर लेता है। उसका हमसे सम्पर्क भी हो जाता है। इस सम्पर्क को हम भूत-प्रेत मानते हैं।

भूत-प्रेत का अस्तित्व विज्ञान नहीं मानता है। आत्मा का अस्तित्व सिपरेट एनटिटी विज्ञान मानता नजर आ रहा है। पश्चिम के अनेक लोग आत्माओं का आह्वान करने में सफल हो गए हैं। इसके साथ-साथ टेस्ट ट्यूब में बच्चे पैदा कर सकने की क्षमता के दौरान भी अनेक तथ्य आत्मा के अस्तित्व के प्रकाश में आये हैं। इस तरह अभी भी पश्चिम में आत्मा पर शोध हो रहा है। पुनर्जन्म भी तो आत्मा के अस्तित्व का प्रमाण देता है। अतएव श्मशान में मानव-शरीर सूक्ष्म रूप धारण कर लेता है। श्मशान में ही क्यों ? मृत्यु के साथ ही वह उसका सूक्ष्म रूप बन जाता है। शव के साथ-साथ आत्मा भागती है। वर्षों तक पिंजरे में रहने वाले पक्षी का पिंजरा टूट जाये तो पक्षी यकायक उड़कर नहीं भागता। वह फिर—फिर पिंजरे की खोज करता है और उसमें प्रवेश करना चाहता है, पर पिंजरा हो तब ना। शव से सिर धुनती आत्मा श्मशान तक अवश्य आती है। इसके बाद वह बिखर-सी जाया करती है। अतएव आत्मा श्मशान में बराबर चक्कर लगाया करती है।

श्मशान में एक प्रकार से आत्माओं का ताण्डव होता रहता है। ऐसे ताण्डव में तन्त्र की साधना को सर्वोत्तम माना गया है। तन्त्र सूक्ष्म शरीर को वश में करने और उसे नियन्त्रित रखने की क्रिया है। जंगल का सबसे खतरनाक जीव शेर माना गया है। वह मानव को खा जाता है, पर ऐसे ही शेर को किस प्रकार से पालतू बना लिया जाता है, इसका प्रमाण हमें "सर्कस" में मिलता है। रिंग मास्टर के इशारे पर वह किस प्रकार कार्य करता है। इसी तन्त्र के द्वारा आत्माओं पर भी काबू पाकर उनको पालतू बनाया जा सकता है। क्या इस सत्य से इन्कार किया जा सकता है? यह सत्य नकारा तो नहीं जा सकता है, पर इस बात का प्रमाण भी तो नहीं दिया जा सकता है कि आत्माओं को किस प्रकार पालतू बनाया जा सकता है? इस प्रमाण के अभाव में तन्त्र को बकवास कहा जा सकता है, पर वास्तविक साधक इसको ही सत्य में निरूपित करते रहते हैं। यह एक ऐसी क्रिया है, जिसे सावधानी के साथ ही कार्यान्वित किया जा सकता है। आत्माओं का तांडव और नर्तन बराबर श्मशान घाट में चलता रहता है। इन्हीं पर नियन्त्रण कर साधक पराजगत से अपना सम्पर्क बना सकता है। सम्पर्क दो प्रकार से होता है—दृश्य और अदृश्य। दृश्य वह है, जिसके द्वारा हमें सम्पर्क होता दीखता है। बिजली दिखलाई नहीं पड़ती है, पर उसके माध्यम तार को देखकर तो हम जान ही जाते हैं कि यह बिजली

की लाइन है। अदृश्य वह है जिसमें हम सम्पर्क का माध्यम देख नहीं सकते। बेतार का तार या रेडियो प्रसारण'''इनका सम्पर्क अदृश्य ही होता है। यह सम्पर्क परस्पर आकर्षण पर निर्भर करता है। चन्द्रमा के अदृश्य आकर्षण के कारण सागर का जल आगे-पीछे, ऊपर-नीचे होता रहता है। इस प्रकार के सम्पर्क केवल अनुभव किये जा सकते हैं। सम्पर्क माध्यम अदृश्य ही रहता है। संसार का यह नियम है कि प्रत्येक पदार्थ में दूसरे पदार्थ को आकर्षित करने की शक्ति रहती है। न्यून या अधिक मात्रा में यह आकर्षण या चुम्बकीय शक्ति प्रत्येक अचल और सचल वस्तु में होती है। आकर्षण-रहित संसार का कोई पदार्थ नहीं होता है। यह आकर्षण किसी पदार्थ में कम, किसी पदार्थ में ज्यादा होता है। इसी प्रकार जीवित प्राणियों में भी परस्पर आकर्षण होता है। एक-दूसरे को वे खींचते हैं। यह परस्पर आकर्षण का ही प्रभाव है कि पहली ही नजर में यदा-कदा स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के लिये जान दे देने पर उतारू हो जाते हैं। इसी परस्पर आकर्षण का ही नाम प्यार है। प्रायः यह आकर्षण हम अनुभव भी करते हैं। परस्पर आकर्षण के ही कारण एक-दूसरे के शरीर में सनसनी फैल जाती है और दिल की धड़कनें भी बढ़ जाया करती हैं।

चन्द्रमा लाखों मील की दूरी पर रहकर अपना प्रभाव विशाल समुद्र पर डाल सकता है, उसी प्रकार हम अपनी-अपनी आकर्षण शक्ति के बल पर एक-दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। किस पर कितना प्रभाव पड़ता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसमें आकर्षण शक्ति कितनी और कैसी मात्र है, जो अपना प्रभाव डालना चाहता है। इसी प्रकार प्रत्येक पदार्थ की, जड़ या चेतन की आकर्षण शक्ति पर संसार चल रहा है और ब्रह्माण्ड टिका है, अन्यथा सर्वनाश हो जाये। ब्रह्माण्ड के समस्त ग्रह, उपग्रह केवल एक-दूसरे के आकर्षण के कारण टिके हुये हैं। स्वयं हमारा चलना-फिरना आकर्षण क्रिया पर आधारित है। खुले मैदान में हमारी सामान्य गति कम पड़ जाती है, जबकि सड़कों या गलियों में हम अधिक चल लेते हैं। ऐसा करते समय हमें समय का पता नहीं लगता है, जबकि खुले मैदान में समय लगता है। खुले मैदान में हमें आकर्षण करने वाले जड़ या चेतन कम ही मिलते हैं, जबकि सड़कों या गलियों में ऐसे आकर्षण बहुतायत से हैं। जंगल का रास्ता पार करना हमें अखर जाता है जबकि सड़कों व गलियों का नहीं। यही इसका कारण है। इसके अलावा एक तथ्य अणुओं का भी है। अणु अणुमय संसार का प्रत्येक जड़ चेतन है। अणुओं का परस्पर आकर्षण ही प्रत्येक वस्तु को उसका रूप आकार दिये हुये है। अणुओं का विखण्डन या उनके क्रम में व्यवधान होने के कारण उनका रूप-रंग बदल जाया करता है। यह आकर्षण ही केन्द्र है।

इसके प्रभाव से ही सम्पूर्ण सृष्टि या ब्रह्माण्ड का अपना कार्य चल रहा है। तन्त्र विधा भी इसी प्रकार के आकर्षण के सिद्धान्त पर आधारित है। किसी भी जड़ या चेतन पर अपना प्रभाव डालने के लिये उसकी अपेक्षा हमारे आकर्षण की मात्रा का अधिक होना आवश्यक है। तन्त्र में सिद्धि का अर्थ इसी फार्मूले पर है। तन्त्र विधायें या साधनायें इसी आधार पर हैं। इस प्रकार जब यह आकर्षण अधिक होगा तो जड़ या चेतन प्रभावित ही होगा। इस प्रभाव के द्वारा हम उसे मनोनुकूल कार्य में ला सकते हैं। यही मूल रहस्य है तन्त्र का।

आकर्षण एक क्रिया है। हर क्रिया में शक्ति उपस्थित रहती है। बिना शक्ति के हम क्रिया नहीं कर सकते हैं और प्रत्येक शक्ति में इसी कारण ऊर्जा होती है। ऊर्जा से ही शक्ति उत्पन्न होती है। इस प्रकार ऊर्जा से शक्ति, शक्ति से आकर्षण और आकर्षण से मनोनुकूल रूप या संचालन किया जा सकता है। ऊर्जा का स्त्रोत भैरवी है। महाश्मशान में उसके साथ सम्पन्न क्रियाओं के द्वारा इस ऊर्जा को अधिक उपयोगी मात्रा में प्राप्त किया जा सकता है। आत्माओं को अपने आकर्षण के बल पर प्रभावित कर उनसे मनोनुकूल कार्य भी कराये जा सकते हैं। आत्माओं के द्वारा किये गये इस प्रकार के कार्य अलौकिक हो जाते हैं। अलौकिक कार्य ही तन्त्र की पहचान हैं। श्मशान में जितनी सरलता से ऊर्जा को प्राप्त किया जा सकता है, उतनी सरलता से अन्य स्थान पर नहीं। श्मशान का वातावरण इसके लिये सर्वथा अनुकूल होता है। वातावरण प्रत्येक स्थान का एक प्रकार का नहीं होता है।

घर के वातावरण से बाहर का वातावरण भिन्न होता है। हर वातावरण में वहां उपस्थित चल या अचल वस्तु का अपना प्रभाव होता है और उनके आकर्षण से वातावरण प्रभावित भी रहता है। इसी कारण साधना स्थूलों का निर्धारण अलग-अलग किया गया है। घर के वातावरण में पूजा-पाठ लगभग असम्भव-सा है, वहां पूजा-पाठ उतनी कारगर बात नहीं बनती, जितनी कि मन्दिर या इसके लिये विशिष्ट रूप से निर्धारित स्थान पर बनती है। प्रत्येक वातावरण में वहां की प्रत्येक उपस्थित वस्तु का प्रभाव होता है, विचार तरंगों का अवसर पड़ता है। इस कारण हमारा उद्देश्य अप्रभावित नहीं रहता है। प्रभाव के कारण वह कारगर नहीं हो पाता। इसी कारण हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि जंगलों, गुफाओं या एकान्त स्थानों पर जाकर तपस्यायें किया करते थे। क्या बच्चे को घर पर नहीं पढ़ाया जा सकता है ? घर का वातावरण ही वैसा नहीं होता है। इस कारण विद्यालयों की स्थापना की गयी है। वहां का वातावरण ही पढ़ाईमय होता है। समुचित वातावरण सफलता की पहली शर्त है। श्मशान का विधान इसी कारण तन्त्र में है। इस स्थान को

तन्त्र साधना के लिये सर्वोत्तम इसी आधार पर माना गया है। श्मशान और नारी दोनों मिलकर साधक के लिये सफलता का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

श्मशान के वातावरण में, नीरव रात्रि में साधक का वहां उपस्थित होना स्वयं में महत्वपूर्ण है। इस प्रकार की कल्पना मात्र ही प्रत्येक व्यक्ति को रोमाँचित कर देती है। कार्य-रूप में यह कितनी रोमांचकारी क्रिया नहीं है। इसी आधार पर इसका महत्व है। सिद्धि का अर्थ है, अपने मनोनुकूल कार्य का संपादन। इसके लिये की गई साधना कभी व्यर्थ नहीं जाती है। इसी साधना के लिये यह सब प्रावधान किया गया है। साधनायें इस बात पर भी निर्भर करती हैं कि आस-पास का वातावरण क्या है ? आस-पास के आकर्षण क्षेत्र की स्थिति क्या है ? इस बात को अब तो विज्ञान भी प्रमाणित कर चुका है। जैसे-जैसे हम ऊंचाई पर चढ़ते जायेंगे वैसे-वैसे हमारे मन से वासना के विचार खत्म होते जायेंगे। हिमालय पर आरोहण करते समय व्यक्ति के मन में काम रंचमात्र नहीं आता है। चन्द्रमा पर गये व्यक्ति निद्रा के एकांक क्षणों में भी काम का विचार मन में न ला सके। न केवल ऊंचाइयों वरन् आस-पास की वस्तुयें सजीव और निर्जीव अपना पूरा प्रभाव डालती हैं। भैरवी के साथ की गयी क्रीड़ायें अपना रंग दिखलाती हैं। तान्त्रिक उस समय औघड़ का रूप धारण कर लेता है। चिता की अग्नि अतिरिक्त ऊर्जा देती है और उसकी राख शरीर पर मलने से उसका अपना प्रभाव होता है। भैरवी श्मशान में एक ऐसी सहयोगी होती है, जो ऊर्जा का स्त्रोत बराबर प्रवाहित रखती है। श्मशान में रात्रि की नीरवता में किया गया चिन्तन अत्यन्त शक्तिशाली क्षमता रखता है। यही क्षमता श्मशान में नाना प्रकार के रंग दिखलाती है, जिसका तन्त्र शास्त्रों में अत्यन्त रोमांचक वर्णन किया गया है। मरघट जीवन से मृत्यु और मृत्यु से जीवन की ओर ले जाने वाला केन्द्र है। वैसे भी मरघट को देखने मात्र से हर किसी का मन वैराग्य से भर जाता है। जब देखने मात्र से यह दशा है, तो रात्रि निवास से क्या न होगा? इसकी सहज कल्पना की जा सकती है। इस रूप में व्यक्ति या साधक पर अपना प्रभाव पड़ता है। समय के साथ ये परम्परायें समाप्त हो गयीं। आज के युग में इस तरह की बातें लोगों को बकवास लगती हैं, पर मनोविज्ञान के प्रकाश में इस तरह की बातें क्या सच नहीं होती हैं? हर आदमी अपने आप में अपने विचारों से प्रभावित होता है। चेहरे की बनावट नहीं, पर उसकी आभा से इसका पता चल जाता है। उसके भाव, आंखों की चमक इस बात को स्वयं उजागर कर देती है कि व्यक्ति कैसा है ? क्या है ? यह आभा या औरा (प्रभामण्डल) आदमी के अपने मन के विचारों से बनता है, सुन्दरता या असुन्दरता के कारण नहीं। व्यक्तित्व का अपना महत्व होता है। आदमी का चेहरा नहीं, उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली माना जाता है। विचारों के प्रभाव की शक्ति के ही कारण श्मशान में किये

गये विचार अपना महत्व रखते हैं। श्मशान से उठी विचार-तरंगें अत्यन्त प्रभावकारी होती हैं।

विचार ही सत्य है। यही एकमात्र सत्य है। बाकी सब मिथ्या। हर प्रकार का विचार सत्य होता है। शेष असत्य है या मिथ्या। विचारों के समक्ष हमारी सारी मान्यतायें या धारणायें तुच्छ हैं अर्थात् उनका महत्व नहीं है। महत्व इस बात का है कि हम कहां और किस रूप में हैं ? हम भारतवासी बतलाते हैं कि हिमालय हमारे उत्तर में है पर तिब्बतवासी के लिये भी क्या वह उत्तर में हैं ? उसके लिये तो हिमालय दक्षिण में है। जो हमारे लिये सत्य है, वही दूसरे के लिये मिथ्या है। हमारा सच या हमारी धारणा हरएक के लिये मान्य नहीं हो सकती है। हरएक का अपना सत्य होता है, अपनी धारणा होती है। एक-दूसरे के लिये वह लागू नहीं होती है। अतएव विचार ही सत्य है और यह सत्य देश तथा काल की सीमायें परखकर कहा जाता है, फलतः सत्य है, तो केवल विचार। इसी कारण विचार-शक्ति के बल पर तन्त्र स्थापित है। इसी से पूर्ण जगत् को मायाजाल कहा गया है। काफी सीमा तक यह एक सत्य है। अगर यह सवाल किया जाये कि आप जीवित हैं ? इसका क्या प्रमाण है ? इसका उत्तर असम्भव है। जो कुछ देख रहे हैं आप, क्या वह सपना नहीं हो सकता है। इसी तरह तो आप रात में भी सपना देखते हैं। आप सपना देख रहे हैं और यह सब उलझनमय जीवन जी रहे हैं। क्या यह स्वप्न नहीं है। आप तो कबके मर चुके हैं। यह सब आप सपना देख रहे हैं। इसका कोई भी ठोस उत्तर नहीं दिया जा सकता है। इसी कारण संसार को मायाजाल या मिथ्या कहा गया है। सत्य है तो केवल विचार···और विचारों के माध्यम से ही हम जीवन जीते हैं। विचारों की विशालता और उनकी ऊर्जा-शक्ति ही हमें क्षमतामय बनाती है। विचारों को ही देवियों का ही रूप दिया गया है। इसी गति का एक रूप भैरवी भी है जो हमको या साधक को ऊर्जामय बनाती है। भैरवी शब्द की परिभाषा स्वयं में ही एक प्रमाण है। यह सम्पूर्ण वाङ्मय जो तन्त्र में है, उसका आशय यही है। भैरवी की स्थापना का उद्देश्य भी यही है। एक ओर यह सहायक है तो स्वयं में देवी का प्रतीक या रूप भी है। उसकी पूजन विधा इसका प्रमाण है। भैरवी को तन्त्र में सभी प्रकार का स्थान इसी आधार पर दिया गया है।

भैरवियों की मुद्रायें तथा मुखाकृतियां स्वयं इस बात को स्पष्ट करती हैं कि तन्त्र में उनका क्या महत्व है। भैरवी तान्त्रिक के लिये किस प्रकार का माध्यम है? भैरवी का तारतम्य साधक से एकदम उसी प्रकार बैठता है जिस प्रकार चोली और दामन का साथ। भैरवी तान्त्रिक के लिये भोग्या है और पूजनीय भी है। वह भैरवी को मां का भी संबोधन देता है। उसका व्यवहार भैरवी के लिये नाना प्रकार

का होता है। आराध्या मानकर वह उसका पूजन भी करता है और उसको भोगता भी है। ये सब रहस्यमय क्रियायें मानी जा सकती हैं, पर इन सबका अपना गुप्त गूढ़ार्थ है। सिद्धि के लिये की गयी साधनाओं में इस प्रकार के सारे व्यवहार सर्वथा स्वाभाविक हैं।

भैरवी की आयु का भी प्रश्न नहीं होता है। केवल एक ही अनिवार्य शर्त है कि उसका रजस्वला होना बंद नहीं होना चाहिये। मासिक धर्म बंद हो गयी महिला का तन्त्र में भैरवी के रूप में प्रयोग करना मना है। इसी प्रकार जब वह गर्भवती हो तो उसे भैरवी पद से मुक्त कर देना चाहिये, क्योंकि रजस्वला न होने की दशा में स्त्री का चन्द्रमा तेजहीन हो जाता है। इस परिवर्तन के कारण वह भैरवी बनी रहकर भी व्यर्थ होगी, क्योंकि उसकी ऊर्जा का केन्द्र तो बन्द ही रहता है। इस एक अनिवार्य बंधन के अलावा उस पर किसी प्रकार की शर्त नहीं है। वह कुछ भी हो, पर इन दो दशाओं में नहीं रहना चाहिये। भैरवी का साथ पाकर श्मशान में साधना करना सरल नहीं है। आज के इस वैज्ञानिक युग में भीड़-भाड़भरे स्थान पर, शहरी संस्कृति में रात को भैरवी के साथ श्मशान में जाना अड़चनें पैदा कर सकता है। इस कारण अच्छा यह है कि किसी ग्रामीण या उपशहरी क्षेत्र में ही इस क्रिया को सम्पादित किया जाये। भैरवी का श्मशान में आना ही रोमांचकारी होता है। उसका साथ स्वयं में एक शक्ति है, पर समस्या उसके सहयोग की है। श्मशान में कितनी शक्ति होती है, उसका अनुमान आप इसी बात से कर सकते हैं कि स्वयं एक रात श्मशान जाकर देखें और रात के गहरे सन्नाटे में मौन होकर बैठें। आप देखेंगे कि किस प्रकार के और कैसे-कैसे विचार मन में आते हैं। इसी समय की अपनी सारी मनःस्थिति पर विचार कर स्वयं इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है कि श्मशान चिंतन में कितनी गहन शक्ति है। जिस प्रकार रेडियो के प्रसारण केन्द्र से आने वाली तरंगों को बिजली के ऊंचे-ऊंचे टावर दूर-दूर तक फेंक दिया करते हैं, उसी प्रकार से श्मशान तन्त्र में टावर का काम करता है। श्मशान-रूपी इस टावर के माध्यम से हम पराजगत् या सूक्ष्म जगत् से सम्बन्ध बना सकते हैं। भैरवी की ऊर्जा हमारे विचारों को रॉकेट के समान शक्ति प्रदान करती है। भैरवी का भय जब श्मशान के डरावने वातावरण से हट जाता है, तो वह स्वयं एक महान् देवी बन जाती है। उसके शरीर में नाना प्रकार के आवेश आ जाया करते हैं। पराशक्तियां कभी प्रत्यक्ष या वास्तविक रूप में सामने नहीं आती हैं वरन् आवेशों के रूप में ही प्रकट हुआ करती हैं। ये आवेश अपने ढंग के हुआ करते हैं। प्रायः व्यक्ति का हाव-भाव आता-जाता है, उसका स्वर बदल जाता है, भूत-प्रेतादि की दशा में इस रूप को स्पष्ट समझा, देखा जा सकता है। प्रश्नोत्तर के समय भी आवेश काम करता है। व्यक्ति में आश्चर्यजनक रूप से परिवर्तन हो

जाता है। इस परिवर्तन को ही हम भूत-प्रेत मानते हैं। व्यक्ति में आश्चर्यजनक रूप से आ गया परिवर्तन इस बात को प्रमाणित करता है। इसी कारण ग्रस्त व्यक्ति का हाव-भाव इस बात को प्रमाणित करता है कि प्रेतास्तिव है उसमें आ गई अपार शक्ति भी यदा-कदा इसका प्रमाण देती है। आवेश रूप में ही पराशक्तियां अपना प्रभाव दिखलाया करती हैं। भैरवी पर आने वाले आवेश भी इसी प्रकार से पराशक्तियों के प्रतीक हुआ करते हैं।

भैरवी के आवेश प्रायः श्मशान में मुखर हो जाया करते हैं। भैरवी के ये आवेश ही साधक को इस बात या कार्य में सिद्धहस्त करते हैं कि वह किस सीमा तक अपने को इन्हें नियन्त्रित कर सकने में समर्थ बनाये रख सकता है। वह अपनी शक्ति का परीक्षण भी कर सकता है। आवेश ही इस बात के प्रतीक होते हैं कि कौन-सा तत्व पराजगत् का काम कर रहा है। आवेश या आकर्षण हर वस्तु में हुआ करता है। यही अपना प्रभाव दिखलाता है। प्रायः कहा-सुना जाता है कि अमुक व्यक्ति पर दुर्गा की सवारी या अमुक देवी-देवता की सवारी आती है अर्थात् वह आवेशग्रस्त होता है। भावासक्त आत्मा इस आवेश को ही कहा जाता है। आवेश एक प्रकार से तत्व का आना या उस पदार्थ चल या अंचल से सम्पर्क स्थापित करना है। यह सम्पर्क ही इस आवेश का प्रमाण है। भैरवी के आवेश भी इसी तरह के होते हैं। उसके माध्यम से साधक नाना प्रकार के प्रभाव जानकर अपना विश्लेषण प्राप्त कर सकता है। भैरवी का रूप तब बदल ही जाया करता है। भैरवी का बदला रूप जब वह आवेशमय होता है, तो स्वयं में एक शक्ति बन जाता है। यही शक्ति तन्त्र में सिद्धि को बल देती है।

एकान्त चिंतन श्मशान में अत्यन्त ऊर्जामय होता है। अकेले जाकर उसका अनुभव किया जा सकता है। जब एकाकी व्यक्ति का यह अनुभव हो सकता है तो फिर वहां पर किये गये क्रिया-कलाप का भी प्रभाव कितना शक्तिशाली होता है, इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है। भैरवी अनेक रूपों में श्मशान स्थल पर दिखाई पड़ सकती है। विशेष रूप में पूर्ण अमावस्या की रात्रि के गहन अंधकार में। ऐसे वातावरण में साधना करना सरल नहीं है। पूर्ण अमावस्या की नीरव रात और श्मशान का वातावरण सब-कुछ एक वैज्ञानिक सत्य को ही स्वीकार करता है। यह वैज्ञानिक सत्य स्पष्ट है कि रात्रि के वातावरण में शोर कम होता है। उस समय पर्यावरण भी उतना अशुद्ध नहीं होता है, जितना कि दिन के समय होता है। इसके अलावा रात के वातावरण में पेड़-पौधों से ऑक्सीजन विशेष रूप से निकलती है। इस समय मनुष्य का शरीर अतिरिक्त शक्ति का संचार कर सकता है। सर्वत्र निस्तब्धता के कारण और शांत पवन के आधार पर सूक्ष्म जीव या सूक्ष्म शरीर

अथवा उस पराजगत् के तत्व जो मानव-शरीर या अन्य जीव-जन्तु पशु परिवार से विलग हो जाते हैं, सरलता से विचरण करते हैं। उनका विचरण करना साधक के लिये लाभदायक होता है। यही उचित अवसर होता है। अर्द्धरात्रि के बाद तो और भी सुगमता होती है। तन्त्र सम्बन्धी सभी साधनायें प्रायः अमावस्या की रात विशेष रूप से दीपावली की रात में ही करने का अपना वैज्ञानिक आधार है। साधना-स्थल पर चन्द्रमा का प्रकाश न होने से चन्द्रमा का आकर्षण शून्य हो जाता है। मस्तिष्क को सबसे अधिक प्लावित या प्रभावित चन्द्रमा करता है। प्रायः चांदनी रात में अथवा शुक्ल पक्ष में मानसिक रोग बढ़ जाया करते हैं। इस पक्ष में अन्य प्रकार की भी शारीरिक व्याधियां उभार पा जाती हैं। यह सब ऐसा प्रभाव है, जिसे आज का विज्ञान स्वयं स्वीकार करता है। इस कारण अमावस्या का अत्यन्त महत्व है।

विज्ञान इस बात को भी मानता है कि ब्रह्माण्ड के विभिन्न ग्रहों से आने वाली ऊर्जा या प्रकाश सबको प्रभावित करता है। यह प्रभाव हमारे शास्त्र बहुत पहले से ही मानते आ रहे हैं। अमावस्या की रात में अन्य ग्रह भी ऐसे स्थान पर स्थित हो जाया करते हैं कि उनका समुचित प्रभाव ही पड़ता है। फिर आकाश एवं पृथ्वी का सम्पूर्ण वातावरण लगभग अंधकारमय होने के कारण आवेशमय व्यक्ति का भैरवी का रूप भी इच्छित आकार लेता है। चन्द्रमा का प्रकाश इसको उत्पन्न नहीं होने देता है। इस प्रकार भैरवी के साथ की गई साधनायें विशिष्ट शक्ति को जन्म देती हैं। यही विशिष्ट शक्ति तन्त्रसिद्धि है। इसी को साधना कहा जाता है, जो व्यापक अर्थ वाले सैक्स पर आधारित है। यही तन्त्र का वास्तविक रहस्य है। अपने आप में तमाम साधनायें सम्पूर्ण तथा पूर्ण रूप से वैज्ञानिक हैं। आवश्यकता इस बात की है कि उसको समझा जाये। प्रत्येक क्रिया के पीछे अपनी एक भावना और सिद्धि का सिद्धान्त है। परम्परा से भारतीय तन्त्र इसी ढंग से चला आ रहा है। इसी कारण इसका अस्तित्व आज तक बना हुआ है। यही इसको जीवित बनाये रखे है। समय ने धूल डाल रखी है। फिर भी इस धूल को साफ कर वास्तविकता को देखा जा सकता है।

अध्याय-१९

अंत में....!

श्रीभैरव के विषय में कुछ लिखना मुझ जैसे अल्पज्ञ के वश की बात नहीं है, फिर भी गुरु-चरणों का सहारा लेकर जगह-जगह से तथ्यों का संकल्न कर मैंने यह प्रयास किया है। अगर इसमें कोई त्रुटि या भूल पाई जाये तो सुविज्ञ पाठक मुझे क्षमा करेंगे। श्री भैरवनाथ कोई मत या सम्प्रदाय नहीं है, वरन् यह साधना का उद्देश्य है। किसी भी धर्म, जाति, सम्प्रदाय का साधक जब अपने साधना की चरम अवस्था को प्राप्त होता है तो वर्णभेद आदि से ऊपर उठ जाता है। अर्थात् परे हो जाता है। उस समय वह महान् तांत्रिक देहबुद्धि का त्याग कर आत्मबुद्धि को प्राप्त कर लेता है और तब वह सर्वत्र आत्मतत्व को ही देखता व अनुभव करता है। तब उसमें ऊंच-नीच, छोटा-बड़ा किसी भी प्रकार की घृणा का भाग नहीं रह जाता। साधना की चरम-अवस्था में वह साक्षात् शिवस्वरूप हो जाता है।

आगम शास्त्र में व्यक्त रूप से तन्त्र विद्या दस महाविद्या के रूप में प्रत्यक्ष होती है, जो भगवती पराम्बा के ही अभिन्न रूप हैं। दश महाविद्या की साधना सम्पन्न करने की योग्यता से युक्त होता साधक जब अपने गुरु से क्रमशः इन साधनाओं के गूढ़ रहस्यों को प्राप्त करता है, तो यह क्रिया साधना के क्षेत्र में उच्चता के विभिन्न पायदानों पर अग्रसर होने की क्रिया होती है। गुरु इन साधनाओं द्वारा उसे तन्त्र के क्षेत्र में ही उच्चता की ओर अग्रसर नहीं करते, अपितु भौतिक जगत् के भी पदार्थों का अधिकारी बना देते हैं।

तन्त्र-मन्त्र साधना क्रम में श्री भैरवी साधना भी एक ऐसी ही अद्वितीय साधना है, जो शिष्य को गुरु की कृपावश प्राप्त होती है तथा जिसे सम्पन्न कर वह विश्व का सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व बनने की योग्यता प्राप्त करने की क्रिया में लग जाता है।

गुरु ही शिष्य के अज्ञान-रूपी अन्धकार को दूर करते हैं, अतः संहार-रूपी कार्य के कारण वे शिव हैं। वे ही साधक की अज्ञानता को दूर कर उसके भीतर ज्ञान का सूर्य उदित करते हैं, जिससे वह अपने रूप को पहचानकर स्वयं शिवमय बनने की ओर बढ़ता होता है।

श्रीभैरव-साधना जितनी सरल है उतनी ही जटिल भी है। श्रीभैरव के अनेक रूप हैं। असतांग भैरव, रु-रु भैरव और काल तथा महाकाल भैरव श्रीभैरव के रौद्र

रूप हैं। श्मशान साधक तांत्रिक, कापालिक और शक्तिशाली सिद्धियां चाहने वाले तन्त्र साधक प्रायः ही भैरव देव के रौद्र रूपों की ही साधना करते हैं। भगवान भैरव देव का रौद्र रूप में आह्वान करने के बाद वे उनका स्तवन करते हैं।

शास्त्र कहते हैं—"देवो भूत्वा यजेद्देवं नादेवो देवमर्चयेत।" अर्थात् स्वयं में देवत्व का समावेश कर ही व्यक्ति साधना का अधिकारी बनता है। इसके लिये यह आवश्यक है कि वह धरातल के गुणों से कुछ ऊपर उठकर देवी गुणों को स्वयं में समाहित करें।

प्राचीनकाल में हमारे पूर्वज सामर्थ्यवान थे। उनकी धन-सम्पत्ति पूर्ण थी, शरीर आरोग्य था, परिवार सुखी था। सबके हृदय में शान्ति थी। स्मरण मात्र से उनको देवताओं के दर्शन हो सकते थे। हजारों कोस दूर की किसी वस्तु को देख लेने की सामर्थ्य उनके भीतर थी। उनमें वरदान देने की चमत्कारी शक्ति थी, जिस पर वे रुष्ट होते उसे दण्ड भी दे सकते थे। प्राचीन ग्रन्थों में इस बात के अनेक प्रमाण पाये जाते हैं। अपने पूर्वजों को जो महान् शक्तियां प्राप्त हुई थीं, वह देवताओं की साधना का ही फल था।

श्रद्धापूर्वक श्री भैरव-साधना की जाये उसी से भैरव प्रसन्न हो जाते हैं जिससे परिवार में सुख-शान्ति बनी रहती है और धन-धान्य में वृद्धि होती जाती है इसमें कोई सन्देह नहीं है।

गीता का वचन है कि—ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्—जो जिस रूप से मेरी शरण में आते हैं, मैं उसी रूप में उन्हें अपनाता हूं। इसके अनुसार कोई भी साधक अपनी मानसिक स्थिति अपने सम्प्रदाय एवं कुल-क्रमागत संस्कारों के अनुरूप गुरु-आदेश प्राप्त कर साधना में प्रवृत्त हो सकता है। साधना में "उत्साह" सबसे पहली आवश्यकता है जिसके सहारे आगे बढ़ता हुआ साधक साधना के मार्ग को चुनता है। दूसरी आवश्यकता है "श्रद्धा"। जब तक हृदय में श्रद्धा का उदय नहीं होता किसी भी कार्य में मन लगता ही नहीं है और मन ही उन्मन बना रहे तो अन्य सभी व्यर्थ हो जाते हैं। इन दोनों के साथ तीसरी आवश्यकता है "विश्वास" की । उत्साह से प्रवृत्त होकर श्रद्धापूर्वक कुछ करना आरम्भ किया जाये, लेकिन सन्देह और अनिश्चितता मन में आने लगे तो ये भी सफलता तक ले जाने में विघ्न उत्पन्न करते रहेंगे, फिर सिद्धि की बात ही क्या?

तन्त्र शास्त्रों में कहा गया है कि भगवती दुर्गा की कृपा-प्राप्ति के लिये भैरव की साधना भी साथ-साथ करनी चाहिये। इस दृष्टि से सम्प्रदाय-क्रम में "भैरव-नामावली" के १०८ नामों का पाठ भी दुर्गा सप्तशती के साथ किया जाता है।

हमारी तन्त्र साधनायें परस्पर एक-दूसरे से घुली-मिली हुई हैं किन्तु जब जिसकी जिसमें होती है, वह उसी की साधना कहलाती हैं। जैसे मन्त्र की प्रधानता रहने पर "मन्त्र-साधना" और तन्त्र की प्रधानता रहने पर "तन्त्र-साधना", किन्तु उसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि जब तन्त्र की साधना की जाये तो उसमें मन्त्र का

समावेश न हो, अथवा अन्य पद्धति का उसमें आश्रय नहीं लिया जाये? श्रीबटुक-भैरव की साधना भी इसी प्रकार की एक साधना है। इसमें मुख्य रूप से कार्यभेद के आधार पर हवन-वस्तु के प्रयोग आते हैं। किस वस्तु का किस कार्य में उपयोग करना चाहिये यह बात प्रत्येक साधक को विस्तारपूर्वक समझ लेनी चाहिये।

जिस प्रकार तन्त्रों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिये पार्वती ने प्रश्न किये हैं और उनके उत्तर में शिवजी ने उत्तर देते हुये प्रयोग बतलाये हैं, उसी प्रकार रुद्रयामल में श्रीपार्वती ने पूछा कि—हे देव! ऐसा कोई प्रयोग बतलाइये कि जिसके करने से षट्कर्म-साधना सरलता से हो सके? इसके उत्तर में भगवान ने बताया कि—हे देवी! आपत्ति के समय साधना करनी चाहिये। इस प्रयोग के लिये तिथि, नक्षत्र, करण, राशि, सूर्यादिग्रह-विचार आदि अपेक्षित नहीं हैं। इसी प्रकार कामना की दृष्टि से कर्त्तव्य व कर्म का संकेत भी वही किया है। वैसे तांत्रिक-कर्मों की साधना सामान्यतः गुरु द्वारा ही सीखनी चाहिये।

मेरी यह परम्परा रही है, कि पुस्तक के सम्पूर्ण होने पर पाठकों से अवश्य कुछ बात करता हूं। मुझे अब केवल इतना ही लिखना है। आप मेरा अन्य साहित्य भी पढ़ें। अच्छा, सरल और रोमांचक प्रयोग देने का पहले भी प्रयत्न किया है, आगे भी करता रहूंगा।

अन्त में सर्वकामनाप्रद भैरव श्लोक के साथ अपनी बात पूरी करता हूं—

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि बटुकस्य सुरार्चिते।
आलिख्याष्टदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत्।।
ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्षौमिति तत्पत्रेषु परमेश्वरि।
बटुकायेत्यक्षराणि द्विरावृत्त्य लिखेत् प्रिये।।
बहिः षोडश पत्रांढ्यं पद्मं कृत्वा सुशोभनम्।
तत्पत्रे लिखेद् देवि शिष्टान् वर्णास्तु षोडश।।
मन्त्रश्च तद्बहिश्चापि पद्मं षोडशपत्रकम्।
तत्र तेषु लिखेद् देवि स्वरान् षोडश सुव्रते।।
द्वात्रिंशत्पत्रसंयुक्तं पद्मं कृत्वाऽथ तद्बहिः।
कादिक्षान्तांल्लिखेत्तस्य पत्रेषु परमेश्वरि।।
वेष्टयेच्चतुरस्त्रेण यन्त्रमेतद्वरानने।

धन्यवाद।

तांत्रिक बहल
"तन्त्र सबके लिये मिशन"
डी-४, राधापुरी, कृष्णा नगर,
देहली-११००५१.

मारुति प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

डिमाई साइज (23 × 36) की पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य	पुस्तक	मूल्य
आगे बढ़ने की कला	30.00	मनोकामना दायक व्रत एवं त्यौहार	40.00
प्रतिदिन आगे बढ़ो	30.00	तन्त्र-मन्त्र द्वारा मनचाही सन्तान	40.00
ज्योतिष विज्ञान एवं हस्तरेखा शास्त्र	30.00	तन्त्रोक्त भैरव साधना	40.00
बच्चों के मनमोहक नाम	30.00	तन्त्र, मन्त्र, यन्त्र का गुप्त ज्ञान	50.00
सम्पूर्ण चाणक्य नीति	30.00	बॉडी बिल्डर कैसे बनें	50.00
किस्सा-ए-मुल्ला नसरुद्दीन	30.00	ग्रह नक्षत्र और हम	50.00
दत्तात्रेय तन्त्र	30.00	ओशो ही ओशो	50.00
नास्त्रेदमस की भविष्यवाणियां	40.00	वृहत् जातक भाष्य	60.00
शिरडी वाले साईं बाबा	40.00	वास्तुदोष कारण और निवारण	100.00
प्रभावशाली हिप्नोटिज्म	40.00		

हमारे द्वारा प्रकाशित सदाबहार पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य	पुस्तक	मूल्य
शायरी-ही-शायरी	20.00	आलौकिक सिद्धियां	20.00
महफिल-ए-शायरी	20.00	रेखायें और भविष्य—कीरो	20.00
रंगारंग शायरी	20.00	अवसर को पहचानो	20.00
हंसी का फव्वारा	20.00	सफलता के द्वार	20.00
हंसी का खजाना	20.00	चिन्ता कैसे छोड़ें	20.00
हंसी के गोल गप्पे	20.00	दास्तान-ए-मुल्ला नसरुद्दीन	20.00
72 घन्टे—शरलाक होम्स	20.00	चाणक्य सूत्र	20.00
ड्रैकुला की बेटी	20.00	सिंहासन बत्तीसी	20.00
ड्रैकुला	20.00	दास्तान-ए-अकबर-बीरबल	20.00
विश्व विख्यात बदनाम सुन्दरियाँ	20.00	जातक कथाएं	20.00
लेडी चैटर्ली का प्रेमी	20.00	हितोपदेश	20.00
होम्योपैथिक चिकित्सा गाइड	20.00	मनभावन प्रेमपत्र	20.00
चुम्बक चिकित्सा	20.00	विश्व-विख्यात अमर सूक्तियाँ	20.00
स्त्री रोग और निवारण	20.00	जूडो कराटे कुंगफू	20.00

प्रकाशक :

मारुति प्रकाशन 33, हरी नगर, मेरठ—250 002.

- बाजार मे आजकल अनेक पुस्तके मत्र-तत्र-य[illegible] विषय [illegible] आपने देखी होगीं और पढ़ी भी होगीं, लेकिन [illegible]: प्रक[illegible] अथवा अनेक बातों का संग्रह या फिर भानुमती [illegible] पिटार[illegible] अनुभव होती हैं।
- मेरी यह पुस्तक तंत्रोक्त भैरव साधना ऐसे उग्र देवता की [illegible], जिनकी साधना से ऐसे संकटो से मुक्ति प्र[illegible] होगी, [illegible] अकारण या शत्रुओं द्वारा समय समय पर उत्पन्न किये [illegible] है।
- इस पुस्तक में मैंने कुछ अनुभूत प्रयोग और सरल साधनाऐ बतलाने का प्रयत्न किया है। छिपाने अथवा बात्त को घुमाफिराकर कहने की मेरी आदत नहीं है। वहीं मैंने इस पुस्तक में किया है। अब यह आपका भाग्य अथवा प्रयत्न है कि साधनाओं से कितना लाभ उठा पाते हैं।

A.H.W. MARUTI SERIES

मारुति प्रकाशन